राजस्थानी-गद्य-साहित्य

उद्भव और विकास

डॉ० शिवस्वरूप शर्मा 'अचल'

सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट
बीकानेर

प्रकाशक :—

लालचन्द कोठारी

प्रधान-मंत्री

सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट

बीकानेर (राजस्थान)

❀❀❀

प्रथमावृत्ति सन् १९६१

❀❀❀

मुद्रक —

जैन प्रिंटिंग प्रेस

कोटा (राजस्थान)

प्रकाशकीय

श्री सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट बीकानेर की स्थापना सन् १९४४ में बीकानेर राज्य के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री के० एम० पणिक्कर महोदय की प्रेरणा से, साहित्यानुरागी बीकानेर-नरेश स्वर्गीय महाराजा श्री सादूलसिंह जी बहादुर द्वारा संस्कृत, हिन्दी एवं विशेषत. राजस्थानी साहित्य की सेवा तथा राजस्थानी भाषा के सर्वाङ्गीण विकास के लिये की गई थी।

भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध विद्वानों एवं भाषाशास्त्रियों का सहयोग प्राप्त करने का सौभाग्य हमे प्रारंभ से ही मिलता रहा है।

संस्था द्वारा विगत १६ वर्षों से बीकानेर में विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियां चलाई जा रही है, जिनमें से निम्न प्रमुख हैं—

१. विशाल राजस्थानी-हिन्दी शब्दकोश

इस संबंध में विभिन्न स्रोतों से संस्था लगभग दो लाख से अधिक शब्दों का संकलन कर चुकी है। इसका सम्पादन आधुनिक कोशों के ढंग पर, लंबे समय से प्रारंभ कर दिया गया है और अब तक लगभग तीस हजार शब्द संपादित हो चुके हैं। कोश में शब्द, व्याकरण, व्युत्पत्ति, उसके अर्थ और उदाहरण आदि अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएं दी गई हैं। यह एक अत्यंत विशाल योजना है, जिसकी संतोषजनक क्रियान्विति के लिये प्रचुर द्रव्य और श्रम की आवश्यकता है। आशा है राजस्थान सरकार की ओर से, प्रार्थित द्रव्य-साहाय्य उपलब्ध होते ही निकट भविष्य में इसका प्रकाशन प्रारंभ करना संभव हो सकेगा।

२. विशाल राजस्थानी मुहावरा कोश

राजस्थानी भाषा अपने विशाल शब्द भंडार के साथ मुहावरों से भी समृद्ध है। अनुमानतः पचास हजार से भी अधिक मुहावरे दैनिक प्रयोग में लाये जाते हैं। हमने लगभग दस हजार मुहावरों का, हिन्दी में अर्थ और राजस्थानी में उदाहरणों सहित प्रयोग देकर संपादन करवा लिया है और शीघ्र ही इसे प्रकाशित करने का प्रबंध किया जा रहा है। यह भी प्रचुर द्रव्य और श्रम-साध्य कार्य है। यदि हम यह विशाल संग्रह साहित्य

जगत को दे सके तो यह संस्था के लिये ही नहीं किन्तु राजस्थानी और हिन्दी जगत के लिये भी एक गौरव की बात होगी।

३. आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का प्रकाशन

इसके अन्तर्गत निम्नलिखित पुस्तके प्रकाशित हो चुकी हैं—

१. कळायण, ऋतु काव्य। ले० श्री नानूराम संस्कर्ता

२. आभै पटकी, प्रथम सामाजिक उपन्यास। ले० श्री श्रीलाल जोशी।

३. बरस गांठ, मौलिक कहानी संग्रह। ले० श्री मुरलीधर व्यास।

'राजस्थान-भारती' में भी आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का एक अलग स्तम्भ है, जिसमें भी राजस्थानी कवितायें, कहानियां और रेखाचित्र आदि छपते रहते हैं।

४. 'राजस्थान-भारती' का प्रकाशन

इस विख्यात शोधपत्रिका का प्रकाशन सस्था के लिये गौरव की वस्तु है। गत १४ वर्षों से प्रकाशित इस पत्रिका की विद्वानों ने मुक्त कठ से प्रशंसा की है। बहुत चाहते हुए भी द्रव्याभाव, प्रेस की एव अन्य कठिनाइयों के कारण, त्रैमासिक रूप से इसका प्रकाशन सम्भव नहीं हो सका है। इसका भाग ५ अङ्क ३–४ 'डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी विशेषांक' बहुत ही महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सामग्री से परिपूर्ण है। यह अङ्क एक विदेशी विद्वान की राजस्थानी साहित्य-सेवा का एक बहुमूल्य सचित्र कोश है। पत्रिका का अगला ७वां भाग शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा है। इसका अङ्क १–२ राजस्थान के सर्वश्रेष्ठ महाकवि पृथ्वीराज राठोड़ का सचित्र और बृहत् विशेषांक है। अपने ढंग का यह एक ही प्रयत्न है।

पत्रिका की उपयोगिता और महत्व के सम्बन्ध में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इसके परिवर्तन में भारत एवं विदेशों से लगभग ८० पत्र-पत्रिकाएं हमें प्राप्त होती हैं। भारत के अतिरिक्त पाश्चात्य देशों में भी इसकी मांग है व इसके ग्राहक हैं। शोधकर्त्ताओं के लिये 'राजस्थान-भारती' अनिवार्यतः सग्रहणीय शोध-पत्रिका है। इसमें राजस्थानी भाषा, साहित्य, पुरातत्व, इतिहास, कला आदि पर लेखों के अतिरिक्त संस्था के तीन विशिष्ट सदस्य डा० दशरथ शर्मा, श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री अगरचन्द नाहटा की बृहत् लेख सूची भी प्रकाशित की गई है।

५. राजस्थानी साहित्य के प्राचीन और महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसंधान, सम्पादन एवं प्रकाशन

हमारी साहित्य-निधि को प्राचीन, महत्वपूर्ण और श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियों को सुरक्षित रखने एव सर्वसुलभ कराने के लिये सुसम्पादित एवं शुद्ध रूप में मुद्रित करवा कर उचित मूल्य में वितरित करने की हमारी एक विशाल योजना है। सस्कृत, हिन्दी और राजस्थानी के महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसंधान और प्रकाशन संस्था के सदस्यों की ओर से निरंतर होता रहा है जिसका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है—

६. पृथ्वीराज रासो

पृथ्वीराज रासो के कई संस्करण प्रकाश में लाये गये हैं और उनमें से लघुतम सस्करण का सम्पादन करवा कर उसका कुछ अश 'राजस्थान भारती' में प्रकाशित किया गया है। रासो के विविध संस्करण और उसके ऐतिहासिक महत्व पर कई लेख राजस्थान-भारती में प्रकाशित हुए हैं।

७. राजस्थान के अज्ञात कवि जान (न्यामतखां) की ७५ रचनाओं की खोज की गई। जिसकी सर्वप्रथम जानकारी 'राजस्थान-भारती' के प्रथम अक में प्रकाशित हुई है। उसका महत्वपूर्ण ऐतिहासिक काव्य 'क्यामरासा' तो प्रकाशित भी करवाया जा चुका है।

८. राजस्थान के जैन सस्कृत साहित्य का परिचय नामक एक निबंध राजस्थान भारती में प्रकाशित किया जा चुका है।

९. मारवाड़ क्षेत्र के ५०० लोकगीतों का सग्रह किया जा चुका है। बीकानेर एवं जैसलमेर क्षेत्र के सैकड़ो लोकगीत, घूमर के लोकगीत, बाल लोकगीत, लोरियां और लगभग ७०० लोक कथाएे सग्रहीत की गई हैं। राजस्थानी कहानियों के दो भाग प्रकाशित किये जा चुके हैं। जीणमाता के गीत, पाबूजी के पवाड़े और राजा भरथरी आदि लोक काव्य सर्वप्रथम 'राजस्थान-भारती' में प्रकाशित किए गए हैं।

१०. बीकानेर राज्य के और जैसलमेर के अप्रकाशित अभिलेखों का विशाल सग्रह 'बीकानेर जैन लेख सग्रह' नामक बृहत् पुस्तक के रूप मे प्रकाशित हो चुका है।

११. जसवत उद्योत, मुंहता नैणसी री ख्यात और अनोखी आन जस महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रंथों का सम्पादन एव प्रकाशन हो चुका है।
१२ जोधपुर के महाराजा मानसिंहजी के सचिव कविवर उदयचद भडारी की ४० रचनाओं का अनुसंधान किया गया है और महाराजा मानसिंहजी की काव्य-साधना के संबंध में भी सबसे प्रथम 'राजस्थान-भारती' में लेख प्रकाशित हुआ है।

१३. जैसलमेर के अप्रकाशित १०० शिलालेखों और 'भट्टि वंश प्रशस्ति' आदि अनेक अप्राप्य और अप्रकाशित ग्रंथ खोज-यात्रा करके प्राप्त किये गये हैं।

१४. बीकानेर के मस्तयोगी कवि ज्ञानसारजी के ग्रंथों का अनुसंधान किया गया और ज्ञानसार ग्रंथावली के नाम से एक ग्रंथ भी प्रकाशित हो चुका है। इसी प्रकार राजस्थान के महान् विद्वान् महोपाध्याय समयसुन्दर की ५६३ लघु रचनाओं का संग्रह प्रकाशित किया गया है।

१५. इसके अतिरिक्त संस्था द्वारा—

(१) डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी, समयसुन्दर, पृथ्वीराज, और लोकमान्य तिलक आदि साहित्य-सेवियों के निर्वाण-दिवस और जयन्तियां मनाई जाती हैं।

(२) साप्ताहिक साहित्यिक गोष्ठियों का आयोजन बहुत समय से किया जा रहा है, इसमें अनेकों महत्वपूर्ण निबध, लेख, कविताएँ और कहानियां आदि पढ़ी जाती हैं, जिससे अनेक विध नवीन साहित्य का निर्माण होता रहता है। विचार - विमर्श के लिये गोष्ठियों तथा भाषण-मालाओं आदि का भी समय-समय पर आयोजन किया जाता रहा है।
१६. बाहर से ख्यातिप्राप्त विद्वानों को बुलाकर उनके भाषण करवाने का आयोजन भी किया जाता है। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, डा० कैलाशनाथ काटजू, राय श्री कृष्णदास, डा० जी० रामचन्द्रन्, डा० सत्यप्रकाश, डा० डब्लू० एलेन, डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डा० तिवेरिओ-तिवेरी आदि अनेक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वानों के इस कार्यक्रम के अन्तर्गत भाषण हो चुके हैं।

गत दो वर्षों से महाकवि पृथ्वीराज राठौड़ आसन की स्थापना की गई है। दोनों वर्षों के आसन-अधिवेशनों के अभिभाषक क्रमशः

राजस्थानी भाषा के प्रकाण्ड विद्वान् श्री मनोहर शर्मा एम० ए०, बिसाऊ और प० श्रीलालजी मिश्र एम० ए०, डूंडलोद, थे।

इस प्रकार सस्था अपने १६ वर्षो के जीवन-काल में, संस्कृत, हिन्दी और राजस्थानी साहित्य की निरंतर सेवा करती रही है। आर्थिक सकट से ग्रस्त इस सस्था के लिये यह सभव नही हो सका कि यह अपने कार्यक्रम को नियमित रूप से पूरा कर सकती, फिर भी यदा कदा लड़खड़ा कर गिरते पड़ते इसके कार्यकर्ताओं ने 'राजस्थान-भारती' का सम्पादन एव प्रकाशन जारी रखा और यह प्रयास किया कि नाना प्रकार की बाधाओं के वावजूद भी साहित्य सेवा का कार्य निरंतर चलता रहे। यह ठीक है कि सस्था के पास अपना निजी भवन नही है, न अच्छा सदर्भ पुस्तकालय है, और न कार्य को सुचारु रूप से सम्पादित करने के समुचित साधन ही हैं, परन्तु साधनों के अभाव में भी सस्था के कार्यकर्ताओ ने साहित्य की जो मौन और एकान्त साधना की है वह प्रकाश में आने पर सस्था के गौरव को निश्चय हीं बढ़ा सकने वाली होगी।

राजस्थानी-साहित्य-भंडार अत्यत विशाल है। अब तक इसका अत्यल्प अंश ही प्रकाश मे आया है। प्राचीन भारत वाङ्मय के अलभ्य एव अनर्घ रत्नों को प्रकाशित करके विद्वज्जनों और साहित्यिकों के समक्ष प्रस्तुत करना एव उन्हे सुगमता से प्राप्त कराना सस्था का लक्ष्य रहा है। हम अपनी इस लक्ष्य पूर्ति की ओर धीरे-धीरे किन्तु दृढता के साथ अग्रसर हो रहे है।

यद्यपि अब तक पत्रिका तथा कतिपय पुस्तकों के अतिरिक्त अन्वेषण द्वारा प्राप्त अन्य महत्वपूर्ण सामग्री का प्रकाशन करा देना भी अभीष्ट था, परन्तु अर्थाभाव के कारण ऐसा किया जाना सभव नहीं हो सका। हर्ष की बात है कि भारत सरकार के वैज्ञानिक सशोध एव सांस्कृतिक कार्यक्रम मत्रालय (Ministry of scientific Research and Cultural Affairs) ने अपनी आधुनिक भारतीय भाषाओ के विकास की योजना के अ तर्गत हमारे कार्यक्रम को स्वीकृत कर प्रकाशन के लिये रु० १५०००) इस मद में राजस्थान सरकार को दिये तथा राजस्थान सरकार द्वारा उतनी ही राशि अपनी ओर से मिलाकर कुल रु० ३००००) तीस हजार की सहायता, राजस्थानी साहित्य के सम्पादन-प्रकाशन हेतु इस सस्था को इस

वित्तीय वर्ष में प्रदान की गई है, जिससे इस वर्ष निम्नोक्त ३१ पुस्तकों का प्रकाशन किया जा रहा है।

१. राजस्थानी व्याकरण—	लेखक–श्री नरोत्तमदास स्वामी
२. राजस्थानी गद्य का विकास (शोध प्रबंध)	लेखक–डा० शिवस्वरूप शर्मा अचल
३. अचलदास खीची री वचनिका—	सम्पादक श्री नरोत्तमदास स्वामी
४. हमीरायण—	,, श्री भंवरलाल नाहटा
५. पद्मिनी चरित्र चौपई—	,, ,, ,, ,,
६. दलपत विलास	,, श्री रावत सारस्वत
७. डिंगल गीत—	,, ,, ,, ,,
८. पंवार वंश दर्पण—	,, डा० दशरथ शर्मा
९. पृथ्वीराज राठोड़ ग्रंथावली—	,, श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री बद्रीप्रसाद साकरिया
१०. हरिरस—	,, श्री बद्रीप्रसाद साकरिया
११. पीरदान लालस ग्रंथावली—	,, श्री अगरचन्द नाहटा
१२. महादेव पार्वती वेलि—	,, श्री रावत सारस्वत
१३. सीताराम चौपई—	,, श्री अगरचन्द नाहटा
१४. जैन रासादि संग्रह—	,, श्री अगरचन्द नाहटा और डा० हरिवल्लभ भायाणी
१५ सदयवत्स वीर प्रबन्ध—	,, प्रो० मंजुलाल मजूमदार
१६. जिनराजसूरि कृतिकुसुमांजलि-	,, श्री भंवरलाल नाहटा
१७. विनयचन्द कृतिकुसुमांजलि-	,, ,, ,, ,,
१८. कविवर धर्मवर्द्धन ग्रंथावली-	,, श्री अगरचन्द नाहटा
१९. राजस्थान रा दूहा—	,, श्री नरोत्तमदास स्वामी
२०. वीर रस रा दूहा—	,, ,, ,, ,,
२१. राजस्थान के नीति दोहा—	,, श्री मोहनलाल पुरोहित
२२. राजस्थानी व्रत कथाएं—	,, ,, ,, ,,
२३. राजस्थानी प्रेम कथाएं—	,, ,, ,, ,,
२४. चंदायन—	,, श्री रावत सारस्वत

जैसलमेर ऐतिहासिक साधन संग्रह (संपा० डा० दशरथ शर्मा), ईशरदास ग्रंथावली (सपा० बदरीप्रसाद साकरिया), रामरासो (प्रो० गोवर्द्धन शर्मा), राजस्थानी जैन साहित्य (ले० श्री अगरचन्द नाहटा), नागदमण (संपा० बदरीप्रसाद साकरिया), मुहावरा कोश (मुरलीधर व्यास) आदि ग्रंथों का सपादन हो चुका है परन्तु अर्थाभाव के कारण इनका प्रकाशन इस वर्ष नहीं हो पा रहा है।

हम आशा करते हैं कि कार्य की महत्ता एव गुरुता को लक्ष्य में रखते हुए अगले वर्ष इससे भी अधिक सहायता हमें अवश्य प्राप्त हो सकेगी जिससे उपरोक्त सपादित तथा अन्य महत्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन सम्भव हो सकेगा।

इस सहायता के लिये हम भारत सरकार के शिक्षाविकास सचिवालय के आभारी हैं, जिन्होंने कृपा करके हमारी योजना को स्वीकृत किया और ग्रान्ट-इन-एड की रकम मंजूर की।

राजस्थान के मुख्यमंत्री माननीय मोहनलालजी सुखाड़िया, जो सौभाग्य से शिक्षामंत्री भी हैं और जो साहित्य की प्रगति एव पुनरुद्धार के लिये पूर्ण सचेष्ट हैं, का भी इस सहायता के प्राप्त कराने में पूरा-पूरा योगदान रहा है। अतः हम उनके प्रति अपनी कृतज्ञता सादर प्रगट करते हैं।

राजस्थान के प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षाध्यक्ष महोदय श्री जगन्नाथसिंहजी मेहता का भी हम आभार प्रगट करते हैं, जिन्होंने अपनी ओर से पूरी-पूरी दिलचस्पी लेकर हमारा उत्साहवर्द्धन किया, जिससे हम इस वृहद् कार्य को सम्पन्न करने में समर्थ हो सके। संस्था उनकी सदैव ऋणी रहेगी।

इतने थोड़े समय में इतने महत्वपूर्ण ग्रंथों का संपादन करके संस्थी के प्रकाशन-कार्य में जो सराहनीय सहयोग दिया है, इसके लिये हम सभी ग्रन्थ सम्पादकों व लेखकों के अत्यत आभारी है।

अनूप संस्कृत लाइब्रेरी और अभय जैन ग्रन्थालय बीकानेर, स्व० पूर्णचन्द्र नाहर सग्रहालय कलकत्ता, जैन भवन संग्रह कलकत्ता, महावीर तीर्थ क्षेत्र अनुसधान समिति जयपुर, ओरियटल इन्स्टीट्यूट बड़ोदा, भांडारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना, खरतरगच्छ बृहद् ज्ञान-भडार बीकानेर, मोतीचंद खजाञ्ची ग्रंथालय बीकानेर, खरतर आचार्य ज्ञान भडार बीकानेर, एशियाटिक सोसाइटी बबई, आत्माराम जैन ज्ञानभंडार बडोदा, मुनि पुण्यविजयजी, मुनि रमणिक विजयजी, श्री सीताराम लालस, श्री रविशकर देराश्री, पं० हरदत्तजी गोविद व्यास जैसलमेर आदि अनेक सस्थाओं और व्यक्तियों से हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त होने से ही उपरोक्त ग्रन्थों का सपादन संभव हो सका है। अतएव हम इन सब के प्रति आभार प्रदर्शन करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं।

ऐसे प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन श्रमसाध्य है एव पर्याप्त समय की अपेक्षा रखता है। हमने अल्प समय में ही इतने ग्रन्थ प्रकाशित करने का प्रयत्न किया इसलिये त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक है। गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः। हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति साधवः।

आशा है विद्वद्वृन्द हमारे इन प्रकाशनों का अवलोकन करके साहित्य का रसास्वादन करेंगे और अपने सुझावों द्वारा हमें लाभान्वित करेंगे जिससे हम अपने प्रयास को सफल मानकर कृतार्थ हो सके और मां भारती के चरण-कमलों में विनम्रतापूर्वक अपनी पुष्पांजलि समर्पित करने के हेतु पुनः उपस्थित होने का साहस बटोर सके।

निवेदक

लालचन्द कोठारी

प्रधान-मंत्री

सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट

बीकानेर

बीकानेर,

मार्गशीर्ष शुक्ला १५

सं० २०१७

दिसम्बर ३,१९६०

* विषय सूची *

प्रथम प्रकरण

विषय प्रवेश

शब्दों का अभाव ...प्राचीन काल के अंत में गुजराती तथा राजस्थानी का पृथक्करण . अर्वाचीन काल में गुजराती के प्रभाव से मुक्त....

मुगल साम्राज्य के प्रभुत्व के कारण फारसी को प्रोत्साहन राजस्थानी पर उसका प्रभाव .उसका सर्वतोमुखी विकास.... पृ० ७

ख–राजस्थानी साहित्य—

वीर प्रसविनी राजस्थानी भूमि का साहित्य मे प्रतिबिम्ब गद्य और पद्य दोनों क्षेत्रों में राजस्थानी साहित्य का प्रसार गद्य साहित्य अपनी प्राचीनता तथा पद्य साहित्य अपनी सजीवता के लिये प्रसिद्ध भारत और यूरोप के सुप्रसिद्ध विद्वानों द्वारा इसकी प्रशंसा . पृ० १०

द्वितीय प्रकरण

राजस्थानी गद्य साहित्य उसके प्रमुख विभाग और रूप . राजस्थानी गद्य साहित्य बहुत प्राचीन चौदहवी शताब्दी से उसके प्रयास प्रारम्भ प्राचीनता की दृष्टि से उसका महत्व वर्गीकरण सम्पूर्ण राजस्थानी-गद्य-साहित्य का पांच प्रमुख भागों मे विभाजन

१–धार्मिक गद्य साहित्य

क–जैन धार्मिक गद्य साहित्य १-प्राय टीकात्मक टीकाओं के दो रूप ..बालावबोध प्राकृत तथा सस्कृत ग्रन्थों की सरल भाषा मे विस्तृत टीका टब्बा सस्कृत या प्राकृत शब्द का उसके ऊपर नीचे या पार्श्व में अर्थ मात्र लिखना इन दोनो रूपो में बालावबोध शैली का प्राधान्य इन टीकाओं के आधार जैन धार्मिक ग्रंथ आचारांग आदि आगम ग्रंथ.., षडावश्यक आदि उपांग ग्रंथ , भक्तामर आदि स्तोत्र ग्रंथ , कल्पसूत्र आदि चरित्र ग्रथ. दार्शनिक ग्रंथ. , प्रकीर्णक रचनाये

२-स्वतत्र-व्याख्यान विधि विधान कर्मकाण्ड धार्मिक कथाये दार्शनिक कृतियां शास्त्रीय विचार खडन मडन घटना का विवरण या व्यक्ति या जाति के इतिहास का विवरण जैसे "नागौर रै मामलै री वात' या "राव जी अमरसिह जी री वात" याददाश्त के रूप मे लिखी गई छोटी छोटी टिप्पणियों का सग्रह पृ० १०-२०

तृतीय प्रकरण

राजस्थानी गद्य का विकास

१-प्रयास काल ..

इस काल की भाषा को "प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी" नाम दिया गया है। इस काल में गुजराती और राजस्थानी का एक ही स्वरूप रहा। इस

काल की प्रमुख रचनाये

१–आराधना र० सं० १३३० लेखक अज्ञात
२–बालशिक्षा र० सं० १३३६ लेखक सग्रामसिंह
३–अतिचार र० स० १३४०
४–अतिचार र० स० १३६६
५–नवकार व्याख्यान र० स० १३५८
६–सर्व तीर्थ नमस्कार स्तवन र० स० १३५६
७–तत्व - विचार - प्रकरण रचनाकाल अनिश्चित पर अनुमानत चौदहवीं शताब्दी
८–धनपाल कथा रचनाकाल अनुमानतः चौदहवी शताब्दी गद्य का उदाहरण

उपसहार . गद्य प्रवृत्ति एव भाषा स्वरूप की दृष्टि से चौदवी शताब्दी का महत्व गद्य और पद्य की भाषाओं में अ तर पद्य की भाषा अधिक प्रौढ़ एव परिमार्जित गद्य का विकासोन्मुख होना लेखकों के सम्मुख कोई निश्चित आधार न होने के कारण उनको स्वयं मार्ग बनाना पड़ा .
३३-४०

२–विकास काल...स० १४०० से सं० १६०० तक

पूर्व-पीठिका .
गद्य में प्रौढ़ता आई . शैली बदली विषयों के क्षेत्र भी विस्तृत हुए जैनों के धार्मिक गद्य की प्रचुरता... बालावबोध शैली का प्रारम्भ चारणी गद्य से वचनिका ..शैली में प्रौढ़ता कलात्मक गद्य के भी अच्छे उदाहरण मिले. ..पृथ्वीचन्द्र चरित्र एक बहुत महत्वपूर्ण रचना

१–धार्मिक गद्य...पृ० ४०-५०

१–श्री तरुण प्रभ सूरि (स० १३६८...) और उनकी रचनाये—
२–श्री सोम सुन्दर सूरि (स० १४३० से स० १४६६) और उनकी रचनाये–
३–श्री मेरुसुन्दर और उनकी रचनाये—
४–पार्श्व चन्द्र सूरि और उनकी रचनाये—

स्फुट गद्य लेखक

१–जय शेखर सूरि "आंचलगच्छ सं० १४०० से १४६२ श्री महेन्द्र-प्रभ सूरि के शिष्य . गद्य पद्य के कुल मिलाकर १८ ग्र थो के रचयिता ..

गद्य कृतियों में "श्रावक बृहदतिचार" उल्लेखनीय.. २–साधुरत्न सूरि "तपागच्छ श्री देवसुन्दर के शिष्य गद्य रचना "नवतत्व विवरण बालावबोध" सं० १४५६ के लगभग, ३ शुभ वर्धन . गद्य रचना ..भक्तामर बालावबोध" टीका का लिपिकाल स० १६२६, ४–हेमहंस गणि .तपागच्छ सोमसुन्दर के शिष्य गद्य रचना "षडावश्यक बालावबोध" सं० १५०१, ५–शिवसुन्दर वाचक समयध्वज खेमराज के शिष्य गद्य रचना "गौतम पृच्छा बालावबोध" खीमासर में स० १५६६, ६–जिनसूर तपागच्छ .गद्य रचना "गौतम पृच्छा बालावबोध", ७–संवेगदेवगणि तपागच्छ.. श्री सोमसुन्दर सूरि के शिष्य गद्य रचनाये .अ-पिण्ड विशुद्धि बालावबोध सं० १५१३, आ-आवश्यक पीठिका बालावबोध स० १५१४, इ-चउसरण पयन्ना बालावबोध तथा ई-चउसरण टबूबा, ८–श्री राजवल्लभ धर्मघोष गच्छ, गद्य रचना "षडावश्यक बालावबोध, ९–लक्ष्मीरत्न सूरि .."साधु-प्रतिक्रमण बालावबोध" सं० १६०६

अज्ञात लेखक रचनायें

१–श्रावक व्रतादि अतिचार स० १४६६, २–कालिकाचार्य कथा सं० १४८५ . उदाहरण ...

२–ऐतिहासिक गद्य पृ० ५१-५२

श्री जिन वर्धन तपागच्छ कृत "जैन गुर्वावली" र० का० स० १४८२ . तपागच्छ आचार्यों की नामावली तथा उनका परिचय अन्तिम ५० वें पट्टधर श्री सोमसुन्दर सूरि .. अन्त्यानुप्रास युक्त गद्य . भाषा में प्रवाह .. क्रिया पदों की अपेक्षा समास प्रधान पदावली का अधिक प्रयोग.. उदाहरण....

३–कलात्मक गद्य पृ० ५२-५९

इस काल की दो प्रमुख रचनाये १–पृथ्वीचन्द्र चरित्र या वाग्विलास लेखन समय स० १४७८ लेखक श्री माणिक्य सुंदर सूरि आंचलगच्छ ... जीवन वृत्त अज्ञात . २–अचलदास खीची री वचनिका–उदाहरण ..

जैन वचनिका.. १–जिन समुद्र सूरि की वचनिका २–शान्ति सागर सूरि की वचनिका और उनका महत्व .गद्य के उदाहरण

४–व्याकरण गद्य पृ० ५९-६१

व्याकरण के ग्रंथों में भी गद्य का प्रयोग तीन व्याकरण ग्रंथ प्राप्त ....१–कुलमंडन कृत "मुग्धावबोध" १४५०, २–सोमप्रभ सूरि कृत

"औक्तिक", ३–तिलक कृत "उक्ति सग्रह". राजस्थानी के माध्यम से सस्कृत व्याकरण को समझाने के उद्देश्य से इनकी रचना इस काल के भाषा स्वरूप को समझने के लिये इनका अध्ययन आवश्यक इन सब में मुग्धावबोध अधिक महत्वपूर्ण. गद्य के उदाहरण

५–वैज्ञानिक गद्य पृ० ६१-६३

केवल दो गणित रचनायें प्राप्त १–गणित सार, २–गणित पंचविंशतिका प्रथम श्री राजकीर्ति मिश्र द्वारा अनूदित मध्यकाल के नापतौल के उपकरण एव सिक्कों का उल्लेख। द्वितीय श्री शम्भूदास मत्री द्वारा रचित स० १४७५ गद्य के उदाहरण

चतुर्थ प्रकरण

पूर्व पीठिका....ऐतिहासिक भूमि मुसलमान राज्य की स्थापना.... हिन्दु मुस्लिम सघर्ष शिथिल

१-ऐतिहासिक गद्य—पिछले काल की अपेक्षा अनेक नए रूपों मे प्राप्त दो प्रमुख उपविभाग .

क-जैन ऐतिहासिक गद्य पृ० ६७-७३

पांच प्रकारों में उसका वर्गीकरण अ–वशावली उसके प्रमुख विषय .गद्य के उदाहरण आ-पट्टावली प्रमुख विषय गद्य का उदाहरण प्रमुख प्राप्त पट्टावलियां १–कडुवामत पट्टावली, २–नागौरी लुकागच्छीय पट्टावली ३–वेगड़गच्छ पट्टावली, ४–पिपलक शाखा पट्टावली, ५–तपागच्छ पट्टावली इन पट्टावलियों का महत्व गद्य के उदाहरण इ–दफ्तर बही दैनिक व्यापारों की डायरी शैली में सग्रह ...गद्य का उदाहरण ई-ऐतिहासिक टिप्पण उनके विषय गद्य का उदाहरण उ–उत्पत्ति ग्रथ प्रमुख विषय प्राप्त ग्रथ १–अञ्चलमतोत्पत्ति, २–रिषमतोत्पत्ति गद्य का उदाहरण

ख-जैनेतर ऐतिहासिक गद्य पृ० ७३-१०४

राजाश्रय या स्वतत्र रूप से लिखा गया ऐतिहासिक विवरण ख्यात के नाम से प्रसिद्ध

ख्यात साहित्य . ख्यातो का प्रारम्भ अकबर से पूर्व उनका अभाव . अकबर की इतिहास प्रियता का प्रभाव ."आइने अकबरी" के उपरान्त

इस प्रकार की रचनाओं का प्रारम्भ। राजस्थान के देशी राज्यों मे भी उसका अनुकरण ..ख्यातों का प्रारम्भिक रूप . .वंशावली। धीरे धीरे विस्तृत विवरण .. विकसित रूप ख्यात . ख्यातों के प्रकार .. १-वैयक्तिक, २-राजकीय १-वैयक्तिक ख्याते .वैयक्तिक ख्यातों में व्यक्ति की इतिहास प्रियता के उदाहरण प्रमुख वैयक्तिक ख्याते १-नैणसी की ख्यात सकलन काल स० १७०७ से १७२२. नैणसी प्रौढ़ राजस्थानी गद्य का लेखक और परिचय साहित्यिक महत्व राजस्थानी के ऐतिहासिक गद्य का सबसे अच्छा उदाहरण विषय की दृष्टि से साहित्यिकता का अभाव . गद्य के उदाहरण

२-दयालदास की ख्यात .. दयालदास स० १८५५ से १९४८ .परिचय और ग्रंथ बीकानेर रा राठौड़ां री ख्यात ...आर्यख्यान कल्पद्रुम. . देश दर्पण गद्य शैली. ..गद्य के उदाहरण....

३-बांकीदास की ख्यात .बांकीदास सं० १८३८ से १८९०....परिचय ख्यात का प्रमुख विषय गद्य के उदाहरण .

२-राजकीय ख्यातें

ख्यातों के लेखक मुत्सद्दी पुरानी ख्यातों में कम उपलब्ध प्रमुख प्राप्त ख्याते ."राठौड़ां री वंसावली सीहै जी सूं कल्याणमल जी ताई" . . बीकानेर रै राठौड़ा री वात तथा वसावली जोधपुर रा राठौड़ां री ख्यात . राठौड़ां री वसावली राव अमर सिघ जी री वात राव रायसिघ जी री वात महाराजा अजीतसिघ जी री ख्यात उदयपुर री ख्यात .मारवाड़ री ख्यात तीन भागों में विभक्त किशनगढ़ री ख्यात . बीकानेर री ख्यात गद्य के उदाहरण

स्फुट ख्याते–अनेक गुटकों में प्राप्त ..जीवनी साहित्य का अभाव साधारण तथा एक मात्र महत्वपूर्ण उदाहरण ऐतिहासिक जीवनी .. दलपत विलास बीकानेर के राजकुमार दलपतसिह की जीवनी अपूर्ण ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण तत्कालीन इतिहास पर यत्र तत्र नया प्रकाश।

अन्य प्रकार . १-ऐतिहासिक वाते रावजी अमरसिह जी री वात नागौर रै मामले री वात २-पीढ़ियावली "वशावली" राठौड़ां री वंसावली बीकानेर रा राठौड़ा राजावां री बसावली। खीचीवाड़ा रा राठौड़ां री पीढ़ियां सिसोदिया री वसावली तथा पीढ़ियां .ओसवालां री पीढियां ३-हाल अहवाल हगीगत याददाश्त आदि . ४-विगत . चारण रा सांसराणा री विगत . .महाराजा तखतसिघ जी रै कवरा री विगत....जोधपुर

रा देवस्थाना री विगत . जोधपुर वागावत री विगत . जोधपुर रा निवाणां री विगत . ५–पट्टा परवाना परधाना रौ तथा उमरावां रौ पटौ महाराजा अनूपसिंघ जी रौ आनन्द राम रै नाम परवानो आदि ६–इलकाबनामा कई सग्रह . ७–जन्म पत्रियां राजां री तथा पातसाहां री जन्मपत्रियां ८–तहकीकात. ..जयपुर बारदात री तहकीकात

२–धार्मिक-गद्य पृ० १०४-१२१

उसके प्रमुख विभाग. अ-टीकात्मक. आ-व्याख्यान ... इ–खडन मडनात्मक ई–प्रश्नोत्तर ग्रंथ.. उ–विधि विधान ऊ–तत्व ज्ञान. ए–शास्त्रीय विचार ऐ–कथा साहित्य

३–पौराणिक गद्य पृ० १२१-१२३

अब तक इसका पूर्ण अभाव प्रमुख विषय १–पुराण, २–धर्मशास्त्र, ३–महात्म्य, ४–स्तोत्र ग्र थ, ५–वेदान्त, ६–कथाये....

४–कलात्मक गद्य पृ० १२४-१६७

पिछले काल की अपेक्षा अधिक विस्तृत क्षेत्र प्रमुख स्तम्भ १–वात साहित्य . कहानी का बीज मानव की ज्ञान भूमियां.. भारत की प्रान्तीय लोक कथाये राजस्थान की वाते, उन पर सस्कृति का प्रभाव, चार सस्कृतियों का प्रभाव १–ब्राह्मण २–राजपूत, ३–जैन, ४–मुस्लिम....उनका वर्गीकरण . लोक कथाये– १-मौलिक, २-सग्रहीत इनको लिपि बद्ध करने के प्रयास २–पारम्परिक नवरचित एव अनूदित कथाये लिपिबद्ध "सग्रहीत" कथाओं के दो विभाग १–अर्द्धैतिहासिक २–अनैतिहासिक या काल्पनिक।

२–वचनिका—अ-चारण वचनिका—राठौड़ रतनसिंघ जी महेसदासोत री वचनिका लेखन स० १७१७ लेखक जगमाल "जग्गो"... लेखक परिचय गद्य का उदाहरण ३–दवावैत— १-नरसिह दास गौड़ की दवावैत अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध मे लिखित उदाहरण १-जैनाचार्य जिन लाभ सूरि जी की दवावैत उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ मे रचित.... उदाहरण २–जैनाचार्य जिन सुखसूरि जी की दवावैत स० १७७२ उपाध्याय राम विजय रचित गद्य के उदाहरण... ४–दुरगादत्त की दवावैत गद्य का उदाहरण ४–वर्णक ग्र थ—एक प्रकार के वर्णन कोप प्रमुख ग्र थ—१-राजान राउतरो वात बणाव २-खीची गगेव नीबावत रो दो पहरो. ३-वाग्विलास या मुत्कलानुप्रास .

४-कुतूहलम्....वर्ण्य विषय गद्य के उदाहरण ..

५-सभा शृंगार स० १७६२ महिमा विजय लिखित . .वर्ण्य विषय

५-वैज्ञानिक गद्य पृ० १६७-१७०

दो रूपों में प्राप्त . १-अनुवादात्मक तथा २-टीकात्मक . स्वतन्त्र गद्य के प्रयोग बहुत कम ..प्राप्त वैज्ञानिक गद्य के प्रकार १-योग शास्त्र-गोरख शत टीका, हठयोग की क्रियाओं पर प्रकाश हठयोग प्रदीपिका टीका, स० १७८७ प्रथम कृति से विषय साम्य .. २-वेदान्त-भगवद् गीता की टीकाये ही प्राप्त . गद्य के उदाहरण .. ३-वैद्यक. . कुछ प्रसिद्ध प्राप्त प्रतियां....गद्य के उदाहरण ४-ज्योतिष-अनूदित ग्रंथ अ-राशिफल आदि १-साठ सवछरी फल, २-डवक मडली, ३-वर्षा ज्ञान विचार, ४-पचांग विधि, ५-रत्न माला टीका, ६-लीलावती . आ-शकुन शास्त्र . १-देवी शकुन, २-शकुनावली ३-पासा केवली शकुन इ-सामुद्रिक शास्त्र १-सामुद्रिक टीका, २-सामुद्रिक शास्त्र

४-प्रकीर्णक गद्य-विषय के आधार पर वर्गीकरण १-नीति सम्बन्धी प्राप्त ग्रथ क-चाणक्य नीति टीका, ख-चौरासी बोल, ग-भरथरी सवद, घ-भरथहरी उपदेश २-अभिलेखीय शिलालेख पर्याप्त सख्या मे प्राप्त प्राप्त शिलालेखों में सबसे बड़ा एव महत्वपूर्ण जैसलमेर मे पटवों के यात्रो सघ का शिलालेख . गद्य का उदाहरण ३-पत्रात्मक तीन प्रकार १-नरेशों के पत्र, २-जैन आचार्य या साधुओं के पत्र, ३-जन साधारण के पत्र N P ४-यत्र मत्र सम्बन्धी .उपसहार भाषा की दृष्टि से इस काल का महत्व राजस्थानी गद्य के प्रौढ़तम प्रयोग विषय की दृष्टि से सर्वतोमुखी विकास शैली में प्रवाह तथा अपनापन .

पांचवां प्रकरण

आधुनिक काल सं० १९५० से अब तक

हिन्दी की उन्नति से राजस्थानी की प्रगति मे गतिरोध तथा नवीन प्रयास

नाटक पृ० १७७-१७८

श्री शिवचद भरतिया के तीन नाटक १-केशर विलास, २-बुढापा की सगाई स० १९६३, ३-फाटका जजाल श्री गुलाबचन्द नागौरी का "मारवाड़ी मौसर और सगाई जजाल" भगवती प्रसाद दारूका के पांच नाटक १-वृद्ध विवाह स० १९६०, २-बाल विवाह स० १९७५, ३-ढलती फिरती छाया स० १९७७, ४-कलकतिया बाबू स० १९७९, ५-सीढणा सुधार

उप संहार

राजस्थानी साहित्य के अध्ययन की ओर मेरा अधिक झुकाव रहा है। एम० ए० की परीक्षा के उपरान्त उसी को अपनी शोध का विषय बनाने की बलवती इच्छा हुई। मैंने देखा राजस्थानी साहित्य के अध्ययन की ओर बहुत कम लोगों का ध्यान गया है।

सबसे पहले सन् १८१६ ई० में सर्व श्री केरी, मार्शमेन तथा वार्ड नामक विद्वानों ने भारतीय-भाषाओं से सम्बन्धित एक रिपोर्ट प्रकाशित की जिसमें ३३ भारतीय भाषाओं और बोलियों के अन्तर्गत राजस्थानी की ६ बोलियों (मारवाड़ी, उदयपुरी, जयपुरी, हाड़ौती और मालवी) के उदाहरण दिये गये थे। इसके ३७ वर्ष उपरान्त सन् १८५३ में पेरी ने भारतीय भाषाओं पर लिखे गये एक निबन्ध में मारवाड़ी को हिन्दी की एक विभाषा स्वीकार किया। सन् १८७२-७५-७६ में प्रकाशित बीम्स के "आधुनिक भारतीय भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण" में अन्य भाषाओं के व्याकरण के साथ साथ राजस्थानी का व्याकरण भी दिया गया था। सन् १८७७ में बम्बई विश्वविद्यालय में डॉ० रामकृष्ण गोपाल भण्डारकर ने "विल्सन भाषा वैज्ञानिक भाषण' में राजस्थानी की मेवाड़ी और मारवाड़ी की कुछ विशेषताओं का उल्लेख किया। सन् १८७८ में जर्मन पादरी डा० केलाग ने अपने "हिन्दी भाषा का व्याकरण" में राजस्थानी के व्याकरण पर भी प्रकाश डाला। सन् १८८० में डा० हार्नले का "गौड़ीय भाषाओं का व्याकरण" छपा। इसमें तुलना के लिये राजस्थानी बोलियों की व्याकरण सम्बन्धी विशेषताओं का उल्लेख मिलता है।

राजस्थानी का वैज्ञानिक अध्ययन सर्वप्रथम डॉ० सर ग्रियर्सन के

"लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इन्डिया—खण्ड ६ भाग २ में मिलता है। इसका प्रकाशन सन् १६०८ में हुआ। इसी मे सबसे पहले राजस्थानी साहित्य के महत्व को स्वीकार किया गया। इनके समर्थन पर तत्कालीन वायसराय लार्ड कर्जन ने राजस्थानी साहित्य के शोध एवं प्रकाशन के लिये बगाल ऐशियाटिक सोसाइटी को कुछ रुपयों की सहायता प्रदान की जिसके फलस्वरूप सन् १६१३ मे श्री हरप्रसाद शास्त्री ने अपनी रिपोर्ट प्रकाशित की।

डॉ० ग्रियर्सन के उपरान्त डॉ० टैसीटोरी ने राजस्थानी साहित्य को प्रकाश में लाने का उल्लेखनीय कार्य किया। सन् १६१४ में भारत सरकार ने रायल ऐशियाटिक सोसाइटी के अधीन राजस्थानी साहित्य की शोध करने के लिये इनको इटली से बुलाया। ६ वर्ष के अनवरत परिश्रम के उपरान्त ३० वर्ष की आयु में, सन् १६२० में इनकी मृत्यु हो गई। इन्होंने सहस्रों राजस्थानी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज की, ऐतिहासक सामग्री को एकत्रित किया तथा राजस्थानी के तीन काव्य-ग्रन्थों का सम्पादन किया।

अब राजस्थानी के अध्ययन की ओर विद्वानों का ध्यान जाने लगा। डॉ० टर्नर, डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी, कविराज मुरारीदान, पं० रामकरण आसोपा, ठा० भूरसिह, श्री रामनारायण दूगड़, मुंसिफ देवीप्रशाद, पुरोहित हरनारायण, पं० सूर्यकरण पारीक, श्री जगदीशसिंह गहलौत, डॉ० दशरथ शर्मा, मोतीलाल मेनारिया, श्री अगरचन्द नाहटा, श्री भँवरलाल नाहटा, गणपति स्वामी, श्री नरोत्तमदास स्वामी, कन्हैयालाल सहल प्रभृति विद्वानों ने राजस्थानी साहित्य को प्रकाश में लाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है।

राजस्थानी का गद्य-क्षेत्र अब तक प्राय अप्रकाशित था। इसी विषय को अपनी शोध के लिये चुनने का निश्चय किया। पू० डा० फतहसिह जी ने सुझाव दिया कि श्री नरोत्तमम दास स्वामी इस विषय में उपयुक्त पथ-प्रदर्शक हो सकते है। उन्होंने एक पत्र पू० स्वामी जी को इस सम्बन्ध में लिखा। फलस्वरूप स्वामी जी ने मुझे अपना शिष्य बना लिया। "काम मनोयोग से करना होगा" उनके ये शब्द आज भी मेरे कानों मे गूंजा करते है।

बीकानेर पहुंच कर मैंने अपना कार्य प्रारम्भ किया। स्वामी जी ने शीघ्र ही मुझे कार्य क्षेत्र की सीमाओं से अवगत कराया। रूपरेखा बन ही चुकी थी उसी पर कार्य करना था। स्वामी जी ने मेरी सभी कठिनाइयों को

दूर किया। स्वामी जी के प्रथम दर्शन से ही मै प्रभावित हो गया। उनका व्यक्तित्व मुझे आकर्षक लगा। उन्होने अपने पुत्र की भाँति ही मुझ पर स्नेह उडेल दिया। जो कुछ भी मुझे कठिनाई होती थी मै निसकोच उसे उनके सामने रखता था वह कठिनाई शीघ्र ही दूर हो जाती थी। रहने आदि की व्यवस्था भी उनकी कृपा का ही परिणाम थी। यदि ये सुविधाये प्राप्त न होती तो सम्भवत' यह काम हो ही नही सकता था। स्वामी जी के निर्देशों ने मुझे अध्ययन मे अधिक सहायता पहुंचाई। कई निराशा के क्षणों मे उन्होने मुझे प्रोत्साहित किया। अधिकांश सामग्री मुझे उनके द्वारा ही प्राप्त हुई। उन्होंने मुझे वे सब स्थान बताये जहाँ से सामग्री प्राप्त हो सकती थी। स्वामी जी ने मेरा परिचय श्री अगरचन्द जी नाहटा से करवाया। श्री मुकुल मेरे साथ श्री नाहटा जी के यहाँ गये। उस समय श्री नाहटा जी किसी जैन भडार में प्राचीन प्रतियों को देख रहे थे। वे अपने कार्य मे इतने मग्न थे कि हमारी उपस्थिति का पता उन्हें देर से मिला ऐसा साहित्य का साधक मैंने आज तक नही देखा। वेश भूषा से यह जानना कठिन था कि यह एक अध्ययननिष्ट विद्वान है। इसका पता उनके सम्पर्क मे आने पर ही चला। श्री नाहटा जी ने मुझे प्राचीन जैन-लिपि सिखाई तथा अपने अभय जैन पुस्तकालय से उपयुक्त सामग्री अध्ययन के लिये दी। अभय जैन पुस्तकालय मे राजस्थानी गद्य की अनेक हस्तलिखित प्रतिय है उनमे से प्रमुख के अध्ययन का अवसर श्री नाहटा जी ने मुझे प्रदान किया। उन्होंने मेरे साथ परिश्रम करके अन्य अध्ययन सम्बन्धी कठिनाइयो को दूर किया। श्री नाहटा के द्वारा कुछ जैन विद्वानो से भी परिचय हो गया जिससे मुझे अध्ययन मे सहायता मिली। दूसरे जैन भडारों को भी मैने श्री नाहटा जी के साथ देखा तथा आवश्यक सामग्री प्राप्त की। अनूप सस्कृत पुस्तकालय का उल्लेख भी अत्यन्त आवश्यक है। यहाँ से भी मुझे अधिक सामग्री मिली। सामग्री को प्राप्त करने के लिये मुझे अधिक नहीं भटकना पड़ा। बीकानेर के इन पुस्तकालयों से मेरा बहुत सा काम बन गया। आवश्यकता के अनुसार सूचीपत्र, पत्र-पत्रिका, रिपोर्ट, अभिनन्दन-ग्रन्थ, साहित्य के इतिहास, भाषा के इतिहास आदि से भी मैने सहायता ली है। जहाँ से भी सामग्री प्राप्त हो सकी मैने उसे प्राप्त करने का श्रम अवश्य किया है। प्राप्त सामग्री के उचित उपयोग के लिये मुझे स्वामी श्री नरोत्तम दास तथा श्री अगरचन्द नाहटा से अधिक सहायता मिली है। इनके बहुमूल्य सुझाव तथा निर्देश आदि के लिये मै सदैव कृतज्ञ रहूँगा।

प्रस्तुत निबन्ध में स० १३३० के आराधना नामक टिप्पणी को मैंने राजस्थानी का सर्वप्रथम गद्य का उदाहरण माना है। यह मुनि श्री जिनविजय जी की शोध का परिणाम है। इससे प्राचीन उदाहरण मुझे प्राप्त न हो सका। स० १३३६ से आज तक राजस्थानी गद्य साहित्य के विकास को दिखलाने का प्रयास यहाँ किया गया है। इस विकास को दिखाने के लिये सम्पूर्ण गद्य साहित्य को कालों में विभाजित कर दिया है— १–प्राचीन राजस्थानी काल—स० १३०० से १६०० तक—, २–मध्य राजस्थानी काल—स० १६०० से १६०० तक—, ३—आधुनिक काल—स० १६०० से अब तक—। प्राचीन राजस्थानी काल के भी दो उपविभाग करना मैंने उचित समझा है— क–प्रयास काल—सं० १३०० से १४०० तक— ख–विकास काल—सं० १४०० से १६०० तक—। मध्यकालीन को विकसित काल कहा जा सकता है। विकसित काल के अन्तिम सोपान में राजस्थानी साहित्य का ह्रास होने लगा था। किन्तु यह समय बहुत थोड़ा है। इस ह्रास काल के उपरान्त आधुनिक काल का नाम नवजागरण काल, मैंने दिया है।

प्रयास कालीन गद्य में जैन विद्वानों का ही हाथ रहा है। इस काल की ८ रचनाये मिलती है— १–आराधना—स० १३३०— २–बाल शिक्षा—सं० १३३६— ३–अतिचार सं० १३४०—, ४–नवकार व्याख्यान—स० १३५८— ५–सर्वतीर्थ नमस्कार स्तवन—सं० १३५६—, ६–अतिचार—स० १३६६—, ७–तत्वविचार प्रकरण, ८–धनपाल कथा। ये सभी जैन आचार्यों की रचनाये है। अन्तिम दो रचनाओं का समय आनुमानिक है। हस्तप्रतियों तथा श्री अगरचन्द नाहटा के मतानुसार इन दोनों रचनाओं का समय चौदहवी शताब्दी माना गया है।

विकासकाल विकास की दूसरी सोपान है। इस काल की प्रथम प्रौढ रचना आचार्य तरुणप्रभसूरि की षड़ावश्यक बालावबोध (सं० १४११) है। इसके उपरान्त राजस्थानी गद्य लेखन की प्रवृत्ति बढ़ती चली गई। इस काल मे पाँच क्षेत्रों मे राजस्थानी गद्य का प्रयोग मिलता है— १–धार्मिक गद्य, २–ऐतिहासिक गद्य, ३–कलात्मक गद्य, ४–व्याकरण गद्य, ५–वैज्ञानिक गद्य। धार्मिक तथा ऐतिहासिक गद्य के क्षेत्र मे जैन आचार्यों का ही हाथ रहा। कलात्मक गद्य की सबसे प्रथम रचना "पृथ्वीचन्द्र वाग्विलास"—स० १४७८—जैन आचार्य श्री माणिक्यचन्द्र सूरि की है। स० १४७५ मे लिखित शिवदास चारण की "अचलदास खीची री वचनिका" चारणी

कलात्मक गद्य का सर्व प्रथम उदाहरण है। जिन समुद्र सूरि तथा शान्तिसागर सूरि की दो जैन वचनिकाये भी इस काल मे मिलती है। कुलमण्डन का "मुग्धावबोध औक्तिक" (सं० १४५०) इस काल का महत्वपूर्ण व्याकरण ग्रन्थ है। वैज्ञानिक गद्य के अन्तर्गत गणितसार (सं० १४४६) तथा गणितपच विशतिका बालावबोध (सं० १४७५) गणित ग्रन्थ मिलते है।

विकसित काल राजस्थानी-गद्य-साहित्य का स्वर्णकाल है। इस काल मे राजस्थानी गद्य साहित्य का सर्वतोमुखी विकास हुआ। इस काल में उक्त ५ क्षेत्रों मे ही गद्य का विकास हुआ। ऐतिहासिक गद्य के दो प्रकार मिले—क-जैन ऐतिहासिक, ख-जैनेतर ऐतिहासिक। प्रथम प्रकार में वशावली, पट्टावली, दफ्तर बही, ऐतिहासिक टिप्पण एव उत्पत्ति ग्रन्थ मिलते है। दूसरे प्रकार मे "ख्यात साहित्य" उल्लेखनीय है। इस काल में ख्याते खूब लिखी गई। ख्यातों के अतिरिक्त ऐतिहासिक बाते, पीढ़ियावली, हाल, विगत, पट्टापरवाना, इलकाबनामा, जन्मपत्रियाँ तथा तहकीकात आदि रूप भी मिलते है। इसी प्रकार धार्मिक गद्य के भी दो उपविभाग किये गये है—क-जैन धार्मिक, ख-जैनेतर धार्मिक। जैन धार्मिक गद्य के अन्तर्गत टीका, व्याख्यान, खण्डनमण्डन, प्रश्नोत्तर, विधिविधान, तत्वज्ञान, शास्त्रीय विचार तथा कथा साहित्य समाहित है। जैनेतर-धार्मिक-साहित्य पौराणिक गद्य, पुराण, धर्मशास्त्र, माहात्म्य, स्तोत्रग्रथ, वेदान्त तथा कथाओं के अनुवाद एव टीका रूप मे लिखा है। कलात्मक गद्य मे 'बात साहित्य' अधिक महत्वपूर्ण है। इन राजस्थानी कहानियों का साहित्यिक महत्व है। ये कहानियाँ अनेक प्रकार की है। इनके अतिरिक्त वचनिका, दवावैत तथा वर्णक ग्रन्थ कलात्मक गद्य के अच्छे उदाहरण है। वैज्ञानिक गद्य के क्षेत्र मे गणित की रचना नहीं मिलती। योगशास्त्र, वेदान्त, वैद्यक, ज्योतिष आदि नये विषयों के लिये राजस्थानी गद्य का प्रयोग हुआ। कुछ प्रकीर्णक विषयों के लिये भी राजस्थानी गद्य प्रयुक्त किया गया। इस काल मे नीति सम्बन्धी, अभिलेखीय, पत्रात्मक तथा यत्र मन्त्र सम्बन्धी विषयों का प्रतिपादन भी राजस्थानी गद्य मे किया गया।

विकसित काल के अन्तिमांश मे राजस्थानी गद्य की प्रगति का गतिरोध हुआ। न्यायालयों की भाषा उर्दू तथा शिक्षा की भाषा हिन्दी और अंगरेजी होने के कारण राजस्थानी को कोई प्रोत्साहन नहीं मिला। यह अवस्था अधिक समय तक नही रह सकी। इनके नवोत्थान के प्रयास

आरम्भ होने लगे फलस्वरूप अब नाटक, कहानी, उपन्यास, निबन्ध, गद्यकाव्य, रेखाचित्र, संस्मरण, एकांकी नाटक, भाषण आदि सभी क्षेत्रों मे राजस्थानी गद्य साहित्य प्रकाशित हो रहा है। इसको प्रकाश मे लाने के लिये अनेक पत्र-पत्रिकाये निकली जिनमे पंचराज,—स० १९७२—, मारवाड़ी हितकारक—स० २००४—, मारवाड़—स० २०००—, मारवाड़ी स० २००५ आदि साप्ताहिक पत्र प्रमुख है। राजस्थानी के शोध कार्य के लिये "राजस्थान", "राजस्थानी", "चारण", "राजस्थान-भराती", "शोध-पत्रिका", "मरु-भारती" आदि शोध पत्रिकाये भी अधिक सहायक सिद्ध हुई है।

राजस्थानी गद्य साहित्य का विकास दिखाने के लिये उसकी भाषा का विकास दिखाना भी आवश्यक था। यह भाषा का विकास दिखाने के लिये परिशिष्ट –क– में राजस्थानी गद्य के उदाहरण भी काल क्रमानुसार दे दिये है।

अन्त मे, मैं उन सबके प्रति कृतज्ञ हूँ जिनकी मुझे सहायता मिली है। यदि यह निबन्ध उपादेय सिद्ध हुआ तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूंगा।

कोटा,
शिवरात्रि : १९६१ :

शिवस्वरूप शर्मा

राजस्थानी-भाषा-भाषी-क्षेत्र
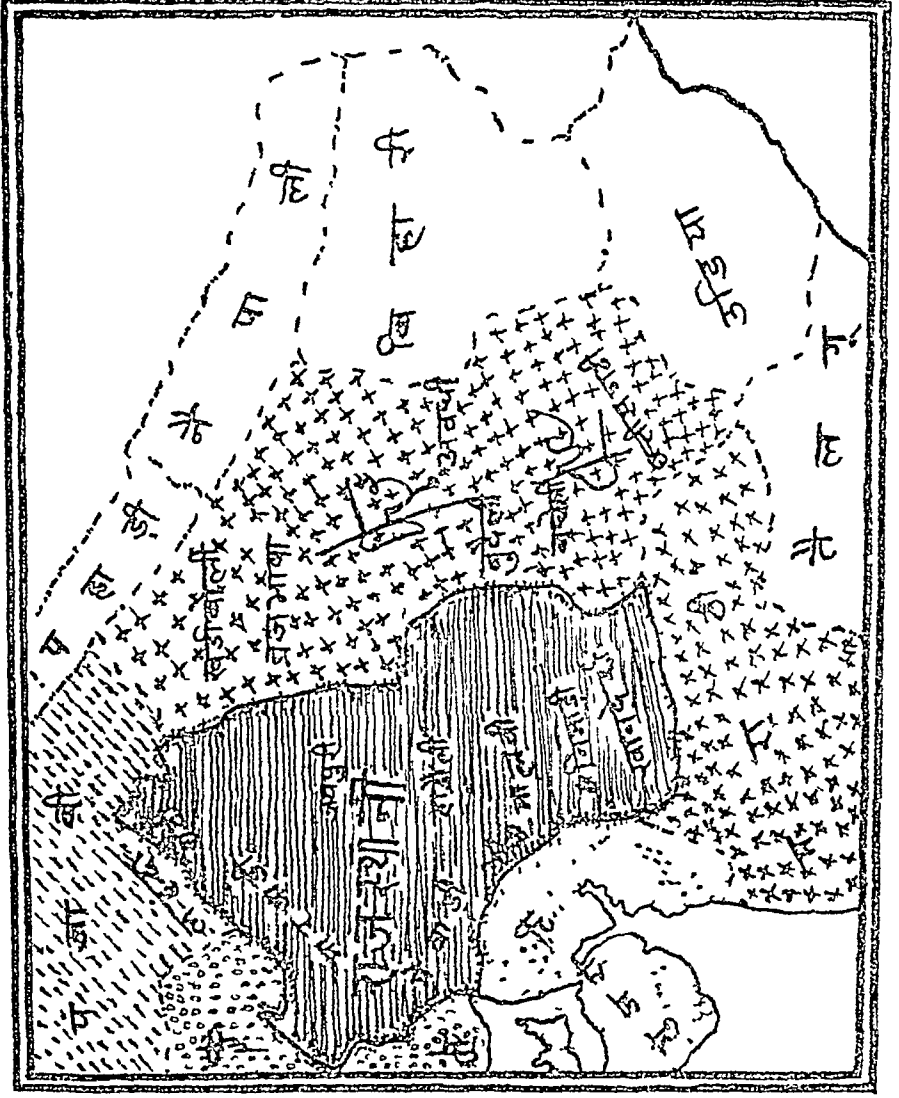
प्रथम-प्रकरण

विषय - प्रवेश

क-राजस्थानी-भाषा

१. क्षेत्र और सीमायें

"राजस्थानी" राजस्थान और मालवा की मातृभाषा है। इनके अतिरिक्त यह मध्यप्रदेश, पंजाब तथा सिंध के कुछ भागों में बोली जाती है[1]। राजस्थानी-भाषा-भाषी प्रदेश का क्षेत्रफल लगभग डेढ़ लाख वर्गमील है[2] जो अधिकांश भारतीय भाषाओं के क्षेत्रफल से अधिक है। इस भाषा के बोलने वालों की संख्या डेढ करोड़ से ऊपर है[3] यह संख्या गुजराती, सिंधी, उड़िया, असमिया, सिंहाली, ईरानी, तुर्की, वर्मी, यूनानी आदि बहुत सी भाषा-भाषियों की संख्या से बड़ी है।

१—ग्रियर्सन —

L S I Vol. I Part I Page 171—

"It is spoken in Rajputana and Western portion of of Central India and also in the neighbouring tracts of Central Provinces, Sind and the Punjab To the East it shades of into the Bangali dialect of Western Hindi in Gwaliar State To its North it merges into–Braj Bhasha in the State of Karauli and Bharatpur and in the British District of Gurgaon To the West it gradually becomes Panjabi, Lahanda and Sindi through mixed dialects of Indian Desert and directly Gujrati in the State of Palanpur. On the South it meets marathi but this being an outerlanguage does not merge into it

२—ग्रियर्सन : एल० एस० आई०, खण्ड १ भाग १ पृ० १७१

३—ग्रियर्सन की अध्यक्षता में किये सर्वे के अनुसार यह संख्या १६२६८८२६० है एल०, एस०, आई० खण्ड १ भाग १ पृ० १७१

राजस्थानी के इस विशाल क्षेत्र प्रदेश की उत्तरी सीमा पंजाबी से मिली हुई है। पश्चिम में सिंधी इसकी सीमा बनाती है। दक्षिण में मराठी, दक्षिण-पूर्व में हिंदी की बुन्देली शाखा, पूर्व में ब्रज और उत्तर-पूर्व में हिंदी की बांगड़ू तथा खड़ीबोली नामक बोलियां बोली जाती हैं।[1]

२. नामकरण

इस भाषा का "राजस्थानी" नाम आधुनिक है। मरुदेश की भाषा का उल्लेख सर्वप्रथम आठवीं शताब्दी में रचित उद्योतन सूरि के "कुवलयमाला" कथा-ग्रंथ में अठारह देश-भाषाओं के अन्तर्गत मिलता है[2]। सत्तरहवीं शताब्दी में रचित "आईने अकबरी" में अबुल फजल ने भारत की प्रमुख भाषाओं में मारवाडी को गिनाया है[3]। उत्तरकालीन ग्रंथों में इस भाषा के लिये मरुभाषा[4], मरुभूम भाषा[5], मारूभाषा[6], मरुदेशीया भाषा[7], मरुवाणी[8], डिंगल आदि कई नामों का प्रयोग पाया जाता है। इनमें "डिंगल" को छोड़कर सभी नाम मरु-प्रदेश की भाषा की ओर संकेत करते हैं। अतः "डिंगल" नाम की व्याख्या अपेक्षित है।

डिंगल और उसका अभिप्राय—

"डिंगल" राजस्थानी का एक बहुत प्रचलित पर्याय रहा है। इस शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में कविवर बांकीदास की "कुकीव बत्तीसी" में पाया गया है[9]। सं० १६०० के आसपास लिखित

१–ग्रियर्सन एल० एस० आई० खण्ड ६ भाग २ पृ० १

२–"अप्पा तुप्पा" भणिए अह पेच्छइ मारुये तत्तो "कुवलयमाला"
अपभ्रंश काव्यत्रयी—नं० ३७ पृ० ६३

३–ग्रियर्सन : एल० एस० आई० खण्ड १ भाग १ पृ० १

४–गोपाल लाहौरी रस विलास : मरुभाषा निर्जल तजी करी व्रजभाषाचोज

५–कवि मंछ रघुनाथ रूपक मरुभूम भाषा तणो मारग रमै आछीरीत सू

६–कवि मोडजी : पाबू प्रकाश ' कर आणद कवेस वहण मरुभाषा वट

७–सूर्यमल वंश भास्कर .

८–सूर्यमल : वंश भास्कर : डिंगल उपनामक कटुक मरुवानीहु विधेय

९–डिंगलिया मिलया करे पिंगल तणो प्रकास
संस्कृति ह्वे कपट सब पिंगल पढ़िया पास
—बांकीदास ग्रंथावली भाग २ पृ० ८१

"पिगल शिरोमणि" में "उडिंगल" शब्द का प्रयोग हुआ है जो सभवतः डिंगल का मूल है[1]।

"डिंगल" शब्द की व्युत्पत्ति अभी तक अनिश्चित है। विद्वानों ने इस विषय में अनेक मत प्रस्तुत किये है जिनमें डॉ० टेसीटोरी[2] प हरप्रसाद शास्त्री[3], श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी[4], श्री गजराज ओझा[5], श्री पुरुषोत्तमदास स्वामी[6], श्री उदयराज उज्ज्वल[7], श्री मोतीलाल मेनारिया[8], श्री जगदीश-सिह गहलोत[9] आदि के मत उल्लेखनीय है, परन्तु ये सभी मत अनुमान एव कल्पना पर आधारित है। वर्तमान मे "डिंगल' शब्द का अर्थ सकुचित हो गया है। वह साधारणतया चारणी-शैली की प्राचीन कविता की भाषा के लिये प्रयुक्त होता है।

३. राजस्थानी की शाखायें

राजस्थानी के अन्तर्गत कई बोलिया है। ये चार समूहों मे विभाजित की जाती है[10] —

१–पूर्वी राजस्थानी

पूर्वी राजस्थान में इसका प्रयोग होता है। इसकी दो बडी शाखाये ढू ढाडी और हाडौती है। ढू ढाडी शेखावाटी को छोडकर सम्पूर्ण जयपुर,

१–अगरचन्द नाहटा : राजस्थान-भारती ' भाग १ अ क ४ पृ० २५
२–जे पी० ए० एस० बी० खण्ड १० पृ० ३७६
३–प्रलिमिनरी रिपोर्ट आन दी आपरेशन इन सर्च आफ मेन्युस्क्रिप्ट्स आफ बार्डिक क्रोनीकल्स पृ० १५
४–नागरी प्रचारिणी पत्रिका भाग १४ पृ० २५५
५–वही भाग १४ पृ० १२२
६–नागरी प्रचारिणी पत्रिका भाग १४ पृ० २५५
७–राजस्थान भारती भाग २ अ क २ पृ० ४५
८–राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ० २१
९–उमर-काव्य भूमिका पृ० १६८
१०–श्री श्यामसुन्दर दास के अनुसार राजस्थानी की चार बोलियॉ है—
क–मारवाड़ी, ख–जयपुरी, ग–मेवाती, घ–राजस्थानी
भाषा–रहस्य पृष्ठ ६३

किशनगढ़ और टौंक के अधिकांश भाग तथा अजमेर मेरवाड़ा। के उत्तर-पूर्वी भाग में बोली जाती है इसमें साहित्य की रचना बहुत ही कम है।

'हाड़ौती' कोटा, बून्दी और झालावाड़ की बोली है। ये तीनों राज्य हाड़ौती प्रदेश के नाम से प्रसिद्ध हैं, झालावाड की बोली पर मालवी का प्रभाव है। इसमें साहित्य का अभाव है।

२—दक्षिणी राजस्थानी

यह मालवी के नाम से पुकारी जाती है। यह मालवा प्रदेश की भाषा है। निमाडी और खानदेशी भी इसी के अन्तर्गत है। यह कर्ण-मधुर एवं कोमल भाषा है किन्तु इसमें साहित्य नहीं है।

३—उत्तरी राजस्थानी

इस पर व्रजभाषा का प्रभाव है। यह अलवर और भरतपुर के उत्तर-पश्चिम भाग तथा गुड़गाँव मे बोली जाती है। बांगड़, मारवाड़ी, ढूंढाड़ी तथा व्रजभाषा के क्षेत्रों से घिरी हुई है। इसमें भी साहित्य का का अभाव है।

४—पश्चिमी राजस्थानी

इसका नाम "मारवाड़ी है।" इसकी प्रमुख उपबोलियाँ मेवाड़ी, जोधपुरी, थली, शेखावाटी आदि है। राजस्थानी की शाखाओं में मारवाडी

. . ..

डा० धीरेन्द्र वर्मा ने यह विभाजन इस प्रकार किया है :—

क—मेवाती—अहीरवाती ख—मालवी, ग—जयपुरी—हाड़ौती घ मारवाडी-मेवाती ' हिन्दी भाषा का इतिहास पृ० ५५

डॉ० ग्रियर्सन द्वारा किया गया वर्गीकरण इस प्रकार है '—

अ—पश्चिमी राजस्थानी . मारवाड़ी, ढाटकी, थली, बीकानेरी, बागड़ी, शेखावाटी, मेवाड़ी, खेराड़ी तथा सिरोही की बोलियाँ

आ—उत्तर पूर्वी राजस्थानी . अहीरवाटी, मेवाती

इ—दक्षिण पूर्वी राजस्थानी : मालवी, बांगड़ी, सोंटवाडी

ई—मध्य पूर्वी राजस्थानी : ढूढाडी, जयपुरी, काठेडा, राजावटी, अजमेरी, किशनगढ़ी, चौरासी, नागरचाल और हाड़ौती

उ—दक्षिणी राजस्थानी ' निमाड़ी

ही सबसे महत्वपूर्ण है।[1] साहित्यिक राजस्थानी का यही आधार रही है। यह जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर, सिरोही, उदयपुर और अजमेर मेरवाडा, पालनपुर, सिंध के कुछ भाग तथा पजाब के दक्षिणी भाग मे बोली जाती है। इसका प्राचीन साहित्य बहुत ही विस्तृत है। पद्य के क्षेत्र मे चारण और भाटों के द्वारा इसका बहुत ही प्रभुत्व बढ़ा। गद्य के क्षेत्र मे भी इसका अधिक महत्व है। इसका गद्य साहित्य अपनी प्राचीनता तथा प्रौढ़ता के लिए उल्लेखनीय है। वस्तुतः यही राजस्थानी की "स्टेण्डर्ड" टकसाली भाषा है।[2]

इनके अतिरिक्त भीली भी राजस्थानी की शाखा है[3] यद्यपि डॉ० ग्रियर्सन इस पक्ष में नहीं है।[4] राजस्थान प्रान्त के बाहर बोली जाने वाली गूजरी तथा बजारी (लमानी) भी राजस्थानी के रूपान्तर है।[5]

४. राजस्थानी का विकास

पश्चिमी भाषाओ का विकास शौरसैनी प्राकृत से हुआ है। शूरसैन मथुरा प्रदेश मे बोली जाने वाली भाषा मध्यकाल मे शौरसैनी प्राकृत के नाम से प्रसिद्ध थी। इसी से शौरसैनी अपभ्रंश का विकास हुआ। शौरसैनी अपभ्रंश का प्रदेश शूरसैन प्रदेश सम्पूर्ण राजस्थान तथा गुजरात, सिंध का पूर्वी भाग और पजाब का दक्षिण-पूर्वी भाग रहा है। राजस्थानी की उत्पत्ति भी इसी शौरसैनी अपभ्रंश से हुई। विकास की दृष्टि से राजस्थानी के दो विभाग किये जा सकते है :—

१—प्राचीन राजस्थानी —स० १३०० से स० १६०० तक
२—अर्वाचीन-राजस्थानी —स० १६०० से अब तक

प्राचीन-राजस्थानी-काल—स० १३०० से स० १६०० तक—

इस काल के प्रारम्भ मे राजस्थानी पर अपभ्रंश का प्रभाव था।

१–ग्रियर्सन एल० एस० आई० खण्ड ९ भाग २ पृ० २
२–सुनीतिकुमार चटर्जी : राजस्थानी भाषा पृ० ८
३–क–सुनीतिकुमार चटर्जी राजस्थानी भाषा पृ० ६
ख–पृथ्वीसिह मेहता "हमारा राजस्थान" पृ० १०
४–ग्रियर्सन एल० एस० आई० खण्ड १ भाग १ पृ० १७८
५–नरोत्तमदास स्वामी "राजस्थानी" खण्ड १ पृ० १०

यह प्रभाव धीरे धीरे कम होता गया। सग्रामसिह की "बाल शिक्षा" (रचना काल स० १३३६) तक यह प्रभाव बहुत ही कम हो गया। इसी समय आधुनिक भाषाओं की दो प्रमुख विशेषतायें १–सस्कृत के तत्सम शब्दों का अधिकाधिक प्रयोग और २–द्वित्व वर्णों वाले शब्दों का अभाव, धीरे-धीरे अधिकाधिक दिखाई पडने लगी।

सोलहवीं शताब्दी के अन्तिमांश में राजस्थानी और गुजराती जो अभी तक एक ही भाषा के रूप मे साथ साथ विकसित होती आई थी धीरे धीरे अलग हो गई।[1] पर राजस्थान मे लिखित जैन-गद्य रचनाओं की भाषा पर गुजराती का प्रभाव बहुत दिनों तक रहा। गुजरात के साथ जैन साधुओं का घनिष्ठ सम्पर्क रहने के कारण जैन-शैली अपनी परम्परा के अनुसार चलती रही। शुद्ध राजस्थानी-शैली का प्राचीन रूप शिवदास चारण की "अचलदास खीची की वचनिका" (रचना स० १४७५) मे मिलता है। यह शैली आगामी काल मे अपनी पूर्ण प्रौढ़ता को पहुची।

गद्य के उत्थान और अभ्युदय मे जैन-लेखकों ने बहुत योग दिया। प्राचीनकाल का प्राय सम्पूर्ण राजस्थानी-गद्य जैन-लेखको की ही रचना है। पद्रहवी शताब्दी के प्रारम्भ से ही राजस्थानी-गद्य के प्रौढ़ रूप मिलने लगते हैं। स० १४११ मे लिखित आचार्य तरुणप्रभ सूरि की "बालावबोध" इसका सर्वप्रथम उदाहरण है। पद्रहवी शताब्दी के उत्तरार्ध तक पहुंचते पहुंचते राजस्थानी-गद्य मे कलापूर्ण साहित्यिक रचनाये होने लगीं। "पृथ्वीचन्द्र चरित्र" (स० १४७८) जैसी रचनाये इसके परिणाम है।

अर्वाचीन-राजस्थानी-काल—स० १६०० से अब तक–

इस काल मे राजस्थानी का वास्तविक रूप निखर आया। इस समय तक यह गुजराती के प्रभाव से पूर्णतया मुक्त हो चुकी थी। गद्य के क्षेत्र मे बहुत अधिक रचनाये इस काल मे हुई। इतिहास तथा कथा-साहित्य बहुत ही महत्वपूर्ण है। ऐतिहासिक साहित्य मे ख्यात-साहित्य इस काल की अपूर्व देन है। ये ख्याते अच्छी सख्या मे लिखी गई। कथा साहित्य भी इस काल में अधिक समृद्ध हुआ। जो कथाये राजस्थानी-जनता की जिह्वा पर विद्यमान थी उनको लिपिबद्ध किया गया।

१–टैसीटोरी ऑरिजिन एन्ड डेवलपमेंट आफ बगाली लैंग्वेज

इस काल में गद्य, ऐतिहासिक, कलात्मक, धार्मिक, वैज्ञानिक आदि कई रूपो मे मिलता है। ऐतिहासिक गद्य-लेखन मे चारणों और जैनियो का अधिक हाथ रहा। धार्मिक-गद्य टीका और अनुवादो के रूप मे मिलता है। गद्य शैली, विपय तथा विस्तार की दृष्टि से यह राजस्थानी-गद्य का स्वर्णयुग कहा जा सकता है।

फारसी का प्रभाव

राजस्थान में मुगल साम्राज्य के प्रभुत्व के कारण भापा पर फारसी का प्रभाव भी पड़ने लगा, जिसके फलस्वरूप सैकडों फारसी के शब्द विशेपत तद्भव रूप म राजस्थानी मे सम्मिलित हो गये। राज दरवारो से सम्बन्ध रखने वाली रचनाओं मे फारसी शब्दो का बहुत कुछ प्रयोग पाया जाता है।

ख—राजस्थानी साहित्य

राजस्थानी-साहित्य जीवन का साहित्य है। राजस्थान की भूमि सदैव ही वीर-प्रसविनी रही है। यहां के निवासियों के चरित्र, उनकी नैतिकता तथा उनका स्वाभिमान सभी आदर्श से ओतप्रोत रहे है। जीवन की छाप साहित्य पर पड़ना स्वाभाविक ही है। अत राजस्थान का जीवन ही साहित्य-मदाकिनी का आदि स्रोत वना।

राजस्थानी प्राचीन साहित्य बहुत ही विशाल एव विस्तृत है। गद्य और पद्य दोनो ही क्षेत्रो मे इसने अपना महत्व सिद्ध किया है। पद्य-साहित्य अपनी सरसता तथा प्रभावोत्पादकता सिद्ध कर चुका है। प्राचीन गद्य साहित्य जितनी मात्रा मे मिलता है उतना किसी भी प्रान्तीय-भापा मे कदाचित ही मिले।

राजस्थानी साहित्य के प्रकार

राजस्थानी-साहित्य को विपय और शैली के भेद से पांच भागो में विभक्त किया जा सकता है —

१—चारणी साहित्य

२—जैन-साहित्य

३—सत-साहित्य

४—लोक-साहित्य

५—ब्राह्मण-साहित्य

यहां चारणी-साहित्य से अभिप्राय केवल चारण जाति के साहित्य से ही नहीं है। "चारणी" शब्द को विस्तृत अर्थ में ग्रहण किया गया है। चारण, ब्रह्मभट्ट, भाट, ढाढी, ढोली आदि सभी विरुद-गायक जातियों की कृतियां और उस शैली मे लिखी गई अन्यान्य जातियों की कृतियों को भी चारणी-साहित्य मे परिगणित किया गया है। यह अधिकांशतः पद्य में है और प्रधानतया वीर-रसात्मक है। स्फुट गीतों, प्रभावोत्पादक दोहों तथा वीर-प्रबध काव्यों के रूप में उसके उदाहरण मिलते है।

राजस्थानी का जैन-साहित्य गद्य और पद्य दोनों रूपों मे है और प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध होता है। चारणी-साहित्य का अधिकांश भाग विनष्ट हो गया पर यह लिपिबद्ध होने के कारण अभी तक सुरक्षित है। जैनों की रचनाये प्राय. धार्मिक है जिनमे कथात्मक अ श अधिक है। राजस्थानी का प्राचीनतम गद्य प्रधानतया जैनो की रचना है। पद्य के क्षेत्र में जैनों ने दोहा-साहित्य का खूब निर्माण किया, जिनमे नीति, शान्त, शृ'गार आदि से सम्बन्ध रखने वाले भावपूर्ण दोहे विद्यमान है।

राजस्थान में होने वाले कई सत महापुरुषो ने भक्ति और वैराग्य सम्बन्धी साहित्य की अर्चना की है। इन सन्तों ने गद्य की रचना नहीं के बराबर की। पद्य के आधार पर ही अपनी भावनाये साधारण जनता तक पहुँचाई। जनता ने उसका खूब आदर किया।

राजस्थानी का लोक साहित्य बहुत ही अनुपम है। खेद का विषय है कि अभी तक यह प्रकाश मे नहीं आ पाया। मुख-परम्परागत होने के कारण इसका रूप परिवर्तित होता रहा है। यह साहित्य बडा ही भावपूर्ण तथा जीवन के आदर्शो से परिपूर्ण है।

ब्राह्मण-साहित्य प्रधानतया धार्मिक ग्र थो के अनुवादों तथा टीकाओ के रूप में मिलता है। भागवत आदि पुराणो तथा अन्य धर्मग्रन्थों के अनुवाद अच्छी सख्या मे उपलब्ध है।

राजस्थानी का जितना साहित्य प्रकाश मे आया उसी ने अनेक भारतीय और यूरोपीय विद्वानो का ध्यान आकर्षित कर लिया है। इन सब-

विद्वानों ने उसके महत्व को स्वीकार किया है। महामना मदन मोहन मालवीय[1], विश्व कवि रविन्द्रनाथ टैगोर[2], सर अशुतोष मुकर्जी[3],

. . .

१—राजस्थानी वीरों की भाषा है। राजस्थानी साहित्य वीरों का साहित्य है। ससार के साहित्य मे उसका निराला स्थान है। वर्तमान काल के भारतीय नवयुवकों के लिये उसका अध्ययन होना अनिवार्य होना चाहिये। इस प्राण भरे साहित्य और उसकी भाषा के उद्धार का कार्य होना अत्यन्त आवश्यक है। मै इस दिन की उत्सुक प्रतीक्षा में हूँ जब हिन्दू-विश्वविद्यालय मे राजस्थानी का सर्वाङ्ग पूर्ण विभाग स्थापित हो जायगा जिसमें राजस्थानी साहित्य की खोज तथा अध्ययन का पूर्ण प्रबन्ध होगा। —म० मो० मा०

२—कुछ समय पहले कलकत्ता मे मेरे कुछ मित्रो ने रण सम्बन्धी गीत सुनाये। उन गीतो मे कितनी सरसता, सहृदयता और भावुकता है। वे लोगों के स्वाभाविक उद्‌गार हैं। मै तो उनको सत-साहित्य से भी उत्कृष्ट मानता हूँ। क्या ही अच्छा हो अगर वे गीत प्रकाशित किये जाये। वे गीत ससार के किसी भी साहित्य और भाषा का गौरव बढा सकते है।

—र० ना० टै०

3 "But Bardic poems are also important as literary documents they have a literary value and taken to-gether from a literature, which better known, is sure to occupy a most distinguished place amongst the literature of the new Indian Varnaculars"

"They (i e the Bardic Prose Chronicles) are real and actual chronicles with no other aim in view than a faithful record of fects and their revilation is destory for ever the unjust blame that India never possessed historical genious"

—Dr Ashutosh Mukerjee

सुनीतिकुमार चटर्जी[1], डॉ॰ ग्रियर्सन[2] एल॰ पी॰ टैसीटोरी[3] आदि कई विद्वानों ने इसकी प्रशंसा की है।

—:—
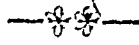
1. "There is, however, a very rich litrature in Rajasthani, mostly in Marwari . Rafasthani literature is nothing but a masage of brave flooded life and stormy death

.It was in these songs that foaming streams of infalliable energy and indomitable iron courage had flown and made the Rajput warrior forget all his personal comforts and attechment in fight for what was true, good and beautiful

The period covered by the literature extend from a little before the fourteenth centuary A D to the present day During these five and six centuraris we have scattered here and there over millians of couplets, songs and historical compositions"

—Dr. Sunit Kumar Chaterjee

2 "There is an enormous mass of literature in various forms in Rajasthani, of considerable historical importance about which hardly anything is known"

—Dr. Grearsen

3 "This vast literature flourished all over Rajputana and Gujrat wherever Rajput was lavished of his blood to the soil of his conquest"

—Dr. Tesitori.

द्वितीय-प्रकरण

राजस्थानी-गद्य साहित्य :

उसके प्रमुख विभाग और रूप

राजस्थानी गद्य-साहित्य
उसके प्रमुख विभाग और रूप

❀❀❀

राजस्थानी का गद्य साहित्य बहुत प्राचीन है । चौदहवीं शताब्दी से आज तक राजस्थानी में गद्य साहित्य की रचना होती आई है। यह प्राचीनता की ही नहीं, विस्तार की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। यदि इस सम्पूर्ण गद्य-साहित्य का प्रकाशन किया जाय तो सैकड़ों बड़ी बड़ी जिल्दे छापनी पड़े। प्राप्त गद्य के अतिरिक्त न जाने कितनी सामग्री अज्ञात हस्तलिखित ग्रन्थों मे छिपी पडी है ।

वर्गीकरणः—

राजस्थानी के सम्पूर्ण प्राप्त गद्य-साहित्य को ५ प्रमुख भागों मे विभक्त किया जा सकता है जिनमे प्रत्येक के अन्तर्गत कई रूपान्तरो का समावेश है —

१—धार्मिक-गद्य-साहित्य

क—जैन-धार्मिक-गद्य-साहित्य
ख—पौराणिक-गद्य-साहित्य

२—ऐतिहासिक-गद्य-साहित्य

क—जैन-ऐतिहासिक-गद्य-साहित्य
ख—जैनेतर ऐतिहासिक-गद्य-साहित्य

३—कलात्मक-गद्य-साहित्य

४—वैज्ञानिक-गद्य-साहित्य

५—प्रकीर्णक-गद्य-साहित्य

क—पत्रात्मक
ख—अभिलेखीय

१—धार्मिक-गद्य-साहित्य

राजस्थानी का धार्मिक-गद्य दो रूपों में मिलता है :— क—जैन और ख—पौराणिक। प्रथम में कलात्मक अ श अधिक है। र जस्थानी का प्राचीनतम गद्य प्रधानतया जैनों की रचना है। पौराणिक गद्य मे अनुवाद की अधिकता है।

क—जैन धार्मिक गद्य

इसके दो रूप है · १—टीकायें २—स्वतंत्र। जैनों के धर्म-ग्र थ प्राकृत में हैं। जब प्राकृत को समझना जनसाधारण के लिये कठिन हो गया तब जैन-आचार्यो और उनके शिष्यों ने सीधी सादी भाषा में सरल एवं बोधगम्य कथाओं के साथ उनकी व्याख्याये की, उनके अनुवाद प्रस्तुत किये तथा उनके आधार पर स्वतन्त्र कृतियों की रचनाये की। ये टीकाये दो रूपों मे मिलती हैं — १—बालावबोध २—टब्बा

१—बालावबोध :—

बालावबोध से अभिप्राय ऐसी टीका से है जो सरल और सुबोध हो। जिसे साधारण पढ़ा लिखा, अपढ़ या मन्द बुद्धि भी सरलता से समझ सके। बालावबोध में केवल मूल की व्याख्या ही नही मूल सिद्धान्तों को स्पष्ट करने वाली कथा भी होती है, यह कथा ही बालावबोध-शैली की मुख्य विशेषता है। इस प्रकार बालावबोध टीकाओं मे कथाओं का बहुत बडा सग्रह होता है। ये कथाये प्राय· परम्परागत होती है। इनमे बहुत सी कथाये बौद्ध-जातक कथाओं की भांति लोक-कथा-साहित्य से ली हुई है। कुछ कथाये प्रसगानुसार नई भी गढ़ ली जाती है। इन कथाओ के द्वारा जन-साधारण का ध्यान धर्म-चर्चा मे लगाया जाता है। कथा के अन्त मे कुछ कुछ जातक-कथाओं की भांति, उससे मिलने वाली धार्मिक शिक्षा का उल्लेख होता है। आरम्भ और मध्य मे जैन धर्म सम्बन्धी कोई विशेषता नही होती। अन्त मे वह धार्मिक रूप ग्रहण करती है। ये बाला.बोध सैकडों की सख्या में लिखे गये और जैन जनता मे खूब लोकप्रिय हुये।

२—टब्बा :—

यह बालावबोध से बहुत सक्षिप्त होता है। इसमें मूल शब्द का अर्थ उसके ऊपर, नीचे या पार्श्व मे लिख दिया जाता है

इन दोनों रूपों मे वालाववोध का लेखन ही अधिक हुआ। ये वालाववोध टीकाये निम्नलिखित जैन-धार्मिक ग्र थों पर मिलती है :—

क अग, ख उपांग, ग मूल सूत्र, घ स्तोत्र ग्र थ, च. चरित्र ग्रंथ, छ दार्शनिक ग्रंथ, ज प्रकीर्णक

क. आगम ग्रंथ–अंग

१ आचारांग —जैन धर्म के वारह अगों मे से पहला अग है श्रमण निर्ग्रन्थ के प्रशस्त आचार गौचरी, वैनयिक, कायोत्सर्गादि स्थान बिहार भूमि आदि मे गमन, चक्रमण, आहारादि पदार्थों की माप, स्वाध्यायादि मे नियोग, भाषा, समिति, गुप्ति, शैया, पान आदि दोषों की शुद्धि, शुद्धाशुद्धआहारादि ग्रहण, व्रत, नियम तप, उपधान आदि इसके विषय है।

२ सूत्रकृतांग :—यह जैन धर्म का दूसरा अ ग है जिसमे जैनेतर दर्शन की चर्चा भी है। अन्य दर्शन से मोहित, सदिग्ध तथा नवदीक्षितो की बुद्धि-शुद्धि के लिए १८० क्रियावादी, ८४ अक्रियावादी, ६७ अज्ञानवादी ३२ विनयवादी लोगो के मतो का उल्लेख है।

वालाववोधकार : पार्श्वचन्द्र

३ व्याख्या प्रज्ञप्ति (भगवती):—यह जैन धर्म का पांचवा अ ग है। जीव, अजीव, जीवाजीव, लोक, अलोक, लोकालोक, विभिन्न प्रकार के देव, राजा, राजर्षि सम्बन्धी अनेक गौतमादि द्वारा पूछे गये प्रश्न और श्री महावीर द्वारा दिये गये उनके उत्तर इसके विषय हैं। द्रव्यानुयोग, तत्व विचार का प्रधान ग्र थ है।

अज्ञात लेखक की वालाववोध (रचना काल स० १७०७)

४ उपासक दशांक :—यह जैन धर्म का सातवा अ ग है, जिसमे भगवान महावीर के दस श्रावको का जीवन-चरित्र है।

वालाववोधकार : विवेकहस उपाध्याय

५ प्रश्न व्याकरण —यह दसवा अ ग है। प्रथम पांच अध्याय मे हिंसा आदि पाच आश्रवो का तथा अन्तिम पाच मे सवर मार्ग का वर्णन है।

ख. उपांग ग्रंथ :—

१. औपपातिक (उववाई) यह एक वर्णन प्रधान ग्रंथ है जिसमें चम्पानगरी, पूर्णभद्र चैत्य, वन खंड, अशोक वृक्ष आदि के वर्णन के साथ साथ तापस, श्रमण, परिव्राजक आदि का स्वरूप बताया गया है।

बालावबोधकार : मेघराज : पार्श्वचन्द्र

२. रायपसेणी (राजप्रश्नीय) :—इसमें श्रावस्ती नगरी के नास्तिक राजा प्रदेशी तथा पार्श्वनाथ के गणधर केशीकुमार के मध्य में हुए आत्मा-परमात्मा एवं लोक-परलोक सम्बन्धी संवाद है।

बालावबोधकार : पार्श्वचन्द्र

मूल सूत्र :—

ये वे ग्रंथ हैं जिनका मूल रूप में अध्ययन सब साधुओं के लिये आवश्यक है।

१—षडावश्यक :—इसमें जैन मत के ६ आवश्यक कर्मों का विवेचन है जिनका पालन करना आवश्यक कहा गया है। ये आवश्यक कर्म इस प्रकार हैं — १-सामायिक –सावद्य अर्थात् पाप कर्म का परित्याग एवं सम भाव ग्रहण। २-चतुर्विंशतिस्तव :-जैन-धर्म के चौबीस तीर्थंकरों की स्तुति। ३-गुरुवंदन ४-प्रतिक्रमण –पापों की गर्हणा ५-कार्योत्सर्ग ध्यान। ६-प्रत्याख्यान –आहार आदि से सम्बन्ध रखने वाले व्रत-नियम।

षडावश्यक पर बालावबोध रचनायें सबसे अधिक हुई हैं। उपलब्ध बालावबोधों में सर्व प्रथम बालावबोध इसी पर है जिसकी रचना आचार्य तरुणप्रभ सूरि ने सं० १४११ में की थी।

बालावबोधकार : सर्व श्री तरुणप्रभ सूरि, हेमहंस गणि, मेरुसुन्दर आदि

२—साधु प्रतिक्रमण :—में जैन साधुओं के निशि दिन में लगने वाले दोषों से मुक्त होने की क्रिया है।

बालावबोधकार पार्श्वचन्द्र

३—दशवैकालिक–में जैन साधुओं के आचारों का वर्णन है।

बालावबोधकार : पार्श्वचन्द्र, सोमविमल सूरि, रामचन्द्र

४—पिण्डविशुद्धि :–इसमें जैन साधुओं के आहार-ग्रहण एव आहार शुद्धि की विधि का उल्लेख है।

बाला० लेखक : सवेगदेव गणि

५—उत्तराध्ययन –में भगवान महावीर के अन्तिम समय के उपदेशों का सग्रह है।

बालावबोधकार . मानविजय . कमललाभ उपाध्याय

ग. स्तोत्र ग्रंथ :—

१—भक्तामर :–यह प्रथम जैन तीर्थंकर ऋषभदेव का स्तोत्र ग्र थ है। इसकी रचना मानतु गाचार्य ने भोज के समय मे की। इसमें कुल ४४ श्लोक है। प्रथम श्लोक के प्रथम शब्द "भक्तामर" के आधार पर इसका यह नाम पडा।

बालावबोधकार ,- सोमसुन्दर सूरि : मेरुसुन्दर

२—अजितशान्ति स्तवन–मे दूसरे तीर्थ कर अजितनाथ एव सोलहवे तीर्थ कर शान्तिनाथ का सयुक्त स्तवन है।

बालावबोधकार : मेरुसुन्दर

३—कल्याणमन्दिर '–में तेइसवे जैन तीर्थ कर भगवान पार्श्वनाथ की स्तुति है।

बालावबोधकार : मुनिसुन्दर शिष्य

४—शोभन स्तुति '–इसमे शोभन मुनि कृत २४ तीर्थंकरों की यमक बद्ध स्तुतिया है। मूलग्र थ सस्कृत में है।

बालावबोधकार ' भाणविजय

ऋषभ पचाशिका –यह महाकवि धनपाल द्वारा रचित पहले तीर्थंकर ऋषभदेव की स्तुति है।

५—रत्नाकर पचविशति '–इसकी रचना आचार्य रत्नाकर ने की है जिसमें भगवान के सम्मुख आत्म-आलोचना की गई है।

बालावबोधकार : कु वर विजय

घ. चरित्र ग्रंथ :—

१—कल्पसूत्र '-इसके अन्तर्गत अ-तीर्थंकर चरित्र, आ-आचार्य-पट्टावलि और इ-साधु-समाचारी ये तीन प्रकरण हैं। श्री महावीर के चरित्र का इसमे विस्तार से वर्णन है।

बालावबोधकार : हेमविमल सूरि : सोमविमल सूरि, शिवनिधान आर्स चन्द्र.

इनके अतिरिक्त महावीर चरित्र, जम्बू स्वामी चरित्र तथा नेमिनाथ चरित्र पर क्रमशः लक्ष्मीविजय, भानुविजय तथा सुशीलविजय ने बालावबोध की रचनाये की।

च. दार्शनिक ग्रंथ :—

विचार-सार-प्रकरण '—में जैनधर्म के तत्वों मोक्ष, हिसा, अहिसा, जीव, अजीव, पाप, पुण्य आदि का विचार हुआ है।

२—योग-शास्त्र –इसमें जैन दर्शन-मान्य अष्टांग योग का चित्रण है।

बालावबोधकार : सोमसुन्दर सूरि

३—कर्मविपाकादि कर्मग्रंथ यह जैन दर्शन के कर्मवाद के ग्रंथ है। इनमें क्रिया के परिणाम-स्वरूप आत्मा पर पड़ने वाले सस्कारों का विवेचन है।

बालावबोधकार यशः सोम

४—सग्रहणी '–संग्रहणी मे जैनदर्शन की भौगोलिक बातों आदि का संग्रह किया है। टब्बाकार ' नगर्षि (तपागच्छ)। सम्वत् १६१६ का लिखा हुआ एक अज्ञात लेखक कृत बालावबोध प्राप्त है।[1]

छ. प्रकीर्णक :—

१—उपदेशमाला –इसमें भगवान महावीर द्वारा दीक्षित श्री धर्मदास गणि के रचित उपदेशों का संग्रह है।

बालावबोधकार . सोमसुन्दर सूरि नन्न सूरि.

....

१—अभय जैन पु० बीकानेर

२—भवभावना –में संसार के स्वरूप पर विचार किया गया है।
बालावबोधकार माणिक्य सुन्दर गणि

३—चौशरण (चतु शरण) · अरिहन्त, सिद्ध, साधु और केवली द्वारा प्रणीत धर्म, इन चारों की शरण जैन मत स्वीकार करता है। इन्हीं से सम्बन्धित विषय ही इस ग्रंथ में है।
टब्बाकार सवेगदेव तथा बालावबोधकार : जैचन्द्र सूरि

४—गौतमपृच्छा. मे गौतम स्वामी द्वारा भगवान महावीर से पूछे गये प्रश्नों और भगवान महावीर द्वारा दिये गये उत्तरों का सग्रह है। यह प्रश्न पाप और पुण्य के फल से सम्बन्धित हैं।
बालावबोधकार जिनसूरि (तपागच्छ)

५—क्षेत्र समास –मे जैन धर्म की दृष्टि में भूगोल का वर्णन है जिसमे उर्ध्व, अधस् और तिर्यक् तीनों लोकों का विवरण है।
बालावबोधकार उदयसागर, मेघराज, दयासिह आदि

६—शीलोपदेश माला –में ब्रह्मचर्य के सिद्धान्तो का प्रतिपादन और उसके महत्व का स्थापन कथाओं के द्वारा किया गया है।
बालावबोधकार : मेरुसुन्दर

७—पंच निर्ग्रंथी '–में पुलाक, बकुल, कुशील, स्नातक एव निर्ग्रन्थ इन पांच प्रकार के साधुओं के लक्षण बताये गये हैं।
बालावबोधकार · मेरुसुन्दर

८—सिद्ध पचाशिका –मे जैन धर्म के सिद्ध सम्बन्धी वर्णन है।
बालावबोधकार : विद्यासागर सूरि

आ—स्वतन्त्र

इन टीकाओं के अतिरिक्त राजस्थानी गद्य मे जैनों का स्वतन्त्र धार्मिक-साहित्य भी अच्छी मात्रा मे मिलता है उसके कुछ प्रकारों का उल्लेख नीचे किया जाता है।

१—व्याख्यान :–इनमें धार्मिक पर्वो को मनाने की विधि तथा अनुष्ठान सम्बन्धी आचार विचारों को दृष्टान्त देकर समझाया जाता है। पर्वो के अवसरों पर इसका पठन–पाठन करने का प्रचलन है।

२—विधि विधानः—कर्मकाण्ड के ग्रंथ हैं। इनमें पूजाविधि, सामायिक तपश्चर्या, प्रतिक्रमण, पौषध, उपधान, दीक्षाविधि आदि का वर्णन होता है।

३—धार्मिक कहानियां :—जैन-आचार्य ने धर्म-शिक्षा में कहानियों का प्रचुर प्रयोग किया है। इन कहानियों के अनेक सग्रह मिलते हैं।

४—दार्शनिक ;—जैन दर्शन शास्त्र पर अनेक छोटी रचनायें मिलती हैं।

५—खण्डन-मण्डन :—इनमें अन्य धर्मों का एव अन्य मतों का या सम्प्रदायों के सिद्धान्तों का खण्डन तथा अपने मत के सिद्धान्तों का जैन आचार्यों द्वारा मंडन होता है।

६—सिद्धान्त सारोद्धार :—में जिन प्रतिमा पूजादि मान्यताओं की सप्रमाण चर्चा है।

ख—पौराणिक धार्मिक-गद्य-साहित्य

पौराणिक धार्मिक गद्य-साहित्य पौराणिक-ग्रंथ या उसके आधार पर लिखे गये रामायण, महाभारत, भागवत, व्रतकथा, महात्म्य, धर्मशास्त्र, कर्मकाण्ड स्तोत्र आदि के अनुवादों के रूप में मिलता है। अधिकांश उपलब्ध अनुवाद सत्रहवीं शताब्दी के पीछे के ही हैं। जैन धार्मिक साहित्य की भांति यह न तो अधिक प्राचीन ही है और न विस्तृत ही।

२—ऐतिहासिक-गद्य-साहित्य

क—जैन-ऐतिहासिक-गद्य

जैन विद्वानों ने ऐतिहासिक गद्य का भी निर्माण किया है यह प्रमुखत. पांच रूपों में प्राप्त है :—

अ—पट्टावली

इसमे जैन-आचार्यों की परम्परा का इतिहास होता है। पट्टधर आचार्यों का वर्णन विस्तार से रहता है। पट्टावली लिखने की परिपाटी प्राचीन है। सस्कृत एव प्राकृत में लिखी गई पट्टावलियां भी मिलती हैं। राजस्थानी गद्य में लिखी गई पट्टावलियां पर्याप्त सख्या मे विद्यमान हैं।

आ—उत्पत्ति ग्रंथ

इन ग्रथो में किसी मत, गच्छ आदि की उत्पत्ति का इतिहास रहता है। मत विशेष किस प्रकार प्रचलित हुआ, उसके प्रथम आचार्य कौन थे, उस मत ने अपने विकास की कितनी अवस्थाये प्राप्त कीं तथा ऐसी ही अन्य बातों का वर्णन होता है।

इ—वंशावली

इनमे किसी जाति विशेष की वश-परम्परा का वर्णन होता है। इन वशावलियो को लिखने और सुरक्षित रखने के लिये कई जातियां ही बन गई जिनको महात्मा, कुलगुरु, भाट आदि नामों से पुकारा जाता है।

ई—दफ्तर बही

इसमे समय समय के विहार दीक्षादि की घटनाओं को जानकारी के रूप में लेख-बद्ध किया जाता था। इसे एक प्रकार की डायरी ही समझिये।

उ—ऐतिहासिक टिप्पण

जैन-आचार्य अपने युग मे ऐतिहासिक विषयों का सग्रह भी करते रहते थे यह सग्रह छोटी छोटी टिप्पणियो के रूप मे होता था। इनके विषयो मे अनेक-रूपता मिलती है।

ख—जैनेत्तर-ऐतिहासिक-गद्य

जैनेतर ऐतिहासिक साहित्य भी अनेक रूपो मे मिलता है जिनमें से प्रमुख रूपों का उल्लेख नीचे किया जाता है :—

१—ख्यात :—

ख्यात शब्द सस्कृत के "ख्याति" (प्रसिद्धि) का तद्भवरूप है इसका सम्बन्ध "आख्याति" (वर्णन) से भी जोडा जा सकता है। श्री गौरीशकर हीराचन्द ओझा के अनुसार राजपूताने मे ख्यात ऐतिहासिक गद्य रचना को कहा जाता है,[1] ख्यात मे राजपूत राजाओं का इतिहास या प्रमुख

१—ओझा : नैणसी री ख्यात : भाग दो : भूमिका :

घटनाओं का संकलन वंश-क्रमानुसार या राज्य-क्रमानुसार रहता है।

ख्यातें दो प्रकार की मिलती हैं १—व्यक्तिगत जैसे "नैणसी की ख्यात" "बांकीदास की ख्यात" और "दयालदास को ख्यात"। २—राजकीय. इनके लेखक सरकारी कर्मचारी मुत्सद्दी या पचोली होते थे जो नियमित रूप से घटनाओं का विवरण लिपिबद्ध करते थे।

यह बात तो नही है कि इन ख्यातों को वैज्ञानिक इतिहास कहा जा सके, क्योंकि प्राचीन इतिहास मे अनेक स्थानों पर किवदन्तियों का आधार दिखाई पड़ता है और समकालीन इतिहास में भी अतिरजना का प्रयोग एवं निष्पक्षता का अभाव पाया जाता है जैसाकि मुसलमानी लेखकों की ख्यातों में भी होता है, पर समकालीन और निकट प्राचीन कालीन-इतिहास के लिए यह ख्यातें विश्वसनीय मानी जा सकती हैं। ख्यातें कई प्रकार की होती हैं जैसे १–जिनमें लगातार इतिहास होता है, यथा "दयालदास की ख्यात"। २–जिनमें बातों का सग्रह होता है, यथा "नैणसी की ख्यात" तथा ३–जिनमें छोटी छोटी स्फुट टिप्पणियों का सकलन होता है, यथा "बांकीदास की ख्यात" आदि।

२–बात :–

राजस्थान में "बात" कथा या कहानी का पर्याय है। यह दो प्रकार की होती हैं। १–जिनमें किसी एक ही ऐतिहासिक घटना अथवा व्यक्ति विशेष की जीवनी का विवरण होता है। ये बातें कथाओं से भिन्न होती हैं। उदाहरणतः "नागौर रे मामले री बात" "रावजी अमरसिंहजी री बात" आदि। २–यादद़ाश्त के रूप में लिखी गई छोटी छोटी टिप्पणियो को भी बात कहा जाता है। जैसे 'बांकीदास की बातें" में सग्रहीत बातें। इनमें अनेक बातें एक एक दो दो पक्तियों की भी है।

३–पीढ़ियावली (वंशावली):–

ये ख्यातों की अपेक्षा प्राचीन हैं, आरम्भ मे इनमे वश मे होने वाले व्यक्तियों के नाम ही क्रमश सग्रहीत होते थे पर आगे चलकर नामों के साथ उनके महत्वपूर्ण कार्यो और उनके जीवनकाल से सम्बन्ध रखने वाली महत्वपूर्ण घटनाओं का भी उल्लेख किया जाने लगा। राजवशों के अतिरिक्त सेठ साहूकारों, सरदारों आदि की वशावलियां भी मिलती है। उदाहरणत

राठोड़ॉ री वंसावली, बीकानेर रा राठौड़ां राजावां री वंसावली, खीचीवाड़ा रा राठौड़ां री पीढियां, सीसोदियां री वंसावली, ओसवालां री वंसावली आदि।

४–हाल, अहवाल, हगीगत, याददाश्त :–

इनमे घटनाओ का विस्तार पूर्वक वर्णन होता है । जैसे–सांखलां दहियां सूं जांगलू लियो तैंरो हाल, पातसाह औरंगजेब री हगीगत, घाटी राह री हगीगत, राव जोधाजी वेढां री याद इत्यादि ।

५–विगत :–

विगत का अर्थ है विवरण । इसमे विभिन्न गांव, कुवें, गढ़, बाग के वृक्ष आदि की नामावलियां या सूची टिप्पणियों के साथ पाई जाती है जैसे चारण रा सांसणा री विगत, महाराजा तखतसिंघ जी रे कवरां री विगत, जोधपुर रा देवस्थानां री विगत, जोधपुर रा वागायत री विगत, जोधपुर रा निवाणां री विगत इत्यादि ।

६–पट्टा परवाना राजकीय अधिकार पत्र एवं आज्ञापत्र :–

राजाओ के द्वारा दी गई जागीरों का अधिकार-पत्र और उसका विवरण पट्टा तथा राजकीय आज्ञा-पत्र को परवाना कहते है । जैसे परधाना रो तथा उमरावा रो पट्टो, महाराजा अनूपसिंह जी रो आनन्द राम रे नाम परवानो आदि ।

७–इलकाब नामा :–

पत्र व्यवहार के संग्रह को इलकाब नामा कहा जाता है । राजस्थानी मे इस प्रकार के कई संग्रह मिलते है ।

८-जन्म-पत्रियां :–

इनमे प्रसिद्ध पुरुषों की जन्म कुण्डलियों का संग्रह पाया जाता है । उदाहरणत: राजा री तथा पातसाहां री जन्म-पत्रियां ।

९–तहकीकात :–

इसमें किसी मामले की छानबीन से सम्बन्ध रखने वाले पक्ष-विपक्ष के प्रश्नोत्तरों का संग्रह होता है । उदाहरणत. जयपुर वारदात री तहकीकात री पोथी ।

३–कलात्मक गद्य साहित्य

अ–बात :–

बात संस्कृत "वार्ता" से बना है जिसका अर्थ कथा है। राजस्थान में बातें बहुत प्राचीनकाल से कही और सुनी जाती रही हैं। सत्रहवीं शताब्दी के अन्त या अठारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में राजस्थानी-कथाओं को लिपिबद्ध किये जाने के प्रयास होने लगे। इससे पूर्व या तो वे लिखी ही नहीं गई या इससे पूर्व की लिखी कथायें हस्तलिखित ग्र थों के नष्ट हो जाने से प्राप्त नहीं हैं।

आ–दवावैत :–

दवावैत अन्त्यानुप्रास रूप गद्य जाल है। अन्त्यानुप्रास, मध्यानुप्रास या अन्य किसी प्रकार के सानुप्रास या यमक युक्त गद्य का प्रकार दवावैत के नाम से पुकारा जाता है।[1] इसके दो भेद माने गये हैं। १–शुद्ध बंध – जिसमें अनुप्रास मिलाया जाता है मात्राओं का नियम नहीं होता। जैसे :–

प्रथम ही अयोध्या नगर जिसका वणाव।
बारै जौजन तो चौडे सोलै जोजन की घाव।
चौ तरफ के फैलाव, चौसठ जोजन कै फिराव।
तिसके तलै सरिता सरिजू कै घाट
अत उतावल सू बहै, चोसर कोसों के पाट।[2]

२–गद्यबंध—इसमें अनुप्रास नहीं मिलाये जाते। २४ मात्रा का पद होता है जैसे :—

हाथियों के हल्के खमू गणाते खोले, आरावत के साथी भद्र जाति के टोले। अत देऊ के दिग्गज, विंध्याचल के सुजाव, रंग रग चित्रे सु डा डड के वणाव। झूल की जलूस, वीर घटू के ठणके, बादलों की जगमगा भरे भौरो की मकी मणके। कल कश्मू के लगर भारी कनक की हूँस जवाहर जेहर दीपमाला की रूस भालू के आडम्बर।[3]

.. ..

१—मंछ कवि : रघुनाथ रूपक गीतां रो पृ० २३६
२—कवि मंछ : रघुनाथ रूपक गीतां रो पृ० २३७
३—वही : पृ० २४०

इ–वचनिका :–

ये वचनिकाये भी दवावैत का ही भेद मालूम होती है। इतना सा भेद मालूम होता है कि वचनिका कुछ लम्बी और विस्तृत होती है। इसके भी दो भेद हैं—१–गद्यबंध:—में कई छंदों के युग्म वचनिका रूप में जुड़े चले जाते हैं।[1] २–पद्यबंध :—के दो भेद (अ) वारता (आ) वारता मे मुहरा राखना।

वचनिका यद्यपि गद्य रचना है तथापि यह चंपू रूप मे मिलती है अर्थात गद्य के साथ साथ पद्य का प्रयोग भी इनमें मिलता है।

ई–वर्णक-ग्रंथ :–

इनको यदि वर्णन-कोष कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं होगी। इन वर्णनों का उपयोग किसी भी कलात्मक रचना के लिये किया जा सकता है। जैसे यदि नगर, विवाह, भोज, ऋतु, युद्ध, आखेट आदि का वर्णन करना हो तो इन ग्रंथों मे आये हुये अंश का उपयोग वहां पर किया जा सकता है। राजान राउत रो वात-वणाव, खीची गगेव नीं बावत रो दो पहरो, मुत्कलानुप्रास, कुतूहल, सभा शृंगार आदि इसी प्रकार के ग्रंथ हैं।

४–वैज्ञानिक-गद्य-साहित्य

राजस्थानी गद्य मे वैज्ञानिक साहित्य या तो अनुवाद के रूप में मिलता है या टीका रूप मे। स्वतंत्र रूप से इस प्रकार का गद्य बहुत कम है। आयुर्वेद, ज्योतिष, शकुनावली, सामुद्रिक-शास्त्र, तंत्र, मंत्र आदि अनेक विषयों के संस्कृत ग्रंथों के राजस्थानी अनुवाद या इन्हीं के आधार पर लिखी हुई राजस्थानी-गद्य की रचनाये मिलती हैं।

५–प्रकीर्णक-गद्य-साहित्य

क–पत्रात्मक :–

इन पत्रों के विषय एव प्रकारों के कई रूप हैं इनको इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है :—

.. ..

१- कवि कृष्ण : रघुनाथ रूपक गीतां रो : पृ० २४२

१—जैन-आचार्यों से सम्बन्ध रखने वाला पत्र-व्यवहार
२—राजकीय पत्र-व्यवहार
३—व्यक्तिगत पत्र-व्यवहार

१—पहले प्रकार के अन्तर्गत १-आदेश पत्र, २-विनती या विज्ञप्ति पत्र महत्वपूर्ण हैं। आदेश पत्रों के द्वारा आचार्य अपने शिष्यों को चातुर्मास आदि करने का आदेश देते थे। विनती या विज्ञप्ति पत्र श्रावकों के द्वारा आचार्यों को प्रार्थना पत्र के रूप में लिखे जाते थे जिनमें किसी स्थान के श्रावकों द्वारा आचार्यों से अपने स्थान की ओर विहार या चातुर्मास करने का आग्रह होता था। विज्ञप्ति पत्र बड़ी कला के साथ तैयार करवाये जाते थे। कुछ के आरम्भ में सम्बन्धित नगर के सैकड़ों कलापूर्ण चित्र होते थे।

२—इसके अन्तर्गत राजाओं के पारस्परिक पत्र अंग्रेज सरकार को भेजे गये पत्र आदि आते है।

३—तीसरे प्रकार के अन्तर्गत विभिन्न व्यक्तियों के पारस्परिक व्यक्तिगत पत्र आते हैं। जैन-सग्रहों तथा राजकीय कर्मचारियों आदि के व्यक्तिगत सग्रहों में इस प्रकार के अनेक प्राचीन पत्र मिलते है।

ख-अभिलेखीय :-

प्रशस्ति लेख, शिलालेख, ताम्रपत्र आदि इस प्रकार के अन्तर्गत हैं। इनके लिखने की परिपाटी प्राचीन रही है। प्रशस्ति लेख जैन आचार्यों की प्रशस्ति में लिखे जाते थे। शिलालेख प्राय राज्याश्रय में राजा की आज्ञानुसार लिखे गये हैं। जैसाकि नाम से प्रकट है पाषाण-खडों पर खोद कर लिखा जाना शिला-लेख कहलाता है। ताम्रपत्र भी प्राय राजाओं द्वारा ही प्रयुक्त होते थे। इन ताम्रपत्रों (धातु विशेष के बने हुए पत्रों) पर नरेश अपनी आज्ञा या दानादि का विवरण लिखवाते थे।

इस अभिलेखन के लिये प्रधानत: सस्कृत का प्रयोग अधिक मिलता है। राजस्थानी में भी इस प्रकार का गद्य प्राप्त है।

—:ॐ:—

काल विभाजन

राजस्थानी गद्य साहित्य के विकास को निम्नलिखित ३ कालों में विभाजित किया जा सकता है :—

१—प्राचीनकाल

क-प्रयास-काल स० १३०० से स० १४०० तक

ख–विकास-काल स० १४०० से सं० १६०० तक

२—मध्यकाल—(विकसित काल) स० १६०० से स० १९५० वि० तक

३—आधुनिक काल—(नवजागरण काल) स० १९५० से अब तक

"प्रयास-काल" का महत्व उसकी प्राचीनता की दृष्टि से है। इस काल मे गद्य-शैली के कई प्रयोग हुए। ये सभी प्रयोग स्फुट टिप्पणियों के रूप मे प्राप्त हैं। प्राकृत एव अपभ्र श-गद्य के उपरान्त राजस्थानी-गद्य का यह स्वरूप विशेष रूप से उल्लेखनीय है। किस प्रकार लेखकों ने अपनी शैली प्रतिपादित की, किस प्रकार शब्द-योजना की रूपरेखा बनी आदि बातों पर इस काल की रचनाओं द्वारा प्रकाश पडता है।

"विकास काल' मे गद्य का रूप स्थिर हुआ। शैली परिवर्तित हुई। भापा मे प्रवाह आया। अब तक केवल स्फुट टिप्पणिया, स्मृति-लेखों (याददाश्त) के रूप मे ही लिखी गई थी किन्तु अब ग्र थ भी लिखे जाने लगे। इस काल मे जैनो द्वारा लिखित धार्मिक साहित्य की प्रधानता रही, जिसमे वालावबोध-शैली विशेप रूप से उल्लेखनोय है। औक्तिक ग्र थ (व्याकरण ग्र थ) भी लिखे गये। कई एक सुन्दर कलापूर्ण साहित्यिक रचनाये भी इस काल मे हुई जो जैन और चारणी दोनो शैलियों की हैं। ऐतिहासिक गद्य के उदाहरण भी सामने आये। अनुवाद भी हुए जिनके कुछ नमूने उपलब्ध है। राजस्थानी-गद्य के विकास की दृष्टि से यह युग महत्वपूर्ण है।

"विकसित काल" राजस्थानी गद्य का स्वर्ण-काल है। इस काल मे भापा प्रौढ और परिमार्जित हुई। वर्ण्य-विपय बदले। गद्य का सर्वतोमुखी विकास हुआ। कलात्मक, ऐतिहासिक, धार्मिक, वैज्ञानिक आदि कई रूपों मे राजस्थानी-गद्य का प्रयोग हुआ। वचनिका, दवावैत, मुक्तानुप्रास आदि शैलियों में गद्य रचनाये की जाने लगीं। मौलिक, टीका एव अनुवाद इन

तीनों रूपों में गद्य को स्थान मिला। अभिलेखीय तथा पत्रात्मक गद्य भी इस काल में प्रभूत मात्रा में तैयार हुआ जिसका विशाल संग्रह विविध राज्यों के तथा अनेक व्यक्तियों के व्यक्तिगत संग्रहालयों में उपलब्ध है। प्राचीनकाल की रचनाये प्रधानतः जैन-लेखकों की कृतियां हैं पर मध्यकाल में जैनेतर-गद्य भी प्रचुर मात्रा में लिखा गया।

विकास काल के अन्तिम चरण में राजस्थानी गद्य लेखन शिथिल पड़ गया "नव जागरण काल" में उसकी उन्नति के लिये पुनः प्रयत्न आरम्भ हुये और नाटक, उपन्यास, कहानी, रेखाचित्र आदि क्षेत्रों में उसका अच्छा विकास हो रहा है। निबन्ध के क्षेत्र मे वह अभी आगे नहीं बढ़ पाया है। आशा है इस कमी की पूर्ति भी शीघ्र ही हो जायगी।

तृतीय - प्रकरण

राजस्थानी - गद्य का विकास (१)

प्राचीन - राजस्थानी - काल

(सं० १३०० वि० से सं० १६०० वि० तक)

प्राचीन - राजस्थानी - काल

नित्य प्रति जीवन मे काम आने वाली भाषा "बोली" कहलाती है। यह तनिक भी साहित्यिक नही होती और बोलने वालों के मुख में रहती है।[1] इसी बोली का साहित्यिक रूप गद्य कहलाता है।

भारतीय साहित्य के इतिहास मे गद्य-साहित्य को "चक्रनेमिक्रम" से बराबरी से ऊपर उठता और नीचे गिरता पाते है। अतः सहिता-काल में जहां पद्य का प्राधान्य है वहां ब्राह्मण-काल मे गद्य का और उपनिषद्-काल में पुनः पद्य का। लौकिक सस्कृत मे भी, रामायण और महाभारत के समय का सारा साहित्य पद्य मे ही है, जबकि उसके परवर्ती-काल मे सारा सूत्र-साहित्य गद्य मे ही मिलता है। बौद्ध और जैन-गद्य इस काल में अधिक मिलता है अपभ्रंश-काल मे वह फिर लुप्त हो गया।

देशी भाषा का गद्य–

विक्रम की सातवी शताब्दी से ग्यारहवी शताब्दी तक अपभ्रंश की प्रधानता रही और फिर वह पुरानी हिन्दी मे परिणत हो गई इसमे देशी भाषा की प्रधानता है।[2] नवीं शताब्दी से ही बोलचाल की भाषा में सस्कृत के तत्सम शब्द आने लगे थे।[3] किन्तु देशी भाषा के गद्य के उदाहरण तेरहवीं शताब्दी से पहले के नहीं मिलते। "उक्ति व्यक्ति प्रकरण"[4] देशी-भाषा गद्य का सबसे प्राचीन उदाहरण है। इसके रचयिता दामोदर भट्ट गाहड़वार राजा गोविन्दचन्द्र के सभा पडित थे। सम्भवत राजकुमारों को काशी-कान्यकुब्ज की भाषा सिखाने के लिये इसकी रचना की गई।[5] गोविन्द चन्द्र का राज्यकाल सन् ११५४ ई० तक था।[6] इस प्रकार विक्रम की बारहवी शताब्दी की बनारस के आसपास के प्रदेश की भाषा का स्वरूप इसमे देखा जा सकता है।

१—श्यामसुन्दर दास भाषाविज्ञान —स० २००६ पृ० २२
२—चन्द्रधर शर्मा गुलेरी . पुरानी हिन्दी
३—हजारीप्रसाद द्विवेदी : हिन्दी साहित्य का आदिकाल पृ० २०
४—पाटन केटलौग आफ मेन्युस्क्रिप्ट्स पृ० १२८
५—हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य का आदि काल पृ० २८
६—हजारीप्रसाद द्विवेदी : हिन्दी साहित्य का आदिकाल पृ० ८

कहा जाता है कि गोरखनाथ के गद्य को लगभग स० १४०० के आसपास के ब्रजभाषा गद्य का नमूना मान सकते हैं।[1] मिश्रबन्धु गोरखनाथ का समय स० १४०७ निश्चित करते है।[2] किन्तु राहुल सांकृत्यायन उसे मानने में विवश हैं उनके अनुसार गोरखनाथ विक्रम की दसवी शताब्दी में विद्यमान थे[3] अतः गोरखनाथ का समय सर्वसम्मति से निश्चित नही हो पाया है। दूसरी बात गद्य के सम्बन्ध मे है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने गोरखमाथ के ब्रजभाषा-गद्य के जो उदाहरण दिये है[4] उनकी पुष्टि का कोई सबल प्रमाण नहीं मिलता। इन रचनाओं का गोरखनाथ की कृतियां होना संभव नही जान पड़ता[5] अत. इस गद्य की प्रामाणिकता संदिग्ध है।

चौदहवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में लिखित मैथली-गद्य के उदाहरण ज्योतिरीश्वर ठाकुर की "वृत्त रत्नाकर" में मिलने है इसका आनुमानिक रचना काल विक्रम की चौदहवीं शताब्दी का तृतीय-चतुर्थांश है।[6] इसमें सात वर्णन हैं.— १—नगरवर्णन २—नायिका वर्णन ३—स्थान वर्णन ४—ऋतु वर्णन ५—प्रयानक वर्णन ६—भट्टादि वर्णन ७- श्मशान वर्णन[7]। इन वर्णनों में प्रौढ़ मैथली-गद्य का प्रयोग है जिससे अनुमान किया जा सकता है कि इससे पूर्व भी गद्य रचना होती रही होगी। पद्रहवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में विद्यापति ने भी अपनी "कीर्तिलता" मे मैथली-गद्य का प्रयोग किया है।[8]

मराठी-गद्य के उदाहरण भी लगभग इसी समय के मिलते है। "वैजनाथ कलानिधि"[9] प्राचीन मराठी-गद्य का उदाहरण है। यह ताड़पत्र

१—रामचन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास स० १९९९ पृ० ४३८
२—मिश्रबन्धु मिश्रबन्धु विनोद भाग १ पृ० २११
३—नागरी प्रचारिणी पत्रिका भाग ११ अ क ४ पृ० ३८९
४—रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास स० १९९९ पृ० ४३९
५—अगरचन्द नाहटा : कल्पना मार्च स० १९५३ पृ० २११
६—सुनीतिकुमार चटर्जी ' वृत्त रत्नाकर : अ गरेजी भूमिका पृ० १
७—बाबू मिश्र : वृत्त रत्नाकर मैथिली भूमिका पृ० ४
८—रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास स० १९९९ पृ० ६६
९—पाटन केटेलौग आफ मेन स्क्रिप्ट्स पृ० ७५

पर लिखी हुई है। इसका आनुमानिक समय पंद्रहवी शताब्दी का अंतिमांश है। इस प्रकार देशीभाषा-गद्य के उदाहरण चौदहवी शताब्दी से मिलने लगते हैं। राजस्थानी मे भी प्राप्त गद्य इसी शताब्दी के पूर्वार्द्ध का प्रयास है।

—❀❀—
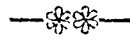
जैन विद्वानों का हाथ–

राजस्थानी भाषा की उन्नति के साथ साथ गद्य-साहित्य का भी उत्थान हुआ। राजस्थानी-गद्य-साहित्य के आरम्भ और उत्थान मे जैन विद्वानो का बहुत हाथ रहा है। अपने धार्मिक विचारो को जनसाधारण तक पहुँचाने के लिये इन विद्वानो ने गद्य का सहारा लिया। राजस्थानी-गद्य के प्रारम्भिक उदाहरण इन्हीं जैन आचार्यों की रचनाओं मे मिलते है। जैन-विद्वानों का यह गद्य कलात्मक दृष्टिकोण से नही लिखा गया उसका उद्देश्य केवल धार्मिक शिक्षा मात्र था।

विकास की दृष्टि से राजस्थानी-गद्य के प्राचीन-काल स० (१३०० से स० १६००) तक को दो भागो में विभक्त किया जा सकता है —

१—प्रयास काल—स० १३०० से स० १४०० तक—
२—विकास काल–स० १४०० से स० १६०० तक—

प्रयास-काल (सं० १३०० वि० से सं० १४०० वि० तक)

राजस्थानी-गद्य के प्रामाणिक प्राचीन उदाहरण, विक्रम की चौदहवीं शताब्दी से मिलने लगते है। इस समय तक राजस्थानी और गुजराती भाषाओं का पृथक्करण नहीं हुआ था। दोनों अभी तक एक ही भाषा थीं

जिसे विद्वानों ने "प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी" (ओल्ड वेस्टर्न राजस्थानी) नाम दिया है।[1]

चौदहवी शताब्दी की राजस्थानी-गद्य की ८ रचनाये अभी तक प्राप्त हुई है जिनमें ७ रचनाये गुजरात मे मिली हैं। इन रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं[2] :—

१–आराधना–र० सं० १३३० वि०–
२–बाल-शिक्षा-र० सं० १३३६ वि०–
३–अतिचार–र० सं० १३४० वि०–
४–नवकार व्याख्यान–र० सं० १३५८ वि०–
५–सर्वतीर्थनमस्कारस्तवन–र० सं० १३५९ वि०–
६–अतिचार–र० सं० १३६९ वि०–
७–तत्वविचारप्रकरण–र० काल लगभग चौदहवीं शताब्दी
८–धनपाल-कथा–र० काल लगभग चौदहवी शताब्दी

१—क. टैसीटोरी –Notes on the Grammer of Old Westein Rajasthani : Indian Antiquary 1914-1916 (Introduction)

ख सुनीतकुमार चटर्जी–The Origin and Development of Bangali Language Page : 9

२—इनमे १, ३, ४, ५, ६ रचनाओं को प्रकाश मे लाने का श्रेय बड़ौदा के श्री चम्मनलाल डाल्हाभाई दलाल को है। यह रचनाये उन्हे पाटन के जैन भण्डारों मे प्राप्त हुई थी और उनके द्वारा सपादित "जैन-गुर्जर-काव्य-सग्रह" में प्रकाशित हो चुकी हैं। न० ७ और ८ के अतिरिक्त शेष सभी रचनाओं को मुनि श्री जिनविजय जी ने अपने 'प्राचीन-गुजराती-गद्य-सदर्भ" मे प्रकाशित किया है। अन्तिम दो रचनाओं को खोज निकालने का श्रेय श्री अगरचन्द नाहटा, बीकानेर को है। न० ७ "राजस्थान भारती" के जुलाई सन् १९५१ के अक मे प्रकाशित हुई है इसकी मूल ह० प्र० बीकानेर के बडे उपासरे के ज्ञान भडार मे है। न० ८ की ह० प्र० बीकानेर के बड़े उपासरे के महिमा-भक्ति-भंडार में रक्षित है।

इनमें दूसरी रचना व्याकरण-सबधी है। एक, तीन, पांच और छै रचनाये जैन धर्म से सम्बन्धित विषयों पर लिखी गई स्फुट टिप्पणियां है। चौथी टीका है। सातवी में जैन-धर्म सम्बन्धी तत्वों का नामोल्लेख है। आठवी कथा रूप में है। यह सभी रचनाये जैन लेखकों की कृतियां है। "बालशिक्षा" के लेखक संग्रामसिह के जैन होने में सदेह था किन्तु श्री लालचन्द भगवान दास गाधी की खोज के अनुसार वह भी जैन सिद्ध होता है।[1]

'आराधना' गुजरात के आशापल्ली (आसावल) नगर मे आश्विन सुदी ५ गुरुवार स० १३३० मे ताडपत्र पर लिखी गई थी। इसके लेखक का नाम नहीं दिया गया है पर यह किसी सुपठित जैन साधु की रचना जान पडती है।

'आराधना' जैन धर्म की एक विशेष क्रिया है जिसमे आचार सम्बन्धी अतिचारो की आलोचना, आचार्य आदि के सम्मुख गुह्यतम रहस्यों का प्रकटीकरण, व्रतों का वाणी द्वारा अ गीकरण, सब जीवों के प्रति अपने अपराधो की क्षमापना, अठारह पाप स्थानो का त्याग, चार शरणों का ग्रहण, दुष्कृतो की गर्हणा, सुकृतों का अनुमोदन तथा पच नमस्कारों का स्मरण किया जाता है।

प्रस्तुत 'आराधना'' मे जैन-आराधन क्रिया की विधि निर्देशित की गई हैं जो याददाश्त के रूप मे लिखी गई एक स्फुट टिप्पणी है। इसमे सस्कृत शब्दो की प्रचुरता तथा समास-प्रधान शैली का प्रयोग मिलता है। शब्दावली और रूपो पर अपभ्र श का प्रभाव दिखाई देता है। शैली कुछ बोझिल सी हो गई है। भाषा-लेखन मे सौकर्य नही आने पाया। लेखक प्राय. अधिक कवित्व मय हो उठता है और अनुप्रासान्त-काव्य-शैली को अपनाता चलता है।

गद्य का उदाहरण–

सात नरक तणा नारकि दशविध भवनपति अष्टविध व्यतर पचविध जोइती द्वैविध वैमानिक देवा कि वहुना। दृष्ट अदृष्ट ज्ञात अज्ञात श्रुत-अश्रुत स्वजन परजन मित्रु शत्रु प्रत्यक्षि परोक्षि जे केइ जीव चतुरासी लक्ष योनि ऊपना चतुर्गति की ससारी भ्रमता मई हुमिया वचिया सीरीविया

१—लालचन्द भगवान गाधी '–भरत बाहुबली रास प्रस्तावना पृ० ४१

हसिया निंदिया किलामिया दामिया पाछिया चूकिया भवि भवांतरि भवसति भवसहस्रि भवलक्षि भवकोटि मनि वचनि काइं तीह सर्वहइं मिच्छामि दुक्कडं ।

तीसरी और छठी रचनाये (अतिचार) हैं जो क्रमशः स० १३४० वि०[1] के लगभग तथा सं० १३६६ वि०[2] में लिखी गई । अतिचार, आचार-सम्बन्धी व्यतिक्रम (नियम-भग) को कहते हैं । अतिचारों की आलोचना तथा उनकी गर्हणा इन कृतियो का विषय है । उक्त "आराधना" से इनका बहुत कुछ साम्य है । इनकी भाषा कम सस्कृतनिष्ठ तथा पदावली कम समास-प्रधान है । संस्कृत से तद्भव शब्दों का प्रयोग हुआ है ।

गद्य का उदाहरण-१

बारि भेदि तपु छहि भेदि बाह्य अणसण इत्यादि उपवास आंबिल नीविय एकासणु पुरिमड्ढ-व्यासण यथाशक्ति तपु तथा ऊनोदरि तपु वृत्तिसखेवु । रसत्यागु काय किलेसु सलेखना कीधी नहि तथा प्रत्याख्यान एकासणां बिपुरिमड्ढ साढपोरिसि पोरिसिभगु अतिचारु नीविय आंबिलि उपवासि कीधइ विरासइ सचित पाणीउ पीवउं हुयइ पक्ष दिवसमांहि ।
—स० १३४०—

गद्य का उदाहरण नं०--२

मृषावादि मृषोपदेश दीधउ, कूडउ लेख लिखिउ, कूडी साखि थापण मोसेउ, कुणहसउ राढि मेडि कलहु विढाविढि जु कोई अतिचार मृषावादि वृति भव सगलाइ याहि हुउ त्रिविधमिच्छामि दुक्कड़ ।
—स० १३६६—

चौथी रचना-नवकार व्याख्यान[3] स० १३५८ वि० मे लिखित एक गुटके मे प्राप्त हुई है । नवकार नमस्कार का प्राकृत रूप है इसमें जैनो के नमस्कार मत्र, जिसके द्वारा पच-परमेष्ठियों को नमस्कार किया जाता है, की व्याख्या की गई है यह राजस्थानी के टीकात्मक गद्य का सर्व प्रथम

१—प्राचीन गूर्जर काव्य सग्रह पृ० ८८
२—प्राचीन गुजराती गद्य सदर्भ पृ० २२१
३—प्राचीन गुजराती गद्य सदर्भ पृ० २१६ और प्राचीन गूर्जर काव्य सग्रह पृ० ८१

उदाहरण है जो राजस्थानी मे प्रचुर परिमाण मे मिलता है इसकी शैली रूढिबद्ध टीकाओ जैसी है ।

गद्य का उदाहरण—

नमो आयरियाण । ३ । माहरउ नमस्कारु आचार्य हुउ । किसा जि आचार्य, पच विधु आचारु जि परिपालइ ति आचार्य भणियइ । किसउ पच विधु आचारु, ज्ञानाचारु, दर्शनाचारु, चरित्राचारु, तपाचारु, वीर्याचारु, यउ पच-विधु आचारु जि परिपालई ति आचार्य भणियइ । तीह आचार्य माहरउ नमस्कारु हूउ । स० १३५८

पांचवी रचना "सर्वतीर्थ नमस्कार स्तवन"[1] है जो स० १३५६ मे लिखी गई । यह एक छोटी सी टिप्पणी है जिसमे स्वर्ग, पाताल और मनुष्य लोक इन तीनो के विविध भागो मे जितने जिन-मन्दिर हैं उनकी सख्या बताकर वदना की गई है ।

गद्य का उदाहण—

अथ मनुष्यलोकि नदिसर वरि दीपि बावन्न च्यारि कुण्डलवलि, च्यारि रुचकि वलि, च्यारि मनुष्योत्तरि पर्वति, च्यारि इषार पर्वति, पच्यासी पाच मेरे, वीस गजदत पर्वति, दस कुर पर्वति, भीस सेल सिहरे सरिसउ वैताढ्यपर्वति, एव च्यारि सइ त्रिसट्ठि जियालइपरिभ, एव आठ कोडि छप्पन लाख सत्ताणवइ सहस च्यारि सइ छियासिया तियलुक्के शास्वतानि महामन्दिर त्रिकाल तीह नमस्कार करउ । —स० १३५६—

"तत्व-विचार प्रकरण" मे जैन धर्म के तत्वों पर टिप्पणियां है इसका रचनाकाल ज्ञात नही पर जिस प्रति मे यह प्राप्त हुई है उसका लेखन स० १४२० के लगभग हुआ है अतः इसका रचनाकाल उसी के आसपास होना चाहिये ।

गद्य का उदाहरण—

जीव किता होहि, चितु चेतना सज्ञा जाह हुइ ति जीव भणियहि । ते पुणु अनेक विधि हुंहि । इत्थे पुणु पच विघु अधिकारु ऐकेन्द्रिय, बेइ द्रिय, तिइ द्रिय, चउरिद्रिय, पचेन्द्रिय । जि ऐकेद्रिय ति दुविध-सूक्ष्म, बादर । बादर ति मोकला । बे इ द्रियादिक बादर । सकल्प ज मनि वचनि काहइ न

१—प्राचीन गुर्जर-काव्य-सग्रह पृ० ८८ प्राचीन गुर्जर-काव्य-सग्रह पृ० २१६
२—"राजस्थानी-भारती" वर्ष ३, अ क ३–४ पृ० ११८

हणउ न हणावहुं । आरसु सापराधु सोकलउ । पउ पहिलउ अणुव्रतु ।

"बालशिक्षा"[1] की रचना संग्रामसिह ने सं० १३३६ मे की। सग्रामसिह का जन्म श्रीमाल वश में हुआ था इनके पिता का नाम ठक्कुर कूरसी और पितामह का नाम साढाक था। यह रचना सस्कृत के विद्यार्थियों के लाभ के लिये की गई थी। इसके द्वारा सस्कृत व्याकरण का शिक्षा दी गई है। समझाने के लिए तत्कालीन भाषा का प्रयोग किया है। सस्कृत के रूपों के साथ तुलनात्मक रीति से तत्कालीन-भाषा-शब्दों के रूप दिये गये हैं। अन्त में सस्कृत के अनेक क्रिया, क्रियाविशेषण आदि शब्दों के भाषा-प्रतिरूप सग्रहीत है। भाषा के रूपो और शब्दों को लेकर बताया गया है कि उनको सस्कृत मे किस प्रकार व्यक्त किया जायगा। इस प्रकार यह अनुवाद पद्धति से सस्कृत की शिक्षा देने वाला छोटा सा बालोपयोगी व्याकरण है।

भाषा के तत्कालीन स्वरूप को समझने के लिए एक अत्यन्त उपयोगी रचना है। इसमे भाषा के व्यवहारिक और प्रचलित रूप सग्रहीत किये गये हैं जिनमें प्राचीनता तथा अव्यवहारिकता का सदेह नही हो सकता। इसी शैली पर आगे चल कर और भी रचनाये हुई जो साधारणतया "औक्तिक" नाम से प्रसिद्ध है।

गद्य का उदाहरण—

स्वर केता १४ समान केता १० सवर्ण १० ह्रस्व ५ दीर्घ ५ लिगु ३ पुल्लिग, स्त्रीलिग, नपु सक लिगु, भलउ पुल्लिग, भली स्त्रीलिग, भलु नपु सकलिगु। स० १३३६

"धनपाल-कथा"[2] एक बहुत प्राचीन प्रति मे लिखी हुई मिली है इसके साथ और भी छोटी मोटी अनेक रचनाये है जिनका रचनाकाल चौदहवी शताब्दी का उत्तरार्द्ध है।

इस कथा मे उज्जयिनी नगरी के महापडित धनपाल के जैन श्रावक हो जाने का वृत्तांत है। इसमें एक छोटी सी घटना को लेकर धनपाल के

१—'प्राचीन गुजराती गद्य सदर्भ' मे प्रकाशित
२—राजस्थान-भारती वर्ष ३, अक १ पृ० ६४

जीवन में सहसा परिवर्तन होने, उसके द्वारा जैन धर्म स्वीकार करने तथा "तिलक मजरी" कथा के अग्नि-शरण होने और पुन लिखी जाने की कथा है।

इसकी भाषा ऊपर लिखे उदाहरणों की भाषा से प्राचीनतर जान पडती है वह अपभ्र श के अधिक निकट प्रतीत होती है।

गद्य का उदाहरण—

उज्जयिनी नाम नगरी, तहिठे भोजुदेव नामि राजा, तीहइ तणइ पचहसयह पडितइ मांहि मुख्यु धनपालु नामि पडितु, तिहइ तणइ घरि अन्यदा कदाचित् साधु विहरण निमत्तु पइठा, पडितहणी भार्याभीजा दिवसहणी दधि लेउ उठी। बीजुतु काई तिपि प्रस्तावि वडतिया विहरावण सारीखेउ न हुम् इति पभणियउ।

चौदहवी शताब्दी का गद्य-प्रवृत्ति एव भाषा स्वरूप की दृष्टि से विशेष महत्व है यद्यपि अब तक पद्य का ही प्राधान्य रहा तथापि गद्य लेखन की ओर भी ध्यान जा चुका था। पद्य-प्रवृति अधिक प्राचीन थी अत उसकी भाषा प्रौढ़ और परिमार्जित हो चुकी थी। गद्य की भाषा अभी उस स्तर पर नही पहुंच पाई थी किन्तु उस ओर बढ़ने का प्रारम्भ होने लगा था। इस शताब्दी का लिपिबद्ध गद्य बहुत कम मिलता है इसके दो प्रमुख कारण थे १—पद्य को अधिक मान्यता मिली थी और उसके स्थायित्व पर अधिक आस्था थी। उसकी मनोरजकता एव आकर्षण-शक्ति के कारण गद्य लेखन की ओर अधिक ध्यान नही जा सका। २—इस शतक मे जो भी गद्य लिखा गया वह पूर्ण रूप से प्राप्त नही है। उसमे से कुछ तो, सभवत, सामयिक होने के कारण नष्ट हो गया और कुछ हस्त-प्रतिया अज्ञात स्थानो मे रहकर काल का कलेवा बन गई।

जो कुछ भी अभी तक प्राप्त है उनके आधार पर कहा जा सकता है कि चौदहवी शताब्दी मे गद्य का स्वरूप न तो भाषा की दृष्टि से और न साहित्य की दृष्टि से प्रौढ़ हो पाया था, किन्तु उसमे विकास के तत्व विद्यमान थे इस काल के गद्य का महत्व गद्य के प्रारम्भिक रूप के उदाहरण होने के नाते है। इस समय गद्य लेखको के सम्मुख कोई पूर्व निश्चित आधार नही था। उनको स्वय अपना नवीन मार्ग बनाना पड़ा। फलतः भाषा लेखन में न तो सौकर्य ही आने पाया और न शैली ही जम पाई।

विकास-काल (सं० १४०० वि० से १६०० तक)

गत शताब्दी के प्रयास अब प्रौढ़ता प्राप्त करने लगे। शैली बदली। विषयों का क्षेत्र भी विस्तृत हुआ। इस काल के साहित्य को पांच भागों मे विभक्त किया जा सकता है —

१—धार्मिक-गद्य-साहित्य

२—ऐतिहासिक-गद्य-साहित्य

३—कलात्मक-गद्य-साहित्य

४—व्याकरण-गद्य-साहित्य

५—वैज्ञानिक-गद्य-साहित्य

इन दो शताब्दियों का गद्य-साहित्य प्रधानतया जैनों की धार्मिक रचना है। जैन आचार्यो ने प्रधानत: ३ प्रकार के गद्य-ग्रंथ लिखे है। १—सरल गद्य-कथाये २—विशिष्ट गद्य-निबंध ३—टीका-टिप्पणी, अनुवाद, बालावबोध, व्याकरण आदि। सरल गद्य-कथाये विशेषकर धार्मिक रही। विशिष्ट गद्य-निबन्धों मे कलात्मक छटा दिखलाई पड़ती है। बालावबोध-लेखन की प्रथा का आरम्भ आचार्य तरुण प्रभ सूरि से होता है। यह परम्परा बराबर चलती रही। जैन लेखकों ने ऐतिहासिक तथा व्याकरण सम्बन्धी रचनाये भी की किन्तु इनकी सख्या अधिक नही है।

चारणी-गद्य-साहित्य भी इसी काल से मिलता है उसका सर्वप्रथम उल्लेखनीय ग्रंथ "अचलदास खीची री वचनिक" १५ वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में लिखा गया।

माणिक्यचन्द सूरि द्वारा लिखित "पृथ्वीचन्द्र-चरित्र या वाग्विलास" इस काल की महत्वपूर्ण जैन कलात्मक कृति है जो वचनिका शैली मे लिखी गई है।

१—धार्मिक-गद्य-साहित्य

राजस्थानी के धार्मिक गद्य के उदाहरण पद्रहवी शताब्दी के आरम्भ से ही मिलने लगते हैं। जैन आचार्य तथा उनके शिष्य इस प्रकार की रचनाओं मे सदैव योग देते रहे। इनमे प्रमुख गद्यकारों के नाम इस प्रकार हैं :— १—तरुणप्रभ सूरि, २—सोमसुन्द सूरि, (तपागच्छ) तथा

उनका शिष्यवर्ग— मुनिसुन्दर सूरि, जयसुन्दर सूरि, भुवनसुन्दर सूरि, जिनसुन्दर सूरि और रत्नशेखर सूरि ३–मेरुसुन्दर (खरतरगच्छ) ४–शिवसुन्दर ५–जिन सूरि (तपागच्छ) ६–संवेगदेव गणि (तपागच्छ) ७-राजवल्लभ (धर्मघोषगच्छ) ८–लक्ष्मीरतन सूरि ६–पार्श्वचन्द्र १०–जयशेखर (अचलगच्छ) ११–साधुरत्न सूरि (तपागच्छ) १२–शुभवर्धन १३–हेमहस गणि ।

इन सब में निम्नलिखित चार गद्य लेखकों ने राजस्थानी के प्रारम्भिक धार्मिक गद्य-साहित्य को जीवन दान दिया है। १–आचार्य तरुणप्रभ सूरि २–श्री सोमसुन्दर सूरि ३–श्री मेरुसुन्दर और ४–श्री पार्श्वचन्द्र। यह चारों इस काल के ज्योति-स्तम्भ है।

१–आचार्य तरुणप्रभ सूरि :–

आचार्य तरुणप्रभ सूरि का नाम राजस्थानी गद्य लेखकों मे सर्वप्रथम उल्लेखनीय हैं। इनके जीवनकाल, जन्म-स्थान, वश आदि का कुछ भी पता नहीं चलता। "युगप्रधानाचार्य-गुर्वावली"[1] के अनुसार इनका दीक्षा-नाम तरुण कीर्ति था। खरतरगच्छ के पट्टधर आचार्य जिनचन्द्र सूरि ने स० १३६८ वि० में भीमपल्ली (भीलड़िया)[2] मे इनको दीक्षा दी[3]। राजेन्द्रचन्द्र सूरि तथा जिनकुशल सूरि के पास इन्होंने विविध शास्त्रो को अध्ययन किया।[4]

श्री जिनकुशल सूरि इनकी विद्वता एव योग्यता से प्रभावित थे। उन्होंने इनको स० १३८८ मे आचार्य पद प्रदान किया। श्री तरुणप्रभ सूरि धुरन्दर जैन विद्वानों में से थे इन्होंने सस्कृत प्राकृत एव तत्कालीन लोक-भापा मे कई स्तोत्र-ग्र थ भी लिखे है। राजस्थानी गद्य की सबसे प्रथम प्रौढ रचना "षडावश्यक बालावबोध"[5] इन्हीं की कृति है।

१—हस्तप्रति क्षमा-कल्याण-ज्ञानभडार, बीकानेर में विद्यमान है।

२—यह स्थान पालणपुर एजेन्सी के डीसा केम्प से १६ मील है।

३—मोहनलाल दुलीचन्द देशाई : जैन साहित्य का सक्षिप्त इतिहास टिप्पणी सख्या ६५६, ७६४

४—तरुणप्रभ सूरि : पड़ावश्यक बालावबोध यशःकीर्ति गणिमासि पूर्व विद्याममाणयत्, राजेन्द्रचन्द्रसूरिन्द्रोर्विद्या काचन काचन जिनादि कुशलाखौ

५—हस्तप्रति अभय जैन पुस्तकालय, बीकानेर मे विद्यमान

षड़ावश्यक बालावबोध

जैसाकि नाम से ही सकेत मिलता है यह पुस्तक जैन धर्म के छै आवश्यक कर्मो[1] का बोध कराने के लिये लिखी गई है । अतः इसके लिखने में तरुणप्रभ सूरि का उद्देश्य धार्मिक शिक्षा ही रहा । इसकी रचना स० १४११ वि० मे दीपोत्सव के अवसर पर हुई ।[2] इस उपदेशात्मक गद्य-ग्र थ मे एक प्रकार की टीका का ही अनुसरण हुआ है । इसमे सस्कृत, प्राकृत तथा लोक भाषा (राजस्थानी) का प्रयोग है । सस्कृत और प्राकृत के अ शों को लोकभाषा मे समझाया गया है । एक एक शब्द के साथ शब्द का जो अर्थ है उसकी व्याख्या साधारण से साधारण व्यक्ति को समझाने के दृष्टिकोण की गई है जैसे–प्राकृत-अ श "अन्नाणी कि काही किवा नाही छेय पावयती" सस्कृत-अ श 'अज्ञानी कि करिष्यति" लोकभाषा "किसी करसइ" अथवा "किसउ जाणिसइ" इत्यादि ।

भाषा पर पूर्ण अधिकार होने के कारण आचार्य तरुणप्रभ सूरि को इस ग्र थ की व्याख्यात्मक शैली में सफलता मिली । प्रसगानुसार दृष्टान्त रूप मे अनेक कथाओ का प्रयोग इसमे किया गया है । ये कथाये इस ग्र थ का महत्वपूर्ण अ श हैं । इस "षडावश्यक बालावबोध" की रचना के उपरान्त बालावबोध-लेखन की बाढ़ सी आ गई । ये बालावबोध राजस्थानी गद्य के अच्छे उदाहरण हैं ।

इस ग्र थ की भाषा प्रौढ़ एव परिमार्जित राजस्थानी का सर्वप्रथम उदाहरण है । सम्पूर्ण ग्र थ मे कही भी भाषा-शैथिल्य नहीं है उसमे एक प्रकार का प्रवाह है जो उससे पूर्व की रचनाओं मे नही मिलता । शब्द-चयन सरल होते हुए भी उसमें भाव प्रकाशन की अद्भुत शक्ति है । पांडित्य प्रदर्शन की भावना से यह सर्वथा मुक्त है ।

गद्य का उदाहरण–

इसी परि महाविषाद करतउ जिनदत्तु लोकि जाणिउ । कि बहुनां, राजेन्द्रि पुणि जाणिउ । धन्यु जिनदत्तु जु इसी परि भावना भावइ । तदा
. ...

१—द्वितीय प्रकरण
२—तरुणप्रभ सूरि : षड़ावश्यक बालावबोध : स० १४११ वर्षे दीपोत्सव दिवसे शनिवारे श्री मदनहिल्ल पतने – –षड़ावश्यक वृत्ति सुगमा बालावबोध कारिणी सकल सतोषकारिणी लिखिता ।

तिणि नगरी केवली आविउ । राजादिके लोके वांदी पूछिउ-भगवन् जिनदत्तु पुण्यवन्तु, किवां अभिनवु पुण्यवन्तु, केवली कहीइ जिनदत्तु पुण्यवन्तु । लोक कहइ-भगवन् अभिनवु पाराविउ जिनदत्तु न पाराविउ

आचार्य श्री तरुणप्रभ सूरि से पूर्व राजस्थानी गद्य लडखड़ाता हुआ उठने का प्रयत्न कर रहा था । उन्होंने उसे वह शक्ति प्रदान की कि वह उठकर चलने मे समर्थ हो गया । अब राजस्थानी-गद्य ने एक दिशा प्राप्त करली जिस पर वह वेग से बढ चला और थोडे ही समय मे वह पूर्ण प्रौढता को प्राप्त हो गया ।

२-सोमसुन्दर सूरि[1] सं० १३३० से १४६६

आचार्य तरुणप्रभ सूरि के उपरान्त श्री सोमसुन्दर सूरि[2] का कार्य महत्वपूर्ण है । यह अपने युग के एक बहुत बडे आचार्य हुए । इनका जन्म प्रह्लादनपुर[3] (गुजरात) मे स० १४३० वि०[4] मे हुआ । इनके पिता का नाम सज्जन श्रेष्ठि[5] तथा माता का नाम माल्हण देवी[6] था । दोनो धार्मिक विचारों के श्रावक थे । कुछ बडे होने पर अपने पुत्र सोमकुमार को सज्जन-श्रेष्ठि ने एक विद्वान तथा तेजस्वी उपाध्याय के पास शिक्षा प्राप्त करने के लिये रखा ।[7] कुमार ने शीघ्र ही लिंगानुशासन एवं छन्द शास्त्र की शिक्षा प्राप्त करली । एक बार जयानन्द सूरि उस नगर मे आये । उनके उपदेशों को सुनकर सोमकुमार को वैराग्य हो गया ।[8] जयानन्द सूरि भी उनसे प्रभावित हुए और सज्जनश्रेष्ठि से यह बालक उन्होंने दीक्षा के लिए मांगा । स० १४३७ वि० मे जयानन्द सूरि ने इनको दीक्षा दी और इनका दीक्षा

....

१—प्राचीन गुजराती गद्य सदर्भ पृ० ६७
२—देसाई जैन साहित्य का सक्षिप्त इतिहास : टिप्पणी—६५२, ६५३, ६८६, ७०८, ७०९, ७२१, ७२८, ७२९, ७४६, ७५३ ७८८
३—सौम-सौभाग्य काव्य पृ० ५ श्लोक ९२
४—वही : पृ० २६ श्लोक ११
५—वही पृ० १५ श्लोक ४०
६—वही : पृ० १६ श्लोक ५०
७—वही : पृ० ३५ श्लोक ५६, ५७, ५८, ५९
८—वही : पृ० ५८ श्लोक १६ वही पृ० ६८ श्लोक ६०

नाम सोमसुन्दर रखा गया। इन्होंने स० १४५०[1] वि० में वाचक पद तथा स० १४५७[2] में सूरि पद प्राप्त किया।

जैन धर्म के, इतिहास एव साहित्य के क्षेत्र में श्री सोमसुन्दर सूरि का बहुत ही प्रभावशाली व्यक्तित्व रहा है। इन तीनों क्षेत्रों में समान रूप से अधिकार रखने वाले उनके समान आचार्य बहुत कम हुए हैं। अपने जीवनकाल में इन्होंने अनेक भव्य एव कलाकौशल पूर्ण जैन मन्दिरों के निर्माण में प्रेरणा दी, प्राचीन ताडपत्र पर लिखी हुई कृतियों का जीर्णोद्धार किया और नवीन प्रतिलिपियां तैयार करवाकर उनकी सुरक्षा की व्यवस्था करवाई। साहित्य-सृजन को इनके द्वारा बड़ा भारी प्रोत्साहन मिला। उन्होंने विपुल मात्रा मे स्वय साहित्य की रचना की तथा दूसरों को भी उसके लिए प्रेरित किया। उनकी शिष्य-मण्डली बहुत बड़ी थी। उनकी शिष्य परम्परा मे सस्कृत प्राकृत और भाषा के अनेकों महत्वपूर्ण लेखक हुए। उन्होने खम्भात के प्रसिद्ध प्राचीन पुस्तक भण्डारो की व्यवस्था की।[3]

साहित्यिक गति विधि के मेरुदण्ड होने के नाते सोमसुन्दर सूरि का समय "सोमसुन्दर-युग" (स० १४५६ से स० १५०० तक) कहा गया है। उन्होंने स्वय कई ग्रथों का निर्माण किया। उनके द्वारा राजस्थानी-गद्य मे लिखे गये ८ बालावबोध है। इनके नाम इस प्रकार है—१–उपदेशमाला बालावबोध (र० स० १४८५)[4] २–षष्टि शतक बालावबोध (र० स० १४९६)[5] ३–योगशास्त्र बालावबोध ४–भक्तामर स्तोत्र बालावबोध ५–नवतत्व-बालावबोध ६–पर्यन्ताराधना–आराधना-पताका बालावबोध ७–षडावश्यक बालावबोध ८–विचार ग्रथ बालावबोध।

उदाहरण के लिए उपदेशमाला बालावबोध तथा योगशास्त्र बालावबोध को लिया जा सकता है।[6] प्रथम प्राकृत का एक प्रसिद्ध ग्रंथ है जिसमें सदाचार के उपदेशो का सग्रह है। इसमे छोटी वडी कथाओ का प्रयोग किया गया है। श्रावको को धार्मिक उपदेश देने के लिए इस ग्रंथ की

...

१—सोम-सौभाग्य काव्य : पृ० ७५ श्लोक १४
२—वही : पृ० ८६ श्लोक ५१
३—नेमिचन्द्र : षष्टि शतक प्रकरण पृ० 13
४—ह० प्र० अभय-जैन पुस्तकालय बीकानेर मे प्राप्त
५—ह० ग्रं० : अभय-जैन-पुस्तकालय बीकानेर मे विद्यमान
[illegible]

रचना हुई है। मूल गाथा के प्राकृत प्रयोगों का पहले उल्लेख कर पश्चात् उनकी व्याख्या की गई है। योगशास्त्र की रचना जैन श्री हेमचन्द्र सूरि ने संस्कृत मे की थी उसी पर प्रस्तुत बालावबोध लिखा गया है इसमें योग का स्वरूप, उसकी महिमा एवं महात्म्य के ५ महाव्रत, उन पांचों में प्रत्येक की पांच पांच भावना तथा योगपुरुष के लक्षण बतलाए है। इसके अतिरिक्त श्रावक के ३ गुण, चार व्रत के अतिचार तथा श्रावक के कृत्य-सम्यक्त्व का स्वरूप, श्रावक के ५ अनुव्रत, ५ इन्द्रियो की शुद्धि का स्वरूप, ४ भावना तथा नवआसन का विश्लेषण है।

इन दोनों बालावबोधों की कथाओं में तरुणप्रभ सूरि का "षडावश्यक बालावबोध" की कथाओं से साहित्यिक तत्व कम है फिर भी भाषा के विकास की दृष्टि से श्री सोमसुन्दर की बालावबोध की कथाये महत्वपूर्ण है।

गद्य का उदाहरण—

१—चाणक्य ब्राह्मणि चन्द्रगुप्त क्षत्रीपुत्र राज्य योग्य भणी संगठियो छइ। अनइ एक पर्वतक राजा मित्र कीधओ छइ। तेहनइ बलि चाणक्यइ कटक करी पाडलिपुरि आवी नदराव काढी राज्य लीधउ। पर्वतक अर्ध राज्यनु लेणहार भणी एक नदरायनी बेटी तत्त्णे करी विषकन्या जांणी नइ परणाविओ चन्द्रगुप्त विसना उपचार करतओ वारिओ। तिम अनेराइ आपणां काज सरिया पूठि मित्र हुइ अनर्थ करइ।

(उपदेशमाला बालावबोध)

गद्य का उदाहरण—

२—वेणातट नगरि मूलदेव राजा। एक वार लोके विनविउ-स्वामी को एक चोर नगर लूसइ छइ, पुण चोर जाणीर नहीं, राजइ कहिउ—थोड़ा दिहाड़ा मांहि चोर प्रगट करिसु तुम्हें असमाधि म करिसउ। पछइ राजाइं तलार तडि हाकिउं। तलार कहइ मइ अनेक उपाय कीधा पुण ते चोर धराइ नही। पछइ राजा आपण पइ रात्रिइ नीलउ पउलउ पहिरि नगर वाहरि जे जे चोर ने स्थान के फिरते, चार जोवउ एकइ स्थान कि जइ सूतउ। तेतलइ मंडिक चोरिइं दीठउ जगाविउ पूछिउ-कउण तउं, तीणि कहिउ-हुं कापडी भीषारी। मडिक चोरि कहिउ आवि तउ मूं साथिइं जिम तूहइ लक्ष्मीवत करउ। (योगशास्त्र बालावबोध)

३–मेरुसुन्दर (खरतरगच्छ)

श्री मेरुसुन्दर[1] खरतरगच्छ के पांचवे आचार्य श्री जिनचन्द्र सूरि (स० १४८७–१५३०) के शिष्य थे ।[2] इनके जीनन-वृत्त के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं है । राजस्थानी के टीकाकारों में सबसे अधिक टीकायें इन्हीं की मिलती है । अब तक इनके १७ बालावबोध उपलब्ध हुए हैं । इनके नाम इस प्रकार है :— १–शीलोपदेश माला[3] बालावबोध (सं० १५२५) २–पुष्पमाला बालावबोध[4] (सं० १५२८) ३–षड़ावश्यक बालोवबोध[5] (सं० १५२५) ४–शत्रुञ्जय-स्तवन[6] बालावबोध (सं० १५१८) ५–कर्पूर-प्रकरण[7] बालावबोध (स० १५३४) ६–योगशास्त्र बालावबोध[8] ७–पंच-निर्ग्रंथी बालावबोध[9] ८–अजितशान्ति बालावबोध ९–भावारिवारण-बालावबोध १०–वृत्त-रत्नाकर बालावबोध ११–सम्बोधसत्तरी बालावबोध[10] १२–श्रावकप्रतिक्रमण बालावबोध १३–कल्पप्रकरण बालावबोध १४–योग-प्रकाश बालावबोध १५–षष्टिशतक[11] बालावबोध १६–वाग्भटालंकार[12] बालावबोध (सं० १५३५) १७–विदग्धमुखमंडन[13] बालावबोध ।

इन बालावबोधों के अतिरिक्त मेरुसुन्दर की दो गद्य रचनाये

.. ..

१—युग प्रधान जिनदत्त सूरि : पृ० ६६, ७० । देसाई : जैन गूर्जर कविओ भाग ३ पृ० १५८२ । जैन साहित्य का सक्षिप्त इतिहास : टि० ७६४

२—नेमिचन्द्र भंडारी : षष्टि शतक प्रकरण पृ० १५

३—अभय-जैन-पुस्तकालय बीकानेर । मुनि विनयसागर सग्रह कोटा

४—सघ भंडार वखत जी शेरी पाटन । अभय जैन पुस्तकालय बीकानेर

५—डोसाभाई अभयचन्द संघ भंडार, भावनगर

६—भडारकर इ स्टीट्यूट, पूना

७—पुराना सघ भडार, पाटण

८—विवेक विजय भंडार, उदयपुर

९—गोड़ीजी भडार, उदयपुर । मुनि विनयसागर सग्रह, कोटा

१०—डूगर जी यति भंडार, जैसलमेर । मुनि विनयसागर सग्रह कोटा

११—सघ भडार बखत जी शेरी पाटण

१२—नेमिचन्द्र भंडारी षष्टि शतक प्रकरण पृ० १६

१३—पार्श्वनाथ भंडार, जोधपुर

१–अजना-सुन्दरी-कथा[1] और २–प्रश्नोत्तर-ग्र थ[2] प्राप्त हैं।

इन रचनाओं के निर्माणकाल को देखने से श्री मेरुसुन्दर का समय सोलहवी शताब्दी का प्रारम्भ निश्चित होता है।

श्री मेरुसुन्दर की यह सभी रचनाये राजस्थानी प्रौढ़ गद्य के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। उदाहरण के लिये शीलोपदेशमाला बालावबोध को देखा जा सकता है। इस ग्र'थ का मूल लेखक श्री जयकीर्ति है। इस ग्र थ में शील (ब्रह्मचर्य) सम्बन्धी उपदेश दिये गये है।

गद्य का उदाहरण–

आबाल ब्रह्मचारी आजन्म चतुर्थ व्रतधारी श्री नेमिकुमार बावीसमा तीर्थंकर तिणां नै नमस्कार करी नै शील रूप उपदेश तेहनी माला नौ बालावबोध मूर्ख जनना उपकार भणी हूँ कहिस्यु नेमिकुमार ए नाम श्या-मणी जे गृहस्थ वास मै त्रिणी से वरस घर रही राज अनै राजीमती परहरी कुमार पणइ चारित्र लीधो। वली केहवा छै जयसार जय कही जै त्रिभुवन ते माहि शील रूप धरवाइ सु' एक सार प्रधान छै अथवा बाह्य अनै अ तरग वयरी जीपवइ' कर सार छै। (शीलोपदेशमाला बालावबोध)

४–पार्श्वचन्द्र सूरि (सं० १५३७–१६१२)

राजस्थानी गद्य के इतिहास मे श्री पार्श्वचन्द्र सूरि का नाम भी महत्व का है। इनका जन्म स० १५३७ मे हुआ। दीक्षा स० १५४६ मे, उपाध्याय पद स० १५६५ में, तथा युगप्रधान पद स० १५९९ मे प्राप्त किया। इन्होंने स० १५६५ में अपने गुरु बृहत्तपा-नागोरी-तपागच्छ के साधुरत्न-सूरि की आज्ञा से आगमानुसार क्रिया उद्धार किया। मारवाड़ के मालदेव राजा को जैन धर्म का उपदेश दिया। मु हणोत गोत्रीय क्षत्रियों को जैन धर्म का बोध करवा ओसवाल श्रावक बनाया।[3] इस काल के अधिक बालावबोध लिखने वालो मे मेरुसुन्दर के उपरान्त इन्हीं का स्थान है।

....

१—सिद्ध क्षेत्र साहित्य मन्दिर, पालीताना।
२—महिमा भक्ति भडार, बीकानेर।
३—बृहत्तपागच्छ पट्टावली पृ० ४५

इनकी निम्नलिखित ११ बालावबोध प्राप्त हैं :—१–आचारांग बालावबोध[1] २–दशवैकालिक सूत्र बालावबोध ३–औपपातिक सूत्र बालावबोध[2] ४–चउसरण प्रकीर्ण बालावबोध (स० १५६७) ५–जम्बू-चरित्र बालावबोध[3] ६–नवतत्व बालावबोध ७–प्रश्न व्याकरण बालावबोध ८–रायपसेणी सूत्र बालावबोध ९–साधु प्रतिक्रमण बालावबोध १०–सूत्रकृतांग सूत्र बालावबोध[4] ११-तंदुलवैयालिय बालावबोध[5] । इनके अतिरिक्त इनकी स्वतन्त्र गद्य रचना "प्रश्नोत्तर ग्रंथ" भी मिलती है।

गद्य का उदाहरण–

हिव तेहना नाम कहइ छइं । ते अनुक्रमइ जाणिवा। नारी समान पुरुष नइं अनेरउ अरि न थी इणि कारिणी नारि कहीयइं। नाना प्रकार कर्मइं करी पुरुष नइं मोहइं तिणि कारणि महिला कहियइ । अथवा महान्तकालनी उपजावणहार तिणि कारिणी महिला कहीयइं। पुरुष नइं मत्त करइं मद चड़वइं तिणि कारिणी प्रमदा कहियइं । पुरुष नइं हावभावादिकइ करी माहइं । तिणि कारणि रामा कहियइ । पुरुष नइं अंग ऊपरि अनुरक्त करइं तिणि कारिणी अंगना कहियइं। (तंदुलवैयालीय)

इन चारों जैन विद्वानों ने इस काल के गद्य लेखन को बहुत प्रोत्साहन दिया। उसके लिए नवीन विषय प्रस्तुत किए तथा नवीन शैली प्रतिपादित की। इनमें सोमसुन्दर सूरि का शिष्य मण्डल उल्लेखनीय है। इन शिष्यों में श्री मुनिसुन्दर सूरि, श्री जयसुन्दर सूरि, श्री भुवनसुन्दर सूरि, श्री जिनसुन्दर सूरि आदि प्रमुख हैं तथा इनकी शिष्य परम्परा मे जिनमण्डन, जिनकीर्ति, सोमदेव, सोमजय, विशालराज, उभयनन्दि, शुभरत्न आदि अनेक विद्वानों ने साहित्यिक जाग्रति को प्रसुप्त नहीं होने दिया। उपरान्त के जैन आचार्यों का ध्यान इस ओर गया इससे भाषा का स्वरूप विकसित हुआ।

. .. .

१—लीमड़ी भंडार तथा खेड़ासंघ भडार । मुनि विनयसागर भंडार, कोटा

२—लीमड़ी भंडार

३—वही

५—खम्भात

६—अभय जैन पुस्तकालय, बीकानेर

अन्य जैन गद्य लेखक :—

इस युग के अनेक जैन गद्यकारों मे श्री जयशेखर सूरि (स० १४००-१४६२) आचलगच्छ के श्री महेन्द्रप्रभ सूरि के शिष्य थे इन्होंने गद्य और पद्य के कुल मिला कर १८ ग्रंथो की रचना की जिनको देखने से पता चलता है कि यह कैसे विद्वान आचार्य थे।[1] प्रबोध चिन्तामणि के विषय पर स्वतन्त्र रूप से इन्होंने जो त्रिभुवन दीपक प्रबन्ध नामक ग्रंथ लिखा वह पन्द्रहवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध की राजस्थानी का उल्लेखनीय उदाहरण है। गद्य-ग्रथो में "श्रावक बृहदतिचार"[2] महत्वपूर्ण हैं।

"नवतत्व विवरण बालावबोध"[3] (स० १४५६ के लगभग) के रचयिता श्री साधुरत्न सूरि (तपागच्छ) श्री देवसुन्दर सूरि के शिष्य थे।[4] श्री साधुरत्न सूरि अपने समय के मान्य विद्वानो मे से थे इनके गद्य में प्रौढ़ भाषा के उदाहरण मिलते है।

हेमहसगणि तपागच्छ सोमसुन्दर सूरि मुनिसुन्दर सूरि आदि के शिष्य थे इन्होंने स० १५०१ में षडावश्यक बालावबोध[5] की रचना की।

शिवसुन्दर वाचक सोमध्वज खेमराज के शिष्य थे। इनकी गद्य रचना "गौतमपृच्छा बालावबोध"[6] खीमासर में स० १५६६ में लिखी गई।

जिनसूरि तपागच्छीय सोमसुन्दर सूरि विशालराज, विद्याभूषण आदि के शिष्य थे। इनकी "गौतमपृच्छा बालावबोध" शिवसुन्दर की बालावबोध जैसी ही है। दोनों मे केवल लेखकों के व्यक्तित्व का अन्तर है। इसमे कुछ दृष्टान्त नये जोड दिये गये हैं और कुछ कम कर दिये गये है।

. . . .

१—देसाई : जैन साहित्य का सक्षिप्त इतिहास टि० ६५०, ६८१, ७०६, ७१२, ७१४, ७१७, ८६५, ९०६, ९८१
२—देसाई : जैन गूर्जर कविओ : भाग ३ पृ० १५७३
३—गोडीजी भडार, बम्बई
४—देसाई जैन गूर्जर कविओ भाग ३ पृ० १५७२
५—अभय जैन पुस्तकालय तथा मेहरचन्द भडार न० १ बीकानेर
६—अभय जैन पुस्तकालय, बीकानेर

संवेगदेव गणि[1] तपागच्छीय श्री सोमसुन्दर सूरि के शिष्य थे। इनकी ३ गद्य-रचनाये प्राप्त हैं जिनमे दो बालावबोध और १ टब्बा है। "पिण्डविशुद्धि बालावबोध"[2] (स० १५१३) तथा "आवश्यकपीठिका-बालावबोध" स० १५१४ में लिखी गई। इनका चउसरण टब्बा[3] भी प्राप्त है।

राजवल्लभ धर्मघोपगच्छीय श्री धर्म सूरि की शिष्य परम्परा में श्री महिचन्द्र सूरि के शिष्य थे।[4] इनकी स० १५३० में लिखी हुई "षडावश्यक बालावबोध"[5] मिलती है। जिसकी सारी कथाये सस्कृत में हैं। जहां जैन धर्म के नियम, सिद्धान्त आदि की व्याख्या का प्रसग आया है वहां संस्कृत एव प्राकृत के अतिरिक्त राजस्थानी का प्रयोग किया गया है।

अज्ञात लेखक रचनायें :-

इस काल में "श्रावक व्रतादि अतिचार"[6] (स० १४६६) और "कालिकाचार्य-कथा"[7] (स० १४८५) नामक दो रचनाये ऐसी हैं जिनके लेखकों का नाम ज्ञात नहीं है। प्रथम का स० १३६६ में लिखित "अतिचार" से विपय-साम्य है। दूसरी रचना के गद्य मे पद्य का सा लावण्य एव माधुर्य भरने का प्रयास किया गया है। शब्द योजना को इस प्रकार सवारा गया है कि अनुप्रास छटा आकर्पक हो गई है। जैसे :—जिसिउ चचल बीज नु झत्कार। जिसिउ चचल इ द्र धनुष नु आकार। जिसिउ चचल मन नउ व्यापार। जिम दोहिलउ तिखड्ग धार ऊपरि चालतां तिसउ दोहिलउ ऐ चारित्र।" जिसउ चचल ठाकुर नउ अधिकार। जिसउ पीपल नु पान। तिसी चचल राज्य-लक्ष्मी जाण तुम्ह सरीखा सुविवेकी प्राणी इसिया ससार रूपीया कूआ मांहि काइ पडइ दुर्गति काइ रडवडइ।

. . . .

१—देसाई : जैन-गूर्जर-कविओ भाग ३ पृ० १५८०
२—मुनि विनयसागर सग्रह, कोटा
३—अभय जैन पुस्तकालय कोटा
४—देसाई : जैन साहित्य का सक्षिप्त इतिहास पृ० ५१६
५—अभय जैन-पुस्तकालय, बीकानेर। मुनि विनयसागर सग्रह, कोटा
६—प्राचीन गुजराती गद्य सदर्भ : पृ० ६६
७—अभय-जैन-पुस्तकालय बीकानेर

२—ऐतिहासिक-गद्य-साहित्य

जैन-श्वेताम्बर तपागच्छीय श्री जिनवर्धन की स० १४८२ में लिखित "गुर्वावली"[1] इस काल की एक मात्र ऐतिहासिक गद्य-रचना है। जैन-शासक-सघ के तपागच्छ आचार्यों की नामावली और उनका वर्णन इसका विषय है। इनमे जैनों के चौवीसवे तीर्थंकर महावीर स्वामी से स० १४८२ में होने वाले पचासवे पट्टधर आचार्य श्री सोमसुन्दर सूरि तक के आचार्यों का विवरण है।[2]

ऐतिहासिक महत्व के साथ साथ इस गुर्वावली की भाषा अधिक आकर्षक है। इसमें पद्यानुकारी अर्थात् अन्त्यानुप्रास युक्त गद्य का प्रयोग हुआ है। इसकी भाषा मे प्रवाह, गति एव रोचकता है। क्रिया पदों की अपेक्षा समास प्रधान पदावली का प्रयोग अधिक किया गया है।

गद्य का उदाहरण—

जिम देव माही इन्द्र, जिम ज्योतिश्चक्र माहि चन्द्र।
जिम वृक्ष माहि कल्पद्रुम, जिम रक्त वस्तु माहि विद्रुम।
जिम नरेन्द्र माहि राम, जिम रूपवन्त माहि काम।
जिम स्त्री माहि रभा, जिम वादित्र माहि भभा।
जिम सती माहि सीता, जिम स्मृति माहि गीता।
जिम साहसीक माहि विक्रमादित्य, जिम ग्रहगण माहि आदित्य।
जिम रत्न माहि चिन्तामणि, जिम आभरण माहि चूड़ामणि।
जिम पर्वत माहि मेरु भूधर, जिम गजेन्द्र माहि एरावत सिधुर।
जिम रस माहि घृत, जिम मधुर वस्तु माहि अमृत।
तिम सांप्रतिकालि सकल गच्छ अन्तरालि।
ज्ञानि, विज्ञानि तपि जपि शमि दमि सयमि करी अतुच्छ,
ए श्री तपोगच्छ, आचदार्क जयवतउ वर्त्तइ।

.... . .

१—अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर
२—मोहनलाल दुलीचन्द देसाई : "भारतीय-विद्या" वर्ष १ अङ्क २ पृ० १३३

३—कलात्मक-गद्य-साहित्य

इस काल में लिखित कलात्मक-गद्य-साहित्य की दो महत्वपूर्ण रचनायें मिलती हैं। पहली एक जैन आचार्य की लिखी हुई धर्म कथा है और दूसरी एक चारण कवि की वीर-रसात्मक-गाथा। दोनों वचनिका, शैली में लिखी गई हैं जिसमें गद्य में भी, पद्य की भांति अन्त्यानुप्रास का प्रयोग होता है। यह रचनायें निम्न प्रकार हैं :—

१—पृथ्वीचन्द्र वाग्विलास[1]

इसकी रचना आंचलगच्छीय माणिक्यसुन्दर सूरि[2] ने स० १४७८ वि० में की थी। यह आचार्य श्री मेरुतु ग के शिष्य थे।[3] श्री जयशेखर सूरि (सं० १४००—१४६२) इनके भाई थे। श्री माणिक्यसुन्दर सूरि के जीवन के सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञात नही है। इनकी रचनायें गुणवर्माचरित्र, सत्तरभेदी पूजा कथा, चतुःपर्वी कथा, शुकराज कथा, मलयसुन्दरी कथा, संविभाग व्रत कथा, पृथ्वीचन्द्र चरित्र हैं। इन सब में अतिम रचना बहुत अधिक महत्व की है। यह राजस्थानी गद्य साहित्य में कलात्मक गद्य का सर्वप्रथम उदाहरण है।

"पृथ्वीचन्द्र-चरित्र" में महाराष्ट्र के पहुठाणपुर पट्टण के राजा पृथ्वीचन्द्र तथा अयोध्या के राजा सोमदेव की पुत्री रत्नमजरी की प्रणय-कथा है। रत्नमंजरी को प्राप्त करने की दैवी–प्रेरणा पृथ्वीचन्द्र को स्वप्न द्वारा मिलती है। उसके स्वयवर में वह ससैन्य पहुंचकर वरमाला प्राप्त करता है। इसी समय बैताल माया का प्रसार कर उसे (रत्नमंजरी) ले जाता है। किन्तु अन्त में पृथ्वीचन्द्र देवी की अनुकम्पा एव सहायता से उसे पुनः प्राप्त करता है।

इस छोटे से कथानक पर विद्वान लेखक ने अपनी रचना को आधारित किया है। देवी और बैताल जैसी अलौकिक शक्तियों की ओर भी

१—कस्तूर सागर भंडार, भावनगर : प्राचीन गुजराती-गद्य-संदर्भ में कुछ अ श प्रकाशित।

२—देसाई : जैन साहित्य का संक्षिप्त इतिहास टि० ६८१, ७०८, ७१५

३—देसाई : जैन गूर्जर-कविओ भाग २ पृ० ७७२

उसका ध्यान गया है। नायक को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पडता है। जैन आचार्य तथा देवी जैसी सात्विक शक्तियों की सहायता से वह सफल होता है। इन कठिनाइयों के तीन प्रमुख स्थल हैं;– १–वन २–संग्राम ३–स्वयंवर। इन तीनों स्थलों पर रुकता हुआ कथानक प्रधान कार्य "रत्न मजरी की प्राप्ति" की ओर बढ़ जाता है। इस प्रकार धर्मनिष्ठा एव कष्ट सहिष्णुता से वांछित फल की प्राप्ति होती है। यह इस कृति की रचना का मूल उद्देश्य है।

वस्तु वर्णन इस रचना की विशेषता है जिसमें वस्तु-परिगणन-शैली का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार की शैली प्राय अरोचक एव मन को उकता देने वाली होती है। किन्तु माणिक्यसुन्दर ने इन दोनों में से एक भी दोष नहीं आने दिया है। सात द्वीप, सात क्षेत्र, सात नदी, ६ पर्वत, बत्तीस सहस्र देश नगर, राज सभा, नायक, नायिका, वन. सेना, हाथी, घोडा, रथ, युद्ध, स्वयबर, लग्नोत्सव, भोजन-समारम्भ, स्नान आदि का विस्तृत विवरण माणिक्यसुन्दर ने दिया है। उदाहरण के लिये वन का चित्र देखिये :—

"मार्ग जातां आवी एक अटवी। हिव ते किसी परि वर्णविवी। जेह अटवी माहि तमाल, ताल (आदि अनेक वृक्षों की नामावली) प्रमुख वृक्षावली दीसइ, बीहता सूर्य तणा किरण माहि न पइसइ। अनइ किहांइ सिवा तणा फेत्कार, घूक तणा घूत्कार, व्याघ्र तणा घुरहराट, न लाभई वाट नइ घाट। मांहि वानर परम्परा उछलइ, मदोन्मत्ता गजेन्द्र गुलागलइ। सिंहनाद भयभीत मयगल खलभलइ। जिस्या दवि दाधा खील, तिस्या भील। सूअर घुरकइ चीत्रा बुरकइ। वेताल किलकिलइ, दावानल प्रज्वलइ। रीछ साचरइ, विरुत्तणा यूथ विचरइ। इसी महा रौद्र अटवी।

ऋतुवर्णन और प्रकृति चित्रण बहुत ही स्वाभाविक एव रोचक है। ऋतु विशेष में प्रकृति का कैसा शृ गार होता है इसका सूक्ष्म विवेचन यहां पर मिलता है। इससे पूर्व इस प्रकार के प्रकृति-चित्रण के उदाहरण नहीं मिलते। अनुकरणात्मक शब्दों का चयन, रूपक एव उपमाओं का हृदय-ग्राही प्रयोग इसकी विशेषता है। प्रकृति के सुन्दर शब्द चित्र सजीव एव आकर्षक बन पाये है। उदाहरण के लिए वर्षा और बसंत के चित्र देखे जा सकते हैं। दोनों स्थलों पर अनुकूल शब्दावली के कारण अनुपम दृश्य प्रस्तुत हुए है।

वर्षा—

" .. .... विस्तारिउ वर्षाकाल जे पंथी तणउ दुकाल जाणिइ वर्षाकालि। मधुर-ध्वनि मेघ गाजइ, दुभिक्ष तणा भय भाजइं, जाणे सुभिक्ष भूपति आवतां जयढक्का बाजइ। चहुँ दिशि बीज झलहलइ, पंथी गरभणी पुलइ। विरीत आकाश, सूर्य चन्द्र परिपास राति अंधारी लवइं तिमिरी। उत्तरनउ ऊनयण, छायउ गयण। दिसि घोर, नाचइं मोर। सधर बरसइं धराधर। पाणीतणा प्रवाह खलहलइं, वाड़ि ऊपर वेल वलइं। चीखलि चालतां शकट स्खलइ, लोक तणा मन धर्म उपरि वलइं। नदी महापूरि आवइ, पृथ्वी पीठ प्लावइं। नवां किसलय गहगहइ, वल्ली वितान लहलहइं। कुटुम्बी लोक माचइं। महात्मा वडटा पुस्तक वांचइं। पर्वतइ नीझरण बिछूटइं, भरिया सरोवर फूंटइं . "

बसंत—

महरिया सहकार, चपक उदार वेउल बकुल, भ्रमर सकुल कलरव करइं कोकिल तणा कुल। प्रवर प्रियगु पाडर निर्झर जल विकसित कमल। राता पलास, सेवभी वास। कुंद मुचकुंद महमहइ नाग पुन्नाग गहगहइ। सारस तणी श्रेणिदिसि वासीइं कुसुम रेणि लोक तणे हाथि वीणा वस्त्राडम्बर झीणा। धवल शृंगार सार मुक्ताफल तणा हार। सर्वांग सुन्दर, वन माहि रमइ भोग पुरंदर हिंडोलइं हीचइं, भीलतां वादिइं, जलिइ सींचइ।

भाषा की दृष्टि से इस ग्रंथ का महत्व बहुत अधिक है। सम्पूर्ण रचना मे अनुप्रासान्त-पदावली का प्रयोग किया गया है। राजस्थानी भाषा की कोमलता एवं मोहारिता के उदाहरण इस ग्रंथ में देखे जा सकते हैं। यह ग्रंथ राजस्थानी का सबसे पहला साहित्यिक रूप है। अनुप्रासान्त-शब्दावली का उदाहरण निम्नलिखित है :—

"उद्भमंताण शखाण सगीपाण खरमुहीयाण, अहम्मताण पणवाण पडहाण अफालिज्जताण भभाण, झलरीण दुंदुभीण अलिप्पताणं मुखाण सुक्तिगाण नदीमुक्तिगाण"

इस प्रकार के उदाहरण इस कृति मे कई जगह मिलते है।

सम्पूर्ण कथा का दृष्टिकोण धार्मिक है। धार्मिक-शिक्षा के उद्देश्य से ही इसकी रचना हुई है। सदुपदेश एवं चरित्र-निर्माण इसका आधार

हैं। पाप और पुण्य की मीमांसा की गई है। धार्मिक गद्य का उदाहरण देखिये :—

"अहो भव्य जीव। ए इस्यां धर्मनां फल जाणिवां। कवण कवण पहिलुं तां उत्तमकुलि अवतार, ए धर्म तणां फल सार। जइ जीव नीच कुलि अवतरइ, तु किसउं पुण्य करइ। एह विश्व मांही एक माछी तणा कुल, भील तणा कुल, कोली तणा कुल। ईणि परि थोहरी आहेडी वागुरी खाटकी पद्यप घांची चोर वैश्या बाबरी मेय डुंव पाणपेरणीयां तणां पाप तणा कुल जाणिवां।"

अचलदास खीची री वचनिका[1]

इस वचनिका के रचयिता श्री शिवदास हैं। यह जाति के चारण थे। गागरोण (कोटा राज्य के अन्तर्गत) के राजा अचलदास खीची इनके आश्रय दाता थे। इनके जीवन वृत्त के विषय में इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं मिलता।

इस वचनिका मे शिवदास ने अपने आश्रयदाता अचलदास खीची के यश का चित्रण किया है। मांडू के मुसलमान शासक ने गागरोण पर घेरा डाला। अचलदास अपनी राजपूत मर्यादा के अनुसार उसके आगे सिर नहीं झुका सके। उससे लोहा लेने के लिए उन्होंने अपने किले के द्वार बन्द करवा दिये। इसके उपरान्त दोनों मे घोर युद्ध हुआ जिसमे अचलदास वीर गति को प्राप्त हुये। अन्य राजपूत सरदारों ने जौहर किया। शिवदास चारण भी युद्ध के मैदान मे उपस्थित थे किन्तु राजकुमारों की सुरक्षा के लिये जीवित रहकर वे अपने राजा को काव्य रचना के द्वारा अमर कर सके इस उद्देश्य से वे जौहर मे सम्मिलित नहीं हुए। उन्होंने सम्पूर्ण युद्ध को अपनी आंखों से देखा तथा अपने आश्रयदाता को अमर करने के लिए यह रचना की।[2] इस वचनिका का रचनाकाल निश्चित रूप से निर्धारित नही किया जा सकता, पर इतना निश्चित है कि इसकी

१—ह० प्र० अनूप सस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर, मे विद्यमान

२—Tesitori:—A Description catalogue of Bardic and Historical Msc Sect II
—Bardic Poetry . pt. I Bikaner State Page 41

रचना उक्त युद्ध के समकालीन ही है। इस युद्ध का समय श्री टैसीटोरी एवं टाड संवत् १४७५ वि० मानते हैं।[1] श्री मोतीलाल के अनुसार यह समय सं० १४८५ है।[2] इस प्रकार यह निर्णय किया जा सकता है कि यह पद्रहवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध की रचना है।

इस कृति का कथानक ऐतिहासिक है किन्तु काव्य होने के कारण कल्पना एव अतिरजना को भी स्थान मिला है। इस सम्पूर्ण वचनिका के दो प्रधान विषय है १—युद्ध और २—जौहर

युद्ध वर्णन में युद्ध के पहले युद्ध की तैयारियों का वर्णन किया गया है। प्रबल शत्रु से लोहा लेने में ही वीरता का आदर्श है इसी लिए शिवदास चारण ने मांडू के बादशाह की सेना का चित्रण पहले किया है—

"इसउ हिन्दु राजा उपकठि कउण छइ जिकइ मनि पातिसाह की रीस वसी, कउण का माथा-तइ खिसी। कउण सइ दई रूठउ, कउण की माई विवाणी, जू सामउ रहउ अणी पाणी। अउर पातिसाह हुआ आला आगिलेरा, अर भलभलेरा, त्यां तउ चउरासी द्रुग लिया था दिहाड़इ पाडइ। यउ तउ सुरताण दूसरउ अलाउद्दीन जिणी चउरासी द्रुग लिया था एकइ दिहाड़इ।"

"तेणि पातिसाह आयां। सांत्ररि कुण सहइ, कुण सहिजइ,

....

1—The event happened during the earliar half of the fifteen the centuary A D as indirectly brought out by the existing tradition that Achal Das had married a daughter of Rana Mokala of Citora and that the latter was assasinated whilst marching to the aid of his son-in law on the occasion of the siege mentioned above

The date of the assassination of Mokala is given by Coitol as sammuat 1475

Vacanika Ratan Singh Rathorari Mahesdasatari Khiriya Jaga ri Jahi

Introduction p VI.

2—मोतीलाल मेनारिया . राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ० १००

कुण की जुक्ति, कुण की प्राप्ति, कुण की माइ वियाणी जू सामउ रहइ अणी पाणी।"

इसके उपरान्त अपने आश्रयदाता का महत्व शिवदास ने बतलाया है।

अचलेसवर तउ किसउ, उत्तर दक्खिन पूरब पच्छिम कउ भड़ किवाड़ आइन्या अजबपाल। अहकारि रावण दूसरउ धारउ। तीसरउ सिघण छइ दरसण छाया सावइ पाखंड कउ आधार वालउ चकरवति। धन धन, हो राजा अचलेसर। थारउ जियउ जिणि हइ पातसाह सउ खांडउ लियउ।

गौरी की सेना का गागरोण पर आक्रमण, खीची द्वारा उसका उत्तर, चतुरंगिणी-सेना का भिडना, तोपों की गड़गड़ाहट, रणभेरी का नाद आदि सभी मिलकर मानसिक चक्षुओं के सामने युद्ध का जीवित चित्र प्रस्तुत करते हैं। शैली मे कहीं भी शिथिलता नहीं आने पाई है। युद्ध की एक झलक देखिये —

"एक घायल घुलै घूमै लडै लउथडै जाणक मतवालो मतवालै मिलै। जाणक वसतरित केसू फूल्या। रात-दिवस दीसै समान। मुहरत दिया, गढि ढोवा किश्रा। तीन लाख भड आया। इसा, मीरी आंख मुख माकड़ जिसा। करै घात वोले पारखी, बगतर तवा झिवे जाणै आरसी। कवाणां कुजां जिम कुरवरिया, बी लाख मेहाजिम ओसरिया। काली निहाव, गोला बुहाव। गढ़ सिखर उड़ी, कायरां रा जीव तुड़ी। सूरां अछरंग जोध चो जंग। गइडिमल भुरज गगाहिउ, चतुरगणि बका चगा चाहउ। आड़ा अचल तणी अणियाला पनरै सहस जोध पौचाला। सौह सग्राम का समरा, अणी का भमरा। गाहडि का गाडा, फौजां का लाडा। चाचरली का वींद, नरां का नरींद। चौइस आखडी चालण, सुनौ राव ताल्हण। महाराज मांगियों सो पायो। वाचा बधो सुरताण पातसाह आयो। रावजी खत्री धरम रो क्रितारथ कीजै, लका प्रमाण गढि गागुरण लीजै। मीर मुगल साके आण धमधमो उठायो, गढ़ि प्रमाण मोरचो बणायो। धारा पनडा बखडा उजडा, पमाय तेल ले हाम पड्या। इग्यारै हजार नर खलइाण हिन्दू मुसलमाण। राव ताल्हण हूँ गढ मौरचै लडै तो सुरा सोहडां समवडै। जो हूँ गढ पोलयां मरूं, तो च्यार जुगां लग उवरू। उवरै सो उवरो मरै सो मरो। गढ़ खवै अधारो, राव ताल्हण पधारो।"

इस गद्यांश मे तुकांत प्रौढ गद्य की छटा दिखाई दे रही है। वाक्य छोटे छोटे है। कम से कम शब्दों मे अधिक से अधिक अभिव्यजना का संभार है।

साधारण विवरणात्मक स्थलों पर गद्य प्रवाह-प्रधान हो गया है ऐसे स्थलों पर शिवदास ने शब्दों के द्वारा नक्काशी करना छोड़ दिया है। जैसे—

"तितरइ तउ वात कहतां बार लागइ अस्त्री जन सहस चालीस-कउ सघाट आइ संप्राप्तो हुवइ बाली-भोली अबला, प्रौढ़ा षोडस बरस की राणी खत्राणी आपणा आपणा देवर जेठ भरतार का पुरखारथ देखती फिरइ छई।"

जहां इस प्रकार का सीधा सादा गद्य प्रयुक्त हुआ है वहां लेखक अपनी कला प्रदर्शन में नहीं उलझा है। जहां उसने अपनी कला का प्रदर्शन करना चाहा वहां वह रुका है और रुक कर अपने कलाकार होने का पूर्ण परिचय दिया है।

उक्त वचनिका चारणी गद्य का सबसे पहला उदाहरण है इसकी शैली की प्रौढ़ता को देखते हुए अनुमान लगाया जा सकता है कि पंद्रहवी शताब्दी मे इस प्रकार का गद्य-लेखन हुआ होगा। किन्तु अभी तक उसके उदाहरण नही मिल पाये हैं।

जैन वचनिका

सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जैन आचार्यों ने भी वचनिका के प्रयोग किए। ऐसी दो वचनिकायें मिली हैं—१-जिन समुद्रसूरि की वचनिका २-शान्तिसागर सूरि की वचनिका।[1]

प्रथम वचनिका में रावसातल के यश का वर्णन है जिसने जैसलमेर स्थित खरतरगच्छाचार्य श्री जिन समुद्र सूरि को सम्मान पूर्वक अपनी राजधानी में आमंत्रित किया। स० १५४८ के बैसाख मास मे आचार्य श्री जोधपुर पधारे थे। इस वचनिका का वर्ण्य विषय इस प्रकार है—

१—राव सातल द्वारा खरतरगच्छाचार्य श्री जिन समुद्रसूरि को आमंत्रित किया जाना।

२—राव सातल का यश-वैभव का वर्णन।

३—आचार्य का नगर प्रवेश, उनका स्वागत और उत्सव।

१—यह दोनों वचनिकाये "राजस्थानी" भाग २ पृ० ७७ में प्रकाशित हो चुकी है।

दूसरी वचनिका खरतरगच्छाचार्य श्री शान्तिसागर सूरि से सम्बन्धित है। ये खरतरगच्छ की आद्य पक्षीय शाखा के प्रमुख आचार्य थे। सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आप विद्यमान थे। स० १५५६ वि० मे श्री जिनहंससूरि को तथा स० १५६६ में श्री जिनदेव सूरि को आपने आचार्य पद प्रदान किया था।

प्रस्तुत वचनिका का वर्ण्य विषय इस प्रकार है —

१—खरतरगच्छाचार्य श्री शान्तिसागर-सूरि का यश वर्णन

२—राव जोधा के पुत्र श्री सूर्यमल के वैभव का दिग्दर्शन

३—रिणमल के पुत्र कर्णराय द्वारा आचार्य को मेड़ता बुलाया जाना स्वागत समारोह तथा उत्सव।

४—जोधपुर मे श्री जिणराज ठाकुर द्वारा उनका प्रवेशोत्सव

५—जोधपुर मे आचार्य का चातुर्मास

यह दोनों वचनिकाये अन्त्यानुप्रास-प्रधान गद्य मे लिखी हुई हैं। श्लोक सस्कृत में हैं। दोनो रचनाओं के लेखको का नाम ज्ञात नहीं है। जैन-गद्य-साहित्य मे वचनिका-शैली के यह प्रथम प्रयोग हैं।

गद्य के उदाहरण—

१—मोटइ साहसु कीवउ, वड़उ पवाडउ पसीधउ, बदी छोड़ावी तउ, इग्यारस तणउ पारणउ कीधउ। किन दातार रिण झूझार। वाचा अविचल, कोट कटक धन सबल। घूहड़िया माल जगमाल वीरम चउडा रिणमल कुलमडण, श्री योधराणां नदण। .. प्रतापी प्रचड। आण अखड। राजाधिराज, सारइ सर्व काज। —जिन समुद्रसूरि की वचनिका

२—"इसी परि श्री कर्ण दूदा आगलि गाइ हरखित थाई रूढ़ि बुद्धि उपाई कहवा लागउ लाई, अम्हे ताइरा ज खाई, राखि अम्हां-सउ सगाई। अचरज उरही आपि, रिस-वर म सतापि, अम्ह कइ मोटा कर थापि, सकल श्रावक नी आरित कापि।" —शान्तिसागर सूरि की वचनिका

४—व्याकरण गद्य

इस काल मे व्याकरण ग्रथ लिखे गये जिनमे तीन अभी तक उपलब्ध हो सके हैं—१-कुलमडन कृत "मुग्धावबोध औक्तिक" (लेखन

समय सं० १४५०) २-श्री सोमप्रभ सूरि कृत "औक्तिक" ३-श्री तिलक कृत "उक्ति सग्रह" ।

१-मुग्धावबोध औक्तिक[1]-

श्री कुलमडन सूरि तपागच्छ श्री देवसुन्दर मूरि के शिष्य थे । इनका जन्म स० १४०६ में, व्रत ग्रहण स० १४१७ में, सूरि पद सं० १४४२ तथा स्वर्गवास सं० १४५५ मे हुआ ।[2] इनकी रचनाओं मे "मुग्धावबोध औक्तिक" अधिक प्रसिद्ध हैं इसमें राजस्थानी के माध्यम से सस्कृत व्याकरण को समझाने का प्रयत्न किया गया है । इस काल की भापा के स्वरूप को समझने के लिए इससे अधिक सहायता मिलती है ।

सग्रामसिह के "बाल शिक्षा" (स० १३३६) के उपरान्त यह राजस्थानी का महत्वपूर्ण व्याकरण-ग्रंथ है । इसमें "बाल-शिक्षा" की अपेक्षा अधिक विस्तार एव विवेचना के साथ व्याख्या की गई है ।

गद्य का उदाहरण-

छ कारक, सातमउ सम्बन्धु, कर्त्ता, कर्मु, करणु, सम्प्रदानु, अपादानु, अधिकरणु, सम्बन्धु । जु करइ सु कर्ता, ज कीजइ तं कर्म्मु । जीणकरी क्रिया कीजइ त करणु । येह देवतणी वांछा, ये रूषइ कांइ । धरीइ कांइ तं कारकु सम्प्रदान सज्ञकु हुइ । जेह तउ आपाय विश्लेषु हुइ, जेह तउ भय हुइ, जेह तउ आदान ग्रहणु हुइ त कारकु अपादान सज्ञकु हुइ । जेह कन्हइ, जेह माझि, जेह पास, जेह तणउ, जेह तणी, जेह तणउ जेह रहीं इत्यार्थे सम्बन्धु । गामि, पलइ, क्षेत्रि, बनि, पर्वति माझि बाहरि इत्यार्थे अधिकरणु ।

२-औक्तिक-

इसके रचयिता भट्टारक श्री सोमप्रभ सूरि तपागच्छीय जैनाचार्य थे । स्वर्गीय देसाई ने इनका जन्म स० १३१०, दीक्षा ग्रहण स० १३२१, सूरि पद प्राप्ति स० १३३२ और स्वर्गवास स० १३७३ मे माना है ।[3] किन्तु

... .

१—प्राचीन गुजराती गद्य संदर्भ पृ० १७२
२—जैन साहित्य का संक्षिप्त इतिहास टि० १४०, ६५२, ६५३
३—देसाई : जैन गूर्जर कविओ भाग २ पृ० ७१७

इनका व्याकरण ग्रंथ "औक्तिक" पंद्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध की रचना है[1] अतः इनका समय पंद्रहवीं शताब्दी ही सिद्ध होता है।

गद्य का उदाहरण–

"एउ करइ तउ करइ लेइ इत्यादि हुउ करउ लिउ दिउ इत्यादि तथा करावइ लिखावइ यथा लभाउइ लभयति सपादयति उतारउ उत्तारयति हुउ कीजइ तीण कीजइ यथा देवदत्ति मइ हुइ अइ सुइ अइ यथा सेहि आवश्यकु पढिउ, ऐउ सवेहि राजि जाणीइ तथा करतउ लेतउ दतउ इत्यादि तथा गुरि अणु जाणिउ चेलु व्याकरण पढ़त . ।"

३–उक्ति संग्रह–

इस व्याकरण ग्रंथ के लेखक श्री तिलक, देवभद्र के शिष्य थे। इनका उक्ति सग्रह उक्त दोनों व्याकरणो से मिलता जुलता है श्री तिलक के विषय मे और अधिक ज्ञात नही है।

उपाध्यायु मइ पढावइ, दवदत्ति मयि पाणिउ पावइ। पापियउ सांपु मारइ। देवदत्तु पढीयइ, दवदत्त करइ।

५–वैज्ञानिक-गद्य :

वैज्ञानिक गद्य की दो रचनाये इस काल में प्राप्त होती है। इन दोनों का विषय गणित से सम्बन्धित है। १–गणित सार[2] २–गणित पचत्रिशतिका बालावबोध।[3]

१–गणित सार :–

इसकी रचना मूल रूप मे श्री राजकीर्ति मिश्र ने स० १४४६ में अणहिलपुर मे की। श्रीधर नामक ज्योतिषाचार्य ने इस सस्कृत कृति का

१—श्री डी० सी० दलाल पांचवीं गुजराती साहित्य परिषद की रिपोर्ट पृ० ३६

२—श्री भोगीलाल ज० सांडेसरानो : १२ वें गुजराती साहित्य सम्मेलन की रिपोर्ट, इतिहास विभाग पृ० ३६-३६।

३—हस्तप्रति अभय जैन पुस्तकालय, बीकानेर मे विद्यमान

राजस्थानी में अनुवाद किया। अनुवादक एवं मूल लेखक का परिचय नहीं मिलता। इस छोटी सी रचना में मध्यकाल में गुजरात में व्यवहृत .नाप तौल के उपकरण एवं सिक्कों का उल्लेख महत्वपूर्ण है।

गद्य का उदाहरण–

"किसु जु परमेश्वरु, कैलाश शिपरु मडनु, पारवती हृदय रमणु, विश्वनाथु। जिण विश्व नीपजाविउ तसु नमस्कारु करीउ। बालाववोधनार्थु, बाल भणीहि अज्ञान तीह अवबोध जाणिवा तणउ अर्थि, आत्मीय यशोवृद्धयर्थु श्रीधराचार्यु गणितु प्रकटीकृतु।"

२–गणित पंचविंशतिका बालावबोध–

यह इसी नाम के सस्कृत ग्रंथ की टीका है। इसकी रचना शभूदास मन्त्री ने सं० १४७५ में की थी। टीका के साथ साथ सस्कृत श्लोक भी इसमे दिये हुए हैं।

गद्य का उदाहरण–

"मकर सक्रांति थकी घरस जाणि दिन एकत्र करी त्रिगुणा कीजइ। पछइ पनरसइत्रीसां मांहि घातीइ अनइ साठि भाग दीजइ दिनमान लाभइ।"

विकास काल की इन दो शताब्दियों मे राजस्थानी गद्य की रूपरेखा ही बदल गई। अब उसका मार्ग निश्चित हो गया। चौदहवीं शताब्दी में केवल स्फुट टिप्पणियां लिखी गई थीं किन्तु पद्रहवी शताब्दी के प्रारम्भ से ही राजस्थानी गद्य में ग्रंथ निर्माण की योजना होने लगी। जैन आचार्यो ने अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व से इस कार्य मे सक्रिय सहयोग दिया।

गद्य के विकास की तीन दिशाये इस काल में मिलती है—१–भाषा के क्षेत्र में २-शैली के क्षेत्र में ३–विपय के क्षेत्र मे।

प्रयास काल की भाषा, स्वाभाविक रूप से, घुटनों चलते हुए बालक की भांति थी जो उठने के प्रयास मे कई बार गिरता है। इतने ही उत्थान पतन इस काल की भाषा में हुए और अन्त मे वह अपने पैरों पर खड़ी हो गई। शब्द-चयन और वाक्य-विन्यास में आशातीत सुधार हुआ इससे भाषा में प्रवाह एव रोचकता आई।

टिप्पणी शैली का इस काल में में सर्वथा अभाव मिलता है। बालावबोध की टीकात्मक शैली अधिक अपनाई गई। इस शैली की दो प्रमुख विशेषताये है :— १-सरल से सरल भाषा में अधिक से अधिक विचारों की अभिव्यजना करना २-दृष्टान्त रूप मे कथाओं का प्रयोग इसके अतिरिक्त चारणी गद्य की वचनिका शैली, व्याकरण शैली एव ऐतिहासिक विवरणात्मक-शैली के प्रयोग हुए।

विषय के क्षेत्र मे भी क्रान्ति हुई। जैन धार्मिक गद्य के अतिरिक्त चारणी ऐतिहासिक गणित तथा व्याकरण सम्बन्धी विषयों पर भी गद्य लिखा गया। चरित्र चित्रण, प्रकृति वर्णन, युद्ध की तैयारियां और युद्ध, विवाह प्रेम आदि कई पक्षो मे प्रौढ गद्य का प्रयोग हुआ। इस प्रकार विषय मे विस्तार एव विषय में अनेक रूपता आई।

चतुर्थ — प्रकरण

विकसित - काल

१६०० से १९५० तक

राजस्थानी गद्य का विकास २

विकसित काल

राजनैतिक-क्षेत्र में इस समय तक शान्ति हो गई थी। मुसलमान शासक अपनी हिन्दू जनता को प्रसन्न रखने का प्रयास करने लगे थे। अब सामन्त-काल का संघर्ष समाप्त प्रायः हो चुका था। हिन्दू-मुसलमानों के सामाजिक सपर्क से दोनों संस्कृतियों में आदान-प्रदान के भाव जागृत हो रहे थे। लोक-मानस भक्ति की ओर झुक रहा था।

इस प्रकार के अनुकूल वातावरण में राजस्थानी गद्य का विकास भी हुआ। प्रायः सभी विषयो के लिये इसका प्रयोग किया गया। पिछले काल में जिन पांच धाराओं में गद्य का प्रवाह बह चला था अब वे धाराएँ गहरी और विस्तृत हो चलीं।

१—ऐतिहासिक-गद्य-साहित्य

सत्रहवी शताब्दी के पूर्व का राजस्थानी ऐतिहासिक-गद्य बहुत ही कम मिलता है। केवल जैनों ने इस विषय पर लिखने का प्रयास किया था पर वह परिपाटी नहीं चल सकी। सत्रहवीं शताब्दी के उपरान्त ऐतिहासिक गद्य लिखा गया और बहुत लिखा गया। इसके दो विभाग किए जा सकते है १—जैन-ऐतिहासिक-गद्य २—जैनेतर-ऐतिहासिक गद्य। जैनेतर रचनाओं का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण ऐतिहासिक बाते तथा ख्यात-साहित्य है। जैन-ऐतिहासिक-गद्य का क्षेत्र भी इस काल मे विस्तृत हुआ।

१—जैन-ऐतिहासिक-गद्य-

जैन-ऐतिहासिक-गद्य ५ रूपों में प्राप्त है १—वशावली २—पट्टावली ३—ऐतिहासिक टिप्पण ४—दफ्तर बही (डायरी) ५—उत्पत्ति ग्रंथ।

वंशावली :—

मनुष्य की जीवित रहने प्रवृति स्वाभाविक होती है। उसका जीवन सीमित होने हुए भी वह उसे असीम बनाना चाहता है। इसकी तुष्टि वह दो प्रकार से करता है, पहली सतान रूप में दूसरी इतिहास रूप में। स्वयं

मर्त्य होकर भी वह संतान या वंश परम्परा के रूप में अनन्त काल तक जीवित रहने का अभिलाषी रहता है। इसीलिये सन्तान काम्य होती है। इतिहास-प्रसिद्ध होने के लिए वह असाधारण कार्य करता है। इन दोनों का एक समन्वित रूप भी है। जिसका उदाहरण "वंशावली" मे मिलता है। अन्य जातियों की भाति जैनियों मे भी प्राचीनकाल से वश-विवरण लिखा जाता रहा है, कुलगुरु और भाट इस कार्य को करते रहे हैं। पीढ़ियों के नामों के साथ-साथ प्रत्येक पीढ़ी का सक्षिप्त इतिहास इनमें दिया जाता है। आज भी यह परम्परा अवरुद्ध नही हो पाई है। जेन श्रावकों की कई वंशावलियां आज इन लेखकों के पास प्राप्त हो सकती है। इन वशावलियों के प्रमुख विपय निम्नांकित होते हैं :—

१—श्रावकों के वशों और पुरुपों के नाम तथा विवरण और उनके महत्वपूर्ण कार्य।

२—कौन वश कहां से कहां फैला।

३—वंशों की महत्वपूर्ण घटनाओं का उल्लेख

४—कही कहीं वशजों की विस्तृत नामावली

५—वशजों के स्थान का पूर्ण पता आदि

"ओसवाल वंशावली"[1] "मुहतां बछावतां री वशावली"[2] "श्रीसाल-वंशावली"[3] ये तीन वंशावलियां उदाहरण के लिये देखी जा सकती हैं। इन वंशावलियों में बोलचाल की भापा का प्रयोग किया जाता है—

गद्य का उदाहरण—

'करमचन्द सांगावत रो प्र० बेटा २ भागचन्द १ लखमी चन्दर, भागचन्द रो बेटा १ मनोहरदास १ राजा सूरजसिंघ मुहतां ऊपरि कोपियो तिवारे फौज विदा कीधी, माणस १००० मेली साथ घर दोलो फिरीयो। भागचन्द पौढीया था, लखमीचन्द अनै मनोहरदास दरबार गया था। भागचन्द जी सूता जागीया तिवारे वहू मेवाड़ी जी मालिम कीयो राज उपरि फौज आई।— —मुहता बछावतां री वशावली

१—अ० जै० पुस्तकालय, बीकानेर में प्राप्त

२—अ० जै० पु०, बीकानेर में प्राप्त

३—अ–जैनाचार्य श्री आत्मानन्द जन्म शताब्दी स्मारक ग्रंथ पृ० २०४
आ–आत्माराम शताब्दी-ग्रंथ इ–जैन-साहित्य-संशोधक वर्ष १ अक ४

४—युगप्रधान जिनचन्द्र सूरि

पट्टावली–

पट्टावली लिखने की परिपाटी भी प्राचीन है। सस्कृत एव प्राकृत में भी उनके लिखने की प्रथा प्रचलित थी। अत: कालान्तर में भाषा (राजस्थानी) में भी ये लिखी जाने लगी। इनके विषय निम्नलिखित हैं—

१—गच्छोत्पत्ति का वर्णन
२—एक गच्छ से निकले अनेक उपगच्छ तथा उनकी साखा प्रशाखाओं का उल्लेख
३—विविध गच्छों के पट्टधर आचार्यों के जन्म, दीक्षा, आचार्य पद-प्राप्ति एव मृत्यु आदि के सवत्
४—उनके द्वारा किये गये विहारों का वर्णन
५—उनके प्रमुख शिष्यों एव उनके द्वारा लिखे गये ग्र थों का विवरण
६—उनके चमत्कारो का उल्लेख
७—उनके समय के प्रमुख श्रावक, उनके द्वारा किये गये धार्मिक-उत्सव आदि।

इन पट्टावलियों का ऐतिहासिक महत्व है। जिन आचार्यो के जीवन-काल मे इनका निर्माण होता था उन तक का पूर्ण विवरण इनमे मिल जाता है। इसके साथ साथ आनुषगिक रूप से तत्कालीन इतिहास की अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं पर भी इनके द्वारा प्रकाश पड़ता है। प्राचीन इतिहास की अनेक गुत्थियो को सुलझाने मे ये पट्टावलियां सहायक हो सकती है।

ये सभी पट्टावलियां प्राय एक ही शैली में लिखी गई है। इनमे कुछ बहुत संक्षिप्त हैं और कुछ बहुत विस्तृत। एक ही गच्छ की एक से अधिक पट्टावलियां मिलती है जिनमे प्राय: एकसा ही विषय रहता है।

उदाहरण के लिये विस्तार से लिखी गई ४ पट्टावलियो को लिया जा सकता है १–कडुआ मत पट्टावली[1] २–नागौरी लु कागच्छीय पट्टावली[2] ३–वेगड़गच्छ (खरतर) पट्टावली[3] ४–पिप्पलक शाखा पट्टावली।[4]

१—अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर
२—वही
३—वही
४—वही

इनमें प्रथम पट्टावली सबसे प्राचीन है। इसकी रचना सं० १६८५ में हुई। इसमें कडुआ मत गच्छ के आचार्यों का विवरण है। प्रारम्भ मे युग प्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि को नमस्कार किया गया है। दूसरी मे नागौरी लुंकागच्छ के पट्टधर आचार्यों का इतिहास है। तीसरी पट्टावली मे स० १७८१ तक होने वाले ६७ जैन आचार्यों का उल्लेख है। अन्तिम आचार्य श्री जिन उदयसूरि हैं। चौथी रचना गुव्बर ग्राम वासी गौतम गोत्रीय वसुभूति ब्राह्मण से प्रारम्भ होती है इसका रचना काल सवत् १८६२ है।

इन पट्टावलियों का गद्य वंशावलियों के गद्य की भांति जन-प्रचलित-भाषा का उदाहरण है।

गद्य का उदाहरण—

१—"परम गुण निधेय एकोन पंचाशत्तम पद धारिणे श्री जिनचन्द्र-सूरिये नम । कडुआमती नाग गच्छनी वार्ता पेठी बद्ध यथा श्रुत लिखीइ छइ। तंडोलाइ ग्रामे नागर ज्ञातीय वृद्ध शाखायां महं श्री ५ कान्हजी भार्या बाई कनकादे स० १४९५ वर्षे पुत्र प्रसूत नामतः महं कडूआ बाल्यतः प्रज्ञावान् स्तोक दिने भाई प्रमुख सूत्रां भणी चतुरपणइ आठमा वर्ष थी हरिहर ना पद गंध अरइ केत-लइकि दिनान्तर पल्लविक श्राद्ध मिल्यो।"

—कडूआ मत पट्टावली सं० १६८५

२—"तत्पट्टे श्री शिवचन्द सूरि सं० १५२६ हुवा तिके शिथिलाचारी स्थान पकड़ी ने बैसी रह्या। साधु रा व्यवहार मात्र सु रहित हुवा। सूत्र सिद्धान्त बांचे नही, रास भास बांचण में लागा। ते एकदा अकस्मात शूल रोगै करी मृत्यु पाम्यो। तिण रे शिष्य केवलचन्द जी १, माणकचन्द जी २, दोय हुआ। तिण माहे देवचन्द जी तो व्यसनी भांग अमल जरदो खावै। अर माणकचन्द जी जती रो आचार व्यवहार राखे।"

—नागौरी लु कागच्छीय पट्टावली

३—" तत्पट्टे श्री जिनपद्म सूरि स० १३९० वर्षे श्री देरावरै पट्टाभिषेक बाला धवल सरस्वती वरलब्ध महाप्रधान थया।

तत्पट्टे श्री जिनलब्धि सूरि स० १४०० वर्षे आसाढ़ वदि ६ दिने पट्टाभिषेक थया। तत्पट्टे श्री जिनचन्द्र सूरि स० १४०६ वर्षे माह सुदी १० दिने पट्टाभिषेक थया।"

—बेगड़गच्छ पट्टावली

४—तिवारपछइ वाछिग बाहड़देत्रि नन्दन। स० ११३२ जन्म, स० ११४१ दीक्षा, स० ११६९ बैशाख वदि ६ दिनि श्री देवभद्राचार्य सूरिपद दीधउ। एहवा श्री जिनदत्तसूरि ज्योतिर्बल सम्पन्न विक्रमपुरी नगरि मारी निवर्त्तावी ५०० शिष्य दीक्षा दायक।

—पिप्पलक शाखा पट्टावली स० १८९२

पट्टावलियां ख्यातों की अपेक्षा अधिक ऐतिहासिक हैं। कहीं कहीं आचार्यों के प्रभुत्व एवं चमत्कार को दिखाने के लिए अभौतिक एवं अलौकिक तत्वों का समावेश अवश्य मिलता है। इनको निकाल देने से यह शुद्ध इतिहास का अंग मानी जा सकती है।

३—दफतर बही (डायरी)

स्मृति-संचय के रूप में लिखी गई कुछ बहियां ऐसी भी मिलतीं हैं जिनमें रोजनामचे की भांति दैनिक व्यापार का संग्रह रहता है। इनमें विषय या घटनाक्रम नहीं होता। यह डायरी - शैली में लिखी गई हैं। इस प्रकार की बहियां सामयिक उपयोगिता रखने के कारण अधिकांश रद्दी की टोकरी में डाल दी गई। उदाहरण के लिए अभय-जैन-पुस्तकालय में विद्यमान एक १२ पत्र की दफतर बही ली जा सकती है। इसमें सं० १७९१ से स० १९०४ तक विभिन्न समयों में विभिन्न व्यक्तियों द्वारा लिखी गई घटनाओं का उल्लेख है। जैसेः—

'संवत् १८०६ वर्षे फाल्गुन वदि ११ इष्ट घट्य ११।२५ तदा गुलाल चंद रै शिष्य विजयचंद री दीक्षाः दीक्षा रौ ग्रंथ रामचन्द्र चंद्रिका भंडार दाखल कीधो।"

४—ऐतिहासिक टिप्पण

जैन विद्वानों द्वारा संग्रहीत ऐतिहासिक टिप्पणियों के संग्रह भी मिलते हैं। इनमें प्रकीर्णक ऐतिहासिक वातों का संग्रह होता है। ये संग्रह बांकीदास की ख्यात की शैली के हैं। उदाहरण के लिए आचार्य जिनहरिसागर सूरि के शास्त्र-संग्रह में एक पुराने गुटके[1] में संग्रहीत

१—गुटका मुनि विनयसागर भंडार, कोटा में विद्यमान

टिप्पण को लीजिए। इसके मुख्य विषय इस प्रकार हैं :—

१—पुराने शहरों की स्थापना का समय निर्देशन।
२—राठोड़ों से पूर्व मारवाड़ के प्रादेशिक भूमिपति।
३—नवकोट मारवाड़ का भौगोलिक परिचय।
४—राजपूतों की भिन्न भिन्न शाखाओं की नामावली।
५—उदयपुर के राज-वंश की सूची इत्यादि

गद्य का उदाहरण—

"स० १६१४ चैत वदि ६ निबाब कासम खान जैतारण मारी राठौड़ रतनसिंघ खींवावत काम आयो। कोट मांहि छतरी छै। कोट तो ऊदा सूजावत करायो छै"

५—उत्पत्ति-ग्रंथ

१—अंचलमतोत्पत्ति[1] २—रिषमतोत्पत्ति[2] इन दोनों उत्पत्ति ग्रंथों में मत विशेष की उत्पत्ति का वर्णन किया गया है। मत की उत्पत्ति किस समय हुई, कौन उसके आदि प्रवर्तक थे, उससे पूर्व वह मत किस अवस्था में था आदि का उल्लेख इन ग्रंथों में है।

१ जैनेतर-ऐतिहासिक-गद्य

ख्यात-साहित्य

"ख्यात" का आरम्भिक रूप—

"ख्यात" वंशावली का विकसित रूप है। वंशावली लिखने की परम्परा पौराणिक काल से मिलती है।[1] यह परम्परा आज भी उसी प्रकार चली आती है। जब से पश्चिमी भारत से राजपूत-शक्ति का उदय हुआ, प्रशस्ति-लेखन के रूप में यह परिपाटी चलती रही। ईसा की चौदहवीं शताब्दी से यह प्रशस्ति-लेखन प्रारम्भ हुआ।[2] मालवा के परमारों की उदयपुर-प्रशस्ति,[3] जोधपुर-प्रशस्ति[4] (प्रतिहारों की), गहलोतों की आबू प्रशस्ति[5] इसके प्रारम्भिक उदाहरण हैं। यह प्रशस्तियां भट्ट कहलाने वाले संस्कृत के विद्वान ब्राह्मण कवियों के द्वारा लिखी जाती थीं। ईसा की चौदहवीं-शताब्दी के उपरान्त संस्कृत के स्थान पर तत्कालीन लोक-भाषा में ये प्रशस्तियां लिखी जाने लगीं। फलस्वरूप भट्ट अपने संस्कृत ज्ञान को भूलने लगे। भाषा का ज्ञान प्राप्त करना उनके लिए आवश्यक हो गया।

ख्यातों का आरम्भ—

इस प्रकार प्रशस्ति और वंशावलियों के रूप में ख्यातो का आरम्भिक रूप मिलता है जो धीरे धीरे विस्तृत होता गया। सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में अकबर के समय में अबुल फजल ने "आईने-अकबरी" की

—

१—टैसीटोरी जे० पी० ए० एस० बी० (न्यू सीरीज), खंड १५, नं० १, सन १९१९ पृ० २०

२—टैसीटोरी, वही पृ० २१

३—एपीग्रेफिक इंडिका खण्ड १ पृ० २२२

४—जनरल एण्ड प्रोसीडिंग्स् ऐशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल सन् १८९४ पृ० १–९

५—इंडियन एन्टीक्वेरी खण्ड १६ सं० १८८७ पृ० ३४५

रचना की, इसके उपरान्त देशी राज्यों में भी ख्यातों का लिखा जाना प्रारम्भ हुआ[1]। अकबर ने अपने शासनारूढ होने के ६ वर्ष उपरान्त सन् १५७४ में एक इतिहास विभाग की स्थापना की[2]। तत्कालीन राजपूत-नरेश अकबर की इस इतिहास प्रियता से प्रभावित हुए। उन्होंने भी अपने अपने राज्यों में इतिहास लिखने के विभागों की स्थापना की। इससे पूर्व विस्तृत इतिहास लिखने की परिपाटी नही के बराबर थी।[3] अकबर की इच्छा या प्रेरणा से, इस प्रकार, देशी राज्यों में इतिहास लिखा जाना प्रारम्भ हुआ। इस इतिहास लेखन को प्रोत्साहन देने वाले दो प्रमुख कारण थे -१ अकबर के दरबार में राजस्थान के कुछ राजाओं को छोड़कर प्रायः सभी राजा रहते थे। अपने गौरव को बनाये रखने तथा दूसरों को नीचा दिखाने के लिए ये राजा अपने इतिहास को अतिशयोक्तियों से सजाकर प्रकाशित करते थे। यह इतिहास उनकी मान मर्यादा का रक्षक समझा जाता था। २-अकबर के सम्मुख प्रतिष्ठा पाने के दृष्टिकोण से भी इन राजाओं ने अपने इतिहास सकलित किए। यह इतिहास ही ख्यात के नाम से प्रसिद्ध हुए।

ख्यातों के प्रकार—

प्राप्त ख्यातों को प्रधान रूप से २ भागों में विभक्त किया जा सकता है १-राजकीय ख्यातें:—इसके अन्तर्गत वे ख्याते आती हैं जो राजाश्रय में राजकीय विभागों में तैयार करवाई गई। २-व्यक्तिगत ख्याते —ये वे ख्याते हैं जिनकी रचना स्वतन्त्र व्यक्तियों ने अपनी इतिहास प्रियता के कारण की।

१—राजकीय ख्यातें

राजकीय ख्यातों के लेखक राज-कर्मचारी मुत्सद्दी पचौली थे। ये ख्याते पक्षपात से भरी हुई हैं तथा इनमें असत्य घटनाओं की भरमार है।

१—ओझा, गौ० ही० —नैणसी की ख्यात भाग २ पृ० १ (भूमिका)
जगदीश सिह गहलोत राजपूताने का इतिहास पृ० २६

२—टैसीटोरी : बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल सोसाइटी आफ राजपूताना रिपोर्ट सन् १६१६ पृ० २७

३—ओझा, गौ० ही० :-जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथम भाग भूमिका पृ० ५

पुरानी ख्यातों में बहुत कम ख्यातें उपलब्ध हैं क्योंकि १—अकबर और उसके उपरान्त लगभग एक शताब्दी तक मुत्सद्दी ख्यात लेखन का कार्य करते रहे और ये ख्याते इन्हीं लोगों की व्यक्तिगत सम्पत्ति बन गई २—राजपूत नरेशों ने उन लिखी जाने वाली अमूल्य रचनाओं को सुरक्षित रखने की ओर ध्यान नहीं दिया फलत ये ख्याते राज्य के अधिकार से बाहर जाकर या तो नष्ट हो गई या लेखकों की वैयक्तिक संपति बन जाने के कारण प्रकाश में न आ सकीं। आज भी इन लेखकों के वशज इन ख्यातों को प्रकाश में लाते हुए झिझकते हैं[1]।

सबसे प्राचीन उपलब्ध ख्यात—

सबसे प्राचीन उपलब्ध ख्यात "राठौड़ां री वशावली – सीहै जी सूं कल्याण मल जी ताई "[2] है। इस ख्यात की रचना बीकानेर नरेश राव कल्याण मल के शासन के अन्तिम वर्षों में या उनकी मृत्यु (स० १६३०) के ठीक उपरान्त हुई। क्योंकि इसमे राव कल्याणमल जी तक का ही विवरण है। अत: अकबर के समय की यह प्रथम ख्यात है। इसमें राठौड़ों के इतिहास की राव सीहो से राव कल्याणमल जी तक की प्रमुख घटनाये तथा वशावली का उल्लेख है। प्रारम्भिक पक्तियों मे सीहो जी तक राठौड़ों की उत्पत्ति दिखाई गई है। गद्य-शैली सरल है।

गद्य का उदाहरण—

पछै वीरम जी की बइर भटियाणि चूंवडै जी नूं मेल्हि नै सती हुई चांवडै जी नू धरती नू सांपि, नै ताहरा चारण अल्हौ लै नै कालाऊ गयो, नै गोगादेजी थल देवराज कन्हा रहा। पछै गोगादेजी मोटा हुवा। ताहरा जोइयां रौ हेरो कराडियौ नै जोइयौ धीर दे पूगल भाटी राणकदे रै परणीज गयौ हुतौ नै वांसिया गोगादेजी साथ करि नै जोडयै दलै उपरि गया सु दलौ सूवतौ। तेथ न रहै वीजी ठौड रहौ पछै उवा ढाल गोगादेजी गया ताहरा घाउ वाहौ सु दलै रौ जावाई दीकरी सूता हुता तांह नू वाहौ सु वाहण रा ऊधण वास मांचौ वाढि नै चेउ मारिया।

१—जे० पी० ए० एस० बी० (न्यू सीरोज) खण्ड १५ सन् १९१९ पृ० २८

२—ए डिस्क्रपटिव केटेलोग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टौरिकल मेन्युस्क्रिप्टस बार्डिक एण्ड हिस्टौरिकल सर्वे आफ राजस्थान रिपोर्ट सन् १९१९ पृ० ३१ मेन्यु० न० २। अनूप-सस्कृत-पुस्तकालय में विद्यमान

२–बीकानेर रै राठौड़ां री वात तथा वंसावली[1]

इस हस्त प्रति में तीन संग्रह हैं १–राठौड़ां री वात राव सीहै जी सूं राजा रायसिंघ जी ताईं २–जोधपुर रै राठौड़ राजावां री वंसावली ३–बीकानेर रै राठौड़ राजावां री वंसावली। इनमें अन्तिम दो में तो केवल वंशावलियां हैं। प्रथम में राव सीहै जी से राव कल्याणमल के पुत्र राजा रायसिंघ जी तक का वर्णन है। यह ख्यात रायसिंघ जी के शासन काल में (स० १६२८ से स० १६६८ तक) लिखी गई अत सत्रहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध इसका रचना काल माना जा सकता है।

गद्य का उदाहरण–

सीहौ जी षेड गाव आय नै रहीया। पछै श्री द्वारका जी री जात नु हालीया। बीच पाटण सोलंकी मूलराज री रजवार, उठै डेरा कीया सु मूलराज चावोड़ां रो दोहीतो चावोड़ां रे भाटी लाखे फुलाणीं सुं वैर सु लाखे षेटे करण मैं निवला घात दीया तै सु राजरो धणी मूलराज हुवो। सु मूलराज सीहै जी सू मिलीयो कह्यो मारे लाखे सुं वैर छै, थे मारी मदद करो .. ।

३–बीकानेर री ख्यात-महाराजा सुजाणसिंघ जी सूं महाराजा गजसिंघ जी ताईं[2]

इस ख्यात में महाराजा सुजानसिंह जी से महाराजा गजसिंह (सं० १७४७ से १८४४ तक) का विवरण है। बीकानेर नरेश महाराजा सुजानसिंह (स० १७४७–१७६२), महाराजा जोरावरसिंह (स० १७६९–१८०३) तथा महाराजा गजसिंह (मृ० स० १८४४) के शासनकाल का वर्णन, जोधपुर से उनके द्वारा किये गये युद्ध आदि इसके वर्ण्य विषय है।

१—डिस्क्रपटिव केटेलोग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्टस ह० प्र० अनूप० स०-पुस्तकालय बीकानेर मे विद्यमान। मेन्यु० न० ४

२—ए डिस्क्रपटिव केटेलोग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स भाग १ प्रोज क्रौनीकल्स भाग २ बीकानेर स्टेट पृ० २६

गद्य का उदाहरण—

"माह्री ढांढा री सु बुध थी नै बालक था नै भांग आरोगतां तरी तरगा उठती क्यु सोच विचार कियो नहीं तीण सु स० १७८१ मिति आसाढ सुध १३ रात रा सुतां नै छिद्र माय चूक कियो सु हुणहार रा कारण पुठै बड़ौ केहरवाणों हुवो ..."

जोधपुर रा राठौड़ां री ख्यात[1]

यह जोधपुर के राठौड वशी नरेशों का विरवणात्मक इतिहास है। इसमे राठोडों की उत्पत्ति से महाराजा मानसिह तक का विवरण मिलता है। इसके चार बृहद् भागों मे प्रथम अप्राप्य है। महाराजा अजीतसिह, महाराजा अभयसिह, महाराजा रायसिह, महाराजा बखतसिह, महाराजा विजयसिह से महाराजा मानसिह तक के जोवन वृत्त, शासन, रानियां आदि का विवरण दिया गया है। इसमे राव जोधा से पूर्व के दिये हुये सभी सवत् अशुद्ध है आगे के राजाओं के स० भी कही कही दूसरी ख्यातों से मेल नही खाते। [2]

गद्य का उदाहरण—

"जोधपुर माहाराज अजीतसिघ जी देवलोक हुवा आंण दुवाई माहाराज अभैसिघ जी री फिरी ने वखतसिघ जी वडा माहाराज देवलोक हूवां री हकीकत अभैसिघ जी ने लिखी सो दिली खबर पोहती तरै अभैसिघ जी सपाड़ो करवा जमना जी पधारिया। स० १७८१ रा सांवण वद ८ सुकर राजतिलक विराजिया"

५ उदयपुर री ख्यात[3]

इस ख्यात के प्रारम्भ में ब्रह्मा से राजाओं की वश परम्परा का उद्गम माना गया है। १२५ वे राजा सिंहरथ तक केवल राजाओ के नाम मात्र का

१—टैसीटोरी : ए डिस्क्रपटिव केटेलौग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल सर्वे आफ राजस्थान सेक्सन १ प्रोज क्रोनीकल्स भाग १ जोधपुर स्टेट पृ० ७ मेन्यु० न० ३-४
२—ओझा : जोधपुर का इतिहास-प्रथम खण्ड भूमिका पृ० ५
३—ह० प्र० अनूप-सस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर मे विद्यमान

उल्लेख है इसके पश्चात प्रत्येक राजा पर संक्षिप्त टिप्पणियां दी गई हैं। कुल १६६ राजाओं के नाम है। अन्तिम राणा रायसिंह हैं। टिप्पणियों में अश्व, गज, वाद्ययंत्र, रानियां आदि का विवरण है। राणा रायसिंह का राज्यारोहण संवत् १६१० दिया हुआ है इससे स्पष्ट है कि यह ख्यात बीसवीं शताब्दी की रचना है।

गद्य का उदाहरण—

"रावल श्री वैरसिंघ, राणी हाड़ी पुरबाई रा पुत्र वास चत्रकोट, सेन अश्व ७००० हस्ती १४०० पदादित्त ५००० वजत्र ३०० राजा वड़ा परवत्र, सेवा करत समत्र १०२६ राजबैठो, मारवाड़रा घणी राव महाजल थी युध जीत पेत्र सभर राज लोक राणी १६ खवास २ पुत्र ११ आयु वर्ष ३० मा० ६"

६—जोधपुर रा महाराजा मानसिंघ जी री तथा तखतसिंघ जी री ख्यात[1]

इस ख्यात में महाराजा मानसिंह जी के अन्तिम ५ वर्ष तथा महाराजा तखतसिंह जी का स० १६०० से १६२१ तक का विवरण मिलता है। श्री भीमनाथ द्वारा उपस्थित की गई कठिनाइयों, महाराजा मानसिंह की मृत्यु, महाराजा तखतसिंह का राज्यारोहण तथा अन्य तत्कालीन जीवन की झांकियां इसके विषय हे।

गद्य का उदाहरण—

"और भींवनाथ जी उदेमदर वालां री राजरै काम में आग्या हालै सो सरब ओधा खिजमतां तथा जबती वाहाली तथा केद कर बिगाड़णा भीवनाथ जी री दुवायती सु हुवै अर भीवनाथ जी रा बेटा लिखमीनाथ जी माहामंदर रा जिणां रै बाप वेटां रै आपस मे मेल नही "

. ...

१—टैसीटोरी : ए डिस्क्रप्टिव केटेलोग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स सेक्शन १, प्रोज क्रोनीकल्स भाग १ जोधपुर स्टेट पृ० ३३ मेन्यु नं० १०

स्फुट-ख्यातें

इन ख्यातों के अतिरिक्त कुछ ख्याते स्फुट गुटकों मे यत्र तत्र सग्रहीत हैं। "किशनगढ़ की ख्यात[1]" जोधपुर के महाराजा मानसिह के समय मे लिखी गई। यह महाराजा किशनसिह के जन्म तथा उनके द्वारा आसोप की जागीर प्राप्ति से प्रारम्भ होती है। किशनगढ के इतिहास के लिए यह ख्यात उपयोगी है।[2]

"जोधपुर की ख्यात"[3] में रावसीहो जी से महाराजा जसवत सिह जी की मृत्यु तक मारवाड़ के राठोड़ो का इतिहास है इसमे मडोवर का विस्तृत विवरण है।[4]

"अजित विलास"[5] या महाराजा अजीतसिह जी की ख्यात मे

....

१—टैसीटोरी : ए डिस्क्रप्टिव केटेलोग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स सेक्शन १, प्रोज क्रोनीकल्स भाग १ जोधपुर स्टेट पृ० १६ मेन्यु न० १०

२—गद्य का उदाहरण—

"मोटा राजा उदेसिघ जी रा बेटा कीसनसिंघ जी कछावा रा भाणेज राणी पनरगदे रा पेट रा स० १६३६ रा जेठ वद २ रो जनम। मोटा राजा उदैसिघ जी स० १६५१ आसोप कीसनसिघ नै पटै दीवी। "

३—टैसीटोरी ए डिस्क्रप्टिव केटेलौग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स सेक्सन १, प्रोज क्रोनीकल्स भाग १ जोधपुर स्टेट पृ० १७

४—गद्य का उदाहरण—

"आद सहर मडोवर थो। सासत्र मै पद्मपुराण मै इण समत नै मडोवर सुमेर रो वेटो कहै छै तीणरो महातम घणो कहै छै मडलेश्वर महादेव नदी नागदरी सुरजकु ड रो घणो महातम छै।"

५—टैसीटोरी : डिस्क्रप्टिव केटेलौग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स सेक्सन १, प्रोज क्रोनीकल्स भाग १ जोधपुर स्टेट पृ० १८

जोधपुर नरेश महाराजा अजीतसिंह के शासन का वृत्तान्त है। यह सेतराम और सीहो के कन्नोज आगमन से प्रारम्भ होता है।[1]

"जोधपुर की ख्यात"[2] (महाराजा अभयसिंह जी से महाराजा मानसिंह तक) इसमें जोधपुर नरेश सर्व श्री अभयसिंह, रामसिंह, बखतसिंह, विजयसिंह, भीमसिंह तथा मानसिंह का ऐतिहासिक विवरण है। उनके शासन की प्रमुख घटनाओं पर भी प्रकाश डाला गया है।

"राव अमरसिंघ की ख्यात"[3] में जोधपुर के महाराजा गजसिंह के ज्येष्ठ पुत्र राव अमरसिंह के जीवन की एक झांकी है। उनको उत्तराधिकार से वंचित कर आगरा के इम्पीरियल कोर्ट में मृत्यु दंड दिया गया था। इस ख्यात के अंतिमांश से ज्ञात होता है कि प्रस्तुत हस्तप्रति स० १७०३ में लिखी गई प्रति की वास्तविक प्रतिलिपि है। इस प्रकार इस ख्यात का रचनाकाल स० १७०३ निश्चित है।[4]

"खावड़िया राठौड़ां री ख्यात"[5] में खावड़िया राठोड़ों का ऐतिहासिक विवरण है जिन्होंने पहले नीलमा और फिर गिराव को अपनी राजधानी

. ...

१—गद्य का उदाहरण—

"अथ राठौड़ मारवाड़ मै आया तीण री हकीकत लीखते। राव सीहोजी सेतराम रो राव सीहोजी कनवज सु आया स० १२१२ रा काती सुद २ लाखा फुलांणी सुं मार पाटण रा चावड़ा मूलराज नु फतै दीराई नै मूलराज रे वेण सोलंकणी परणीजिया—"

२—टैसीटोरी : ए डिस्क्रप्टिव कैटेलौग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्टस सेक्सन १, प्रोज क्रोनीकल्स भाग १ जोधपुरस्टेटपृ० १६

३—वही : पृ० २१

४—गद्य का उदाहरण—

अमरसिंघ जी रो जनम १६७० रो थो नै १६६० रा मै राजा जी श्री गजसिंघ जी बारबटो दीयो जद पातस्यां स्हाजांहा लाहोर पधारीया थां सु महाराज पीण साथै लाहौर थां नै कंवर अमरसिंह जी बरस २० री उमर मै थां।

५—टैसीटोरी : ए डिस्क्रप्टिव कैटेलोग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्टस सेक्सन १ प्रोज क्रोनीकल्स भाग १ जोधपुर स्टेट पृ० ३५

बनाकर खावड़ प्रदेश पर शासन किया। रिड़मल जगमालौत ने खाबड़ प्रदेश को जीत कर नीलमा को अपनी राजधानी बनाया। अन्त में रावत धनराज एव महाराजा विजयसिह के समय मे वह जोधपुर राज्य मे मिल गया।[1]

"राठोड़ा री ख्यात"[2] में प्रारम्भ से महाराजा अजीतसिह तक के राठोड़ राजाओं का विवरण है। इसमे राठोड़ राजाओं की वशावली तथा सवत् ऐतिहासिक दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण हैं।

इस प्रकार अब जो भी राजकीय ख्याते प्राप्त हैं वे इतिहास लेखन में बहुत अधिक सहायक हो सकती है। ये ख्याते राजस्थानी-गद्य-साहित्य की अपूर्व निधि है।

२—व्यक्तिगत ख्यातें

राजाश्रय मे लिखी गई इन उक्त-वर्णित ख्यातों के अतिरिक्त कुछ ख्यातें लेखकों की व्यक्तिगत रुचि एव इतिहास प्रियता का परिणाम है। इनमे प्रमुख ख्याते इस प्रकार हैं :—

१—नैणसी की ख्यात[3] (संकलन काल सं० १७०७-१७२२)

इस ख्यात के रचयिता मुहणोत नैणसी राजस्थानी के सर्व प्रथम ख्यात लेखक है जिन्होने राजस्थान के इतिहास के लिए प्रचुर सामग्री प्रस्तुत की है। यह मुहणौत गोत्र के ओसवाल महाजन थे। मुहणौत गोत्र की उत्पत्ति राठोडों से मानी गई है[4]। मोहन जी मुहणौत इस गोत्र के

१—गद्य का उदाहरण—

रिडमल जगमालौत खावड़ ने खावड़ मै नीलमो सहर वसाय आप री नीलमै वांधी। पछै रिड़मल रा वस मे गांगो खावड़ियो हुऔ।

२—टैसीटोरी : ए डिस्क्रप्टिव कैटेलोग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स सेक्सन १, प्रोज क्रोनीकल्स भाग १ जोधपुर स्टेट पृ० ३६

३—राजस्थान-पुरातत्व-मन्दिर द्वारा मुद्र्यमाण

४—गौरीशकर हीराचन्द ओझा : नैणसी की ख्यात (द्वितीय भाग) भूमिका पृ० १, हिन्दुस्तानी सन् १९४१ पृ० २६७-६८।

आदि पुरुप थे। सुभटसेन मोहन जी के छोटे भाई थे, इनकी परम्परा में उन्नीसवे वंशधर जयमल हुए जो जोधपुर नरेश राजा सूरसिंह और राजा गजसिंह के समय में राज्य के प्रतिष्ठित पदों पर रहकर सं० १६८८ में जोधपुर राज्य के मंत्री बने। इनकी पहली पत्नी सरूपदे श्री नैणसी की माता थी। नैणसी का जन्म सं० १६६७ वि० मार्गशीर्ष सुदी ४ शुक्रवार को हुआ। बाल्यकाल में इनको पिता ने उपयुक्त शिक्षा दी। ये २२ वर्ष की आयु में उच्च शिक्षा प्राप्त कर लेने के पश्चात राज्य सेवा करने लगे। वीर प्रकृति के पुरुष होने के कारण इन्होंने अपने कार्यो से जोधपुर नरेश महाराजा गजसिंह को शीघ्र ही प्रसन्न कर लिया। संवत् १६८९ मे इनको मगरा के मेरो का दमन करने के लिए भेजा गया, वहां ये अपने कार्य मे सफल हुए। सं० १६९४ में ये फलौधी के नियंत्रक बनाये गए जहां उनको बिल्लोच से युद्ध करना पड़ा। सं० १७०० में महाराजा जसवतसिंह की आज्ञा से इन्होंने बागी महेचा महेसदास को राउघरे मे परास्त किया। संवत् १७०२ में रावत नारायणसिंह के विरुद्ध इनको भेजा गया। उसके उपद्रव को इन्होंने शान्त किया। सवत १७०६ मे जैसलमेर के भाटियों का अधिकार पोकरण के परगने पर था। बादशाह शाहजहा ने यह परगना महाराजा जसवत को प्रदान किया किन्तु भाटियों ने उसे नहीं माना। उनको दबाने के लिये सेना भेजी गई जिसमे नैणसी भी थे। इस प्रकार इनकी वीरता और बुद्धिमानी पर प्रसन्न होकर महाराजा जसवंतसिंह ने सं० १७१४ वि० मे मियां फरासत के स्थान पर इनको अपना प्रधान अमात्य नियुक्त किया। संवत् १७२३ तक यह इस कार्य को करते रहे। इतने समय तक नैणसी ने अपना कार्य बड़ी ही योग्यता के साथ किया।

संवत् १७२४ मे नैणसी तथा इनके भाई सुन्दरसी महाराजा जसवतसिंह के साथ औरंगाबाद मे रहते थे। किसी कारण वश महाराजा इन दोनो से अप्रसन्न हो गए[1] और दोनो को बंदी बना लिया गया। संवत् १७२५ में महाराजा जसवतसिंह ने दोनो भाइयों को एक लाख रुपया दंड रूप मे देने पर मुक्त कर देना चाहा। दोनों भाइयों ने इसे अस्वीकार

. .. .

१—इस अप्रसन्नता का कारण स्पष्ट नही है किन्तु जन-श्रुति के अनुसार ऐसा प्रसिद्ध है कि नैणसी अपने सम्बन्धियों को उच्च पदों पर नियुक्त कर दिया करते थे जिससे स्वार्थी लोग राजकीय व्यवस्था मे घुस आये थे। फलतः राजकार्य मे बाधा पड़ती थी।

किया । इस सम्बन्ध मे दो दोहे प्रसिद्ध है :—

लाख लखारां नीपजै, बड़-पीपल री साख ।
नटियो मू तौ नैणसी, तांबो देण तलाक ।।१।।

लेसौ पीपल लाख, लाख लखारा लावसो ।
तांबो देण तलाक, नटिया सुन्दर नैणसी ।।२।।

इस प्रकार दया-व्यवस्था को अस्वीकृत कर देने पर स० १७२६ मे दोनों को फिर बदी बनाया गया । उनके कारावास की यातनाएँ बढाई गई । दोनों भाइयों को औरगाबाद से मारवाड़ भेजा गया । मार्ग मे इनके साथ चलने वालो ने इनके साथ और भी कठोर व्यवहार किया । जिसके कारण दोनों को अपने ऐहिक-जीवन से घृणा सी हो गई अतः फूलसरी नामक ग्राम मे भाद्रपद वदि १३ स० १७२७ मे दोनो भाइयो ने अपने पेट मे कटारी मारकर अपने बन्दी जीवन का अन्त कर लिया । दोनों भाई कवि थे तथा अपनी बन्दी अवस्था में दोहे बना बनाकर खेद प्रकट किया करते थे जैसे :—

दहाड़ौ जितरै देव, दहाडे बिन नहीं देव हैं ।
सुर नर करता सेव, नैड़ा न आवे नैणसी ।। —नैणसी

नर पै नर आवत नही, आवत है धन पास ।
सो दिन केम पिछाणिये, कहते सुन्दरदास ।। —सुन्दरसी

नैणसी की सन्तति

नैणसी के करमसी, वैरसी तथा समरसी तीन पुत्र थे । नैणसी के आत्मघात के पश्चात जसवतसिंह ने इन तीनो भाइयो को भी मुक्त कर दिया । मुक्त होने पर यह मारवाड़ में नही रहे । नागौर जाकर महाराजा रायसिंह के आश्रय मे रहने लगे । रायसिंह ने अपना सारा कार्य करमसी को सौप दिया । एक दिन रायसिंह की अचानक मृत्यु हो गई । करमसी पर उन्हे विष देने का झूठा सदेह किया गया । फलस्वरूप करमसी जीवित दीवार में चुनवा दिये गये तथा उनके सम्पूर्ण परिवार को कोल्हू मे कुचलवा देने की आज्ञा हुई । करमसी का पुत्र प्रतापसी अपने परिवार के साथ मारा गया । करमसी की दो पत्निया अपने पुत्र सग्रामसी एव सामन्तसी के साथ भागकर किशनगढ़ की शरण मे आई और वहा से फिर बीकानेर चली गई ।

महाराजा जसवंतसिंह के पुत्र महाराजा अजीतसिंह ने जब मारवाड़ पर अपना अधिकार स्थिर कर लिया तब उन्होंने सामन्तसी तथा संग्रामसी को फिर से मारवाड़ बुलाकर सान्त्वना दी।

जोधपुर, किशनगढ़ एव मालवा के मुलथाण में अब भी नैणसी के वशजों का निवास स्थान बताया जाता है, जोधपुर में उनके पास कुछ जागीरे भी है। कुछ राज्य-सेवा भी करते हैं।

नैणसी के ग्रंथ

नैणसी वीर होने के साथ साथ नीति निपुण, इतिहास प्रिय तथा विद्यानुरागी भी थे। उनकी ख्यात उनकी इतिहास प्रियता की साक्षी है।

बाल्यकाल से ही मुहणोत नैणसी को इतिहास के प्रति अनुराग था। उन्होंने ऐतिहासिक वृत्तान्तों का सकलन स० १७०७ से ही प्रारम्भ कर दिया था। उन्हे जो कुछ भी प्राप्त होता उसको ज्यों का त्यों ये अपनी डायरी मे लिख लिया करते थे। चारण, भाट, अनेक प्रसिद्ध पुरुष, कानूनगो आदि से उन्होंने अपनी सामग्री को समृद्ध किया। जोधपुर का दीवान नियुक्त होने पर उन्हें अपने कार्य मे बहुत अधिक सुभीता हो गया। नैणसी के लिखे हुए दो ग्र थ मिलते है १—नैणसी की ख्यात २—जोधपुर राज्य का सर्व सग्रह (गजेटियर)। इनमे प्रथम ग्र थ विशेप महत्वपूर्ण है। सर्वसग्रह मे नैणसी ने पहले परगनों का विवरण दिया है। अमुक परगने का नाम अमुक क्यों पड़ा, उसके कौन कौन राजा हुए उनके महत्वपूर्ण कामो का उल्लेख, जोधपुर के इतिहास मे वे क्यों और कब आये आदि का उत्तर इस सर्वसग्रह में मिलता है। गांवों के विषय मे भी इसी प्रकार का उल्लेख है। अमुक गांव का जागीरदार कौन है, उसकी जमा कितनी है कौन कौनसी फसले होती है, तालाब, नाले, नालियां आदि कितनी हैं, उसके आस पास किस प्रकार के वृक्ष है आदि भौगोलिक वृत्तान्त इस सर्वसंग्रह मे संग्रहीत हैं।

नैणसी की ख्यात

"नैणसी की ख्यात", राजपूताना तथा अन्य प्रदेशो के इतिहास का बहुत बड़ा संग्रह है। इसमें राजपूताना, काठियावाड़, कच्छ, मालवा, बघेलखंड आदि के राज-वशों का वृत्तान्त मिलता है। उदयपुर, डूगरपुर बांसवाड़ा और प्रतापगढ के सिसोदिया, रामपुरा के चन्द्रावत, खेड़ के

गुहिलोत, जोधपुर, बीकानेर, और किशनगढ़ के राठौड़, जयपुर के कछवाह, सिरोही के देवड़ा चौहान, बूंदी के हाडा-चौहानों की विभिन्न शाखायें, गुजरात के चावड़ा एवं सोलंकी, यादव और उनकी सखैया, जाड़ेचा आदि कच्छ और काठियावाड़ की शाखायें, बघेलखण्ड के बघेला, काठियावाड़ के झाला, दहिया, गौड आदि का इतिहास इस ख्यात में संग्रहीत है[1]। राजस्थान के इतिहासकारों के लिये यह ख्यात बहुत ही महत्व की है।

ख्यात के प्रमुख विवरण इस प्रकार हैं :—

१–सिसोदियां री ख्यात— २–बूंदी रा धणियां हाडां री ख्यात— ३–वागड़ियां चहुवाणां री पीढ़ी— ४–दहियां री वात— ५–बुंदेलां री वात— ६–गढबधव रा धणियां री वात— ७–सीरोही रा धणियां देवणां री ख्यात— ८–भायला राजपूतां री वात— ९–सोनगरा चहुवाणां री वात— १०–साचौर रा चहुवाणां री वात— ११–कांपलिया चहुवाणा री वात— १२–खीचियां चहुवाणां री वात— १३–अणहलवाड़ा पाटण री वात— १४–सोलंकियां री वात— १५–जाडेचा लाखानु सोलंकी मूलराज मारियां री वात— १६—रुद्रमालौ प्रासाद सीधराज करायो तिण री वात— १७–कछवाहां री ख्यात— १८–गोहिलां खेड़ राधणियां री वात— १९–सांखला पवांरा री वात— २०–सौढा पवांरा री वात— २१–भाटियां री ख्यात— २२–रावसीहा री वात— २३–कानड़दे री वात— २४–वीरम जी री वात— २५–राव चूंडे जी री वात— २६–गोगा दे जी री वात— २७–अरडकमल चूंडावत री वात— २८–राव रिणमल जी री वात— २९–रावल जगमाल जी री वात— ३०–राव जोधा जी री वात— ३१–राव बीकै जी री वात— ३२–भटनेर री वात— ३३–राव बीकै जी री वात (बीकानेर बसायो तै समय री) ३४–कांधल जी री वात— ३५–राव तीडै री वात— ३६–पताई रावल री वात— ३७–राव सलखे जी री वात— ३८–गढ़ मण्डिया तैरी ख्यात— ३९–राव रिणमल:अहमद मारियौ तै री वात— ४०–गोगा दे वीरम देवौत री वात— ४१–राठौड राजावो रै अन्तेवरां नाम— ४२–जैसलमेर री वात— ४३–दूदै जोधावत री वात— ४४–खेतसी रतनसी औत री वात—४५–गुजरात देस री वात— ४६–पावू जी री वात— ४७–राव गांगे वीरमदे री वात— ४८–हरदास ऊहड़े री वात— ४९–नरै सूजावत खीमै पोह करणे री वात— ५०–जैमल वीरमदे औत राव मालदे री वात— ५१–सीहै सींधल री वात— ५२–राव रिणमल जी री वात— ५३–नरबद सतावत सुपियार

. ...

१—ओझा : नैणसी की ख्यात, प्रथम भाग–भूमिका पृ० ६

दे लायो तै समय री वात— ५४–राव लूणकरण री वात— ५५–मोहिलां री वात— ५६–छतीस राजकुली इतरे गढे राज करै तैरी वात— ५७–पेवारां री वसावली— ५८–राठोड़ां री वंसावली— ५९–पातसाहां गढ़ लिया तैरा संवत— ६०–दिल्ली राजा बैठा तियां री विगत— ६१–सेतराम वरदाई सेनौत री वात— ६२–राठोड़ राजावां रै कवरां नै सतियां रा नाम— ६३–किसनगढ री विगत— ६४–राठोड़ा री तेरै साखां री विगत— ६५–जैसलमेर री ख्यात— ६६–अंगौत नारणौत वगैरे बीकानेर रै सिरदारों री पीढियां— ६७–पातसाहां रा फुटकर संवत— ६८–चन्द्रावतां री वात— ६९–सिखरौ वहैल वे गयौ रहै तै री वात— ७०–उदै उगवणावत री वात— ७१–दूदै भोज री वात— ७२–ख्यामखान्या री उतपत— ७३–दौलतावाद रा उमरावां री वात— ७४–मलकम्बर ने आकूत खा री याददाश्त— ७५–सांगमराव राठौड़ री वात आदि।

ख्यात में दोष–

स० १५०० से पूर्व की वंशावलियां जो प्रायः भाटों आदि की ख्यातों के आधार पर है कही कही पर ऐतिहासिक दृष्टि से अशुद्ध हैं। नैणसी को जो कुछ मिला उसको यथावत ही रख दिया है ऐतिहासिक दृष्टि से उनकी शोध नही की। इसी प्रकार एक ही विषय से सम्बन्ध रखने वाले वृत्तातों को वैसा का वैसा ही लिख दिया है जिनमे कुछ अशुद्ध भी है संवत भी कही कही गलत हो गये हैं।[1]

ख्यात का महत्व–

१–ऐतिहासिक :– देखने से पता चल सकता है कि इतिहास की दृष्टि यह ख्यात बहुत ही महत्वपूर्ण है। इसके संवत् तथा घटनाये ऐतिहासिक आधार पर है। "वि० स० १३०० के बाद से नैणसी के समय तक राजपूतों के इतिहास के लिये तो मुसलमानों की लिखी हुई तवारीखों से भी नैणसी की ख्यात कही कही विशेष महत्व की है। राजपूताने के इतिहास मे कई जगह जहा प्राचीन शोध से प्राप्त सामग्री इतिहास की पूर्ति नही कर सकती वहां नैणसी की ख्यात ही कुछ कुछ सहारा देती है।[1] वस्तुतः

राजपूत नरेशों के इतिहास को जानने के लिये तो अन्य साधन मिल मिल सकते है किन्तु उनकी छोटी छोटी शाखाओं और सरदारो के विषय मे जानने के लिये तो नैणसी की ख्यात के अतिरिक्त कुछ भी नही ।[1]

साहित्यिक–महत्व

ऐतिहासिक उपयोगिता के अतिरिक्त "नैणसी की ख्यात" का साहित्यिक महत्व भी कम नही। स० १७०७ से १७२२ तक के १५ वर्ष के समय में नैणसी को जो भी वृत्तान्त मिला उसको उन्होने लिख लिया। इस प्रकार इस ख्यात में २७८ वर्ष पूर्व की राजस्थानी भाषा पर प्रकाश पड़ता है। इसकी भाषा प्रौढ राजस्थानी है। राजस्थानी के गद्य के विकास को जानने के लिए "नैणसी की ख्यात" की भाषा बहुत काम की है। समय समय पर जो विवरण नैणसी को मिला उसे या तो उन्होने स्वय लिख लिया या दूसरो से लिखवाया जैसे राणा उदैसिह और पठान हाजी खा के बीच हुये युद्ध का वर्णन स० १७१४ मे खेमराज चारण ने लिख भेजा : सीसोदिया की चूडावत शाखा का वृत्तान्त खीवराज खडिया (चारण) ने लिखवाया ' बू दी राज्य का वृत्तान्त स० १७२१ मे रामचन्द्र जगन्नाथौत ने लिखवाया बु देला वरसिह देव के राज्य का वर्णन स० १७१० मे बुंदेला शुभकर्ण के सेवक चक्रसेन ने सग्रहीत किया। जैसलमेर का कुछ वर्णन विट्ठलदास से लिया ' स० १७२२ मे परबतसर मे रहने के समय वहां के दहिया राजपूतों का वृत्तान्त नैणसी ने सग्रहीत किया : इसी प्रकार नैणसी ने अपनी ख्यात का सकलन किया अतः राजस्थानी के कई रूपो का सग्रह भी इसमें आप ही आप हो गया। जन-प्रचलित राजस्थानी-भाषा का एक उदाहरण यहां देखा जा सकता है :—

"बू दी सहर भापर भापर लगती वसै छै। रावला घर भापर रै आधो फरै छै । पिण माहे पाणी मामूर नही। सहर रो आयो बीजै भापर वलारो सहर लागतो काउ घणा वला रै भापर मे पाणी घणो। सहर माहे पाखती पाणी घणो वड़ो तलाब सूर सागर तिण री मौरी छूटै छै। तिण सू बागवाड़ी घणा पीवै बागै आवा फूलाद चपा घणा। सहर री वस्ती उनमान घर-घर ५०० वाणीयारा घर १००० बांमण विणजारा रा घर १०००

. ...

१—ओझा – नैणसी की ख्यात – द्वितीय भाग – भूमिका पृ० १

पांच भाई याही डागरा रा। राव भावसिंह नु हमार जागीर मै इतना परगना छै तिणांरा गाव ३१६।[1]।

२–दयालदास री ख्यात[2]

दयालदास–जन्म तथा परिचय

दयालदास सिढ़ायच की लिखी हुई ख्यात 'दयालदास की ख्यात' के नाम से प्रसिद्ध है। "सिढ़ायच" मारू चारण जाति की भादलिया शाखा की एक उपशाखा है। ऐसी प्रसिद्धि है कि नरसिंह भादलिया को, नाहड़ राव पड़िहार ने, कई सिंहों को मारने के उपलक्ष में "सिंहढाहक" की उपाधि प्रदान की थी। सिढ़ायच उसी का अपभ्रंश है। इसी वंश में बीकानेर के कूबिया गाव मे स० १८५५ के लगभग सिढायच दयालदास का जन्म हुआ[3]। दयालदास के विषय में इससे अधिक परिचय प्राप्त नहीं होता। दयालदास की मृत्यु ६० वर्ष की आयु में सं० १६४८ में हुई[4]।

दयालदास बड़ा विद्वान और योग्य व्यक्ति था। बीकानेर नरेश महाराजा रत्नसिंह स० (१८४७-१६०८) का वह विश्वास पात्र था। इसके अतिरिक्त महाराजा सूरतसिंह (स० १८२२-१८८५), महाराजा सरदारसिंह (स० १८७५-१६२६) और महाराजा डूंगरसिंह (स० १६४४) की भी उस पर बहुत कृपा रही। इतिहास का प्रेमी होने के कारण उसने बड़ा परिश्रम करके पुरानी वंशावलियों, पट्टों, बहियों, शाही फरमानो तथा राजकीय पत्र व्यवहार के आधार पर अपनी ख्यात की रचना की[5]। उसने किसी प्रकार के शिलालेख, मुसलिम इतिहास आदि का उपयोग नही किया जिससे उसकी ख्यात मे कहीं कहीं पर ऐतिहासिक अशुद्धियां रह गई है फिर भी उसका काम बड़ा ही महत्वपूर्ण है[6]।

. ...

१—नैणसी की ख्यात पृ० ५६, अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय बीकानेर
२—द्वितीय खण्ड, अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर, द्वारा सादूल प्राच्य ग्रंथ माला मे प्रकाशित
३—ओझा : बीकानेर का इतिहास, द्वितीय भाग, भूमिका पृ० ७-८
४—ओझा : बीकानेर का इतिहास, दूसरा भाग, भूमिका पृ० ८
५—ओझा : बीकानेर का इतिहास, प्रथम भाग, भूमिका पृ० ५
६—[illegible] की ख्यात, भूमिका पृ० १६

दयालदास के ग्रंथ

दयालदास ने तीन ख्यातो की रचना की:— १-राठौड़ां री ख्यात २-देश-दर्पण[1] ३-आर्यख्यान कल्पद्रुम[2]

इन तीनों ख्यातों मे प्रथम अधिक महत्व की है। इसी को "दयालदास की ख्यात" के नाम से पुकारा गया है। दूसरे ग्रंथ में भी बीकानेर का ऐतिहासिक विवरण है। इसमे प्रधानतः बीकानेर-नरेश महाराजा सरदार सिंह के शासन का विवरण अधिक है। तीसरी पुस्तक ख्यात की अपेक्षा गजेटियर अधिक है। इसके अन्त मे बीकानेर राज्य के गांव की नामावली, उनकी आय, जनसंख्या आदि के साथ दी हुई है।

दयालदास की ख्यात

इस ख्यात की रचना दयालदास ने महाराजा सरदारसिंह की आज्ञा से की। इसके अन्त मे महाराजा सरदारसिंह के राज्यारोहण (सं० १९०६) तक का वर्णन है। महाराजा रत्नसिंह की आज्ञा से यदि यह लिखी गई होती तो प्रारम्भ में उनकी स्तुति अवश्य ही की गई होती अतः इस सम्बन्ध मे श्री ओझा जी का मत[3] अमान्य ठहरता है।

ख्यात का ऐतिहासिक महत्व

यह ख्यात बीकानेर राज्य का सर्व प्रथम क्रम-बद्ध इतिहास है। इसमे राव बीका (सं० १४९५-१५६१) से महाराजा सरदारसिंह के राज्यारोहण (सं० १९०६) तक का विस्तृत विवरण है। प्रारम्भिक पृष्ठो मे स्तुति के उपरान्त नारायण से सूर्य-वंश की परम्परा चलती है। श्री रामचन्द्र (६४ वे) श्री जयचन्द्र (२५४ वे) आदि अनेक अनैतिहासिक नामो के उपरान्त सीहोजी का नामोल्लेख है। इस प्रकार के काल्पनिक अंशों को छोड़ देने के उपरान्त बीकानेर का शुद्ध इतिहास शेष रहता है। इस ख्यात का उपयोग श्री गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने बीकानेर राज्य का इतिहास लिखते समय

१—कैटेलौग आफ दी राजस्थानी मैन्युस्क्रिप्ट्स इन अनूप-संस्कृत-लाइब्रेरी पृ० ७४

२—वही : पृ० ७६

३—ओझा बीकानेर का इतिहास, प्रथम खण्ड, भूमिका पृ० ५

किया है जो इसकी ऐतिहासिक प्रामाणिकता का प्रमाण है[1]। दयालदास यद्यपि नैणसी या अबुलफजल के समान इतिहासकार नहीं था किन्तु उसकी ऐतिहासिक रचनाए अपना विशिष्ट अस्तित्व रखती हैं[2]।

ख्यात का साहित्यिक महत्व

यह बीसवी शताब्दी के प्रथम दशक की रचना है। इस शताब्दी के राजस्थानी गद्य के उदाहरण इस ख्यात में मिलते हैं। नैणसी की ख्यात के उपरान्त इसकी रचना हुई अतः नैणसी के गद्य के उपरान्त दयालदास का गद्य राजस्थानी के विद्यार्थी के काम की वस्तु है। ऐतिहासिक रचना होने के कारण दयालदास ने इस ख्यात की भाषा को साहित्यिक रूप मे नही सजाया जो कुछ उन्होंने लिखा वह तत्कालीन बोलचाल की भाषा मे ही लिखा। धारावाहिकता ही दयालदास की शैली की प्रधान विशेषता है।

गद्य का उदाहरण—

"पछै कमर बांधीज रावत जी बहीर हुवा। सू राजासर आया। अरु रावजी श्री जैतसी जा काम आया तिण समै सिरदार सारा आपणां ठिकाणां

....

1—ओझा : बीकानेर का इतिहास, प्रथम खण्ड, पृ० ६ (भूमिका)

२—We might regard Dayaldas Sindhayach as the last of the great bardic chroniclers of Bikaner. With the advance of the Western system of education and increasing materialism their days are were speedily coming to an end. Dayaldas, however, was an honoured courtier trusted adviser and emissary besides being a state chrnicler. He was no Abul Fazal, but his position in the state affairs was high enough to suggest some comparison with that great Historian of the Mughal period. Like him Dayaldas was an erudite scholar. He was an accomplished rhetoricaian, a writer of excellent Marwari, only a little imperior to that of Naissi Munot . ..

—Dr. Dashrath Sharma-Introduction of Dayaldas Rekhat Part 2. Page 15

गया परा था। सु क्रिता एक नूं किसनदास जो लिखावट करी। तिण माथै लोक हजार छव भेलौ हुवो। पीछै जोईये चावै घीगड़ रै नूं सिहाणस बुलायो। तद चावौ फौज हजार आय सामल हुवौ। फौज हजार दस हुई। पीछे जोधपुर रा थाणा ऊपर चलाया। सू पहली लूणकरण सर वडौ थाणौ हो तठै आया नै अठै वड़ौ झगड़ौ हुवौ। मारवाड़ रा राजपूत तीन सो काम आया। अरु किता एक मारवाड़ रा भाज नीसरिया। नै रावजी री फतै हुई। अरु आण फेरी। घोड़ा दो सौ ऊँट सौ मारवाड़ा रा लूट मे आया"[1]

देशदर्पण[2]

"देशदर्पण" की रचना दयालदास ने वैद मेहता जसवतसिह के आदेशानुसार स० १६२७ मे की।[3] इसके पूर्वार्द्ध मे बीकानेर नरेश महाराजा रत्नसिह का वर्णन लम्बी पीढियावली के उपरांत है। उत्तरार्द्ध मे बीकानेर के गावो की विगत है। कुछ खरीतों की नकले भी इस मे सकलित हैं।

गद्य का उदाहरण–

"फेर पलीतो तारीख १३ अक्टूबर सन् मचकुर कपतान फीरच साहव इष्टंट साहव अजट अजमेर रो श्री दरवार सामो आयो ते मे लीष्यो। लफटट गवरनर जनरल कलारक साहव बहादुर सहसे होय बावलपुर तक तसरीफ ले जावेगे सो मोतमद हुसीयार वा लयाकत वा कुल इकत्यार सरसै नबाव साहव ममदु की पीदमत मे जाय देवे।[4]

आर्याख्यान कल्पद्रुम[5]–

महाराजा डूंगरसिह जी को दयालदास की उक्त दोनो ऐतिहासिक रचनाओं से सतोष नहीं हुआ। अतः उन्होने समस्त भारतवर्ष का इतिहास

. . . .

१—दयालदास री ख्यात : भाग २ पृ० ७२
२—अनूप-सस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर
३—ओझा : बीकानेर का इतिहास : द्वितीय खण्ड, भूमिका पृ० ८
४—हस्त प्रति पत्र ५३ (अ)
५—ओझा : बीकानेर का इतिहास : द्वितीय खण्ड, भूमिका पृ० ८

प्रांतीय भाषा में लिखने की आज्ञा दी। इस पर दयालदास ने सं० १६३४ में इस ग्रंथ की रचना की।[1]

३ बांकीदास की ख्यात[2]

बांकीदास (सं० १८३८-सं० १८६०) जन्म तथा परिचय

बांकीदास का जन्म स० १८३८ में आसिया जाति के चारण फतहसिंह के यहां हुआ। ये मांडियावास (परगना पचपदरा) के निवासी थे। बाल्यकाल से ही बांकीदास ने अपने पिता से मरुभाषा के गीत, कवित्त, दोहे आदि बनाना सीखकर कविता करना प्रारम्भ किया। १३ वर्ष की आयु में ये अपने मामा ऊक जी के साथ वाले गांव के ठाकुर नाहरसिंह के पास गये। आशु कवि होने के कारण इन्होंने वहीं दो दोहे और एक सेणोर गीत की रचना कर सुनाई। इससे पता चलता है कि ये बाल्यकाल से ही प्रतिभाशाली थे। १६ वर्ष की आयु मे इन्होंने अपने पिता से आश्रयदाता खोजने की अनुमति प्राप्त करली।

सर्व प्रथम ये रायपुर (मारवाड़) के ठाकुर अर्जुनसिंह ऊदावत के समीप गये। इनकी प्रतिभा को देख कर उसने इनको जोधपुर पढ़ने के लिये भेज दिया। ५ वर्ष वहां अध्ययन करने के उपरान्त वापिस लौटे। स० १८६० मे जोधपुर नरेश महाराजा मानसिंह के गुरु आयस्स जी देवनाथ ने इनकी प्रशसा सुनकर अपने यहां बुलाया तथा इनकी कवित्व-शक्ति देखकर महाराजा से उसकी चर्चा की। महाराजा ने इनको पर्याप्त पुरस्कार देकर अपने दरबार मे रख लिया।

बांकीदास डिंगल, व्रजभाषा और सस्कृत के विद्वान तथा इतिहास के अच्छे ज्ञाता थे। इनके ऐतिहासिक ज्ञान के विषय मे एक किंवदन्ती प्रसिद्ध है —ईरान के बादशाह के बन्धुओं मे से एक सरदार एक बार भारत की यात्रा करता हुआ जोधपुर पहुंचा। उसने महाराज से इच्छा प्रकट की कि कोई अच्छा इतिहास-वेत्ता उनके पास भेजा जाय। बांकीदास उसके पास

१—ओझा : बीकानेर का इतिहास : द्वितीय खण्ड, भूमिका पृ० ८

२—नरोत्तमदास स्वामी, बीकानेर, द्वारा सपादित तथा राजस्थान पुरातत्व मन्दिर द्वारा प्रकाशित।

पहुंचाये गये। उनसे बात करके वह इतना प्रसन्न हुआ कि उसने महाराज से कहा आपने जो व्यक्ति हमारे पास भेजा है वह केवल कवि ही नही इतिहास का पूर्ण विद्वान भी है। वह तो मुझसे भी अधिक मेरी जन्मभूमि (ईरान) का इतिहास जानता है।

ये बहुत ही स्वाभिमानी तथा स्वतन्त्र प्रकृति के व्यक्ति थे। इनके स्वाभिमान की एक घटना उल्लेखनीय है। एक बार महाराज की सवारी के समय महारानी की पालकी से आगे इन्होंने अपनी पालकी निकलवा ली। ऐसा देखकर महारानी इन पर कुपित हुई तथा इस मर्यादा उलघन के लिए इनको प्राण-दड देने का आग्रह उन्होंने महाराजा से किया। इस पर महाराजा मानसिह ने उत्तर दिया "मै तुम्हारी जैसी दूसरी रानी ला सकता हूँ किन्तु बांकीदास के स्थान पर मुझे दूसरा कवि मिलना असम्भव है।" इससे स्पष्ट है कि राज दरबार मे इनका बहुत सम्मान किया जाता था।

उदयपुर के महाराणा भीमसिंह भी इनको आदर की दृष्टि से देखते थे। कवि के रूप मे बांकीदास का व्यक्तित्व बहुत ही प्रभावशाली था। कई कवियो से इनका शास्त्रार्थ हुआ जिनमे ये सदैव विजयी हुये। इनकी पद्य रचनाओं का सग्रह नागरी-प्रचारिणी सभा की ओर से बांकीदास ग्र थावली (तीन भाग) नाम से प्रकाशित हो चुका है। गद्य-लेखक के रूप मे भी बांकीदास का नाम सम्मान के साथ लिया जाता है। इनका गद्य-ग्रंथ "बांकीदास की ख्यात" है।

बांकीदास की ख्यात

इस ख्यात मे समय समय पर विविध विषयों पर लिखी हुई टिप्पणियों का सग्रह है। ये टिप्पणियां न तो विषयानुक्रम से लिखी गई है और न कालानुक्रम से ही। जैसे जैसे इनको रोचक विषय मिले उनको इन्होने अपनी इस बृहद् डायरी मे ज्यो का त्यों लिख लिया। भूगोल, इतिहास, नीति, वेदान्त, जैन दर्शन, नगर-परिगणन, जाति, शब्दो के अर्थ, प्रसिद्ध व्यक्ति, औषधि आदि अनेक विषयो पर इन्होने अपने इस सग्रह मे अनेक टिप्पणिया लिखी है।

ऐतिहासिक-विवरणों मे सोलकी, वाघेला, पवांर, चौहान, हाड़ा, सोनगरा, देवडा, गहलोत, तु वर, झाला, बु देला, राठौड आदि राजपूत-वशो की वशावलियां : राव सूजा, जैमल, राजा सूरसिह, राजा गजसिह,

महाराजा जसवंतसिंह, महाराजा अजीतसिंह, महाराजा अभयसिंह, महाराजा रामसिंह, महाराजा बखतसिंह आदि का विस्तृत वर्णन है। साथ में संवत भी दिये गये हैं जिनमें कई अशुद्ध हैं। मुसलमान बादशाहों में अलाउद्दीन खिलजी, अकबर, बाबर, हुमायूं, तैमूर, अहमदशाह दुर्रानी आदि का उल्लेख है।

उदाहरणत :—

सोलंकिया रै भारदवाज गोत्र, खैत्रज चामुंडा दोय देवी, महिपाल पितर, परवर तीन, खिडियो चारण, बागडियो भाट, कडारियो ढोली, सौलंकियां रै कुलदेवी कटेस्वरी : बड़ी चरादेवी अरथ कुक्कट वहणी लोक वहचरा कहै

सौलंकियां री साख री विगत :

दारिया १ भाणगौती २ बाघेला ३ लहारा ४ वालणौत ५ वीखुरा ६ नाथावत ७ वाराह ८ खाजीय ९ इत्यादिक है।

बांकीदास जहां जाते वहा की विशेषताओं को अपनी इस बही मे लिख लेते थे। इस प्रकार भौगोलिक विषयों में रहन-सहन, रीति रिवाज, व्यवसाय आदि पर प्रकाश डाला गया है।

उदाहरणत :—

सिंध री तमाखू नव सेर बिकै रु १ री। जठै मालवण सेर बिकै। आंबा मुलताण रा आछा हुवै।

खुटिया लखनऊ को, गटा कनौज को, पेडा मथुरा को, औला सिकन्दरा को अद्‌भुत हुवै।

अभ्रक, कपूर, लोबान, कृष्णागुरु प्रमुख यवुनां रै देसा सूं हिंद मे आवै। कांसी, पीतल, प्रमुख धातु मारवाड़ सूं सिंध में जावै।

धार्मिक-विषयों में कही वे हिन्दुओं के वेदान्त की चर्चा करते हैं तो कही जैनियो के जैनागमो की। कही पर कुरान की बाते उनकी टिप्पणियो का विषय है। जैसे—वेदान्त में बावन मत है जामै अद्वैतवाद प्रबल है।

"या"- नैयायिक अनित माने सब्द नू, मीमासक वैयाकरण सब्द नूं नित्य मानै ।"

पिडारा, मुसलमान, जैन, चारण, सिख, फिरगी आदि विविध जातियो के विषय मे भी उल्लेख किया गया है ।

इनके अतिरिक्त और भी कई विभिन्न विषयों पर वाकीदास ने अपनी लेखनी चलाई है ।

वांकीदास की भाषा जन-प्रचलित-राजस्थानी है । उन्नीसवी शताब्दी की राजस्थानी के प्रयोग इनकी ख्यात मे देखे जा सकते है । नैणसी या दयालदास की ख्यात से भी इनकी ख्यात इतिहास के क्षेत्र मे अधिक उपयोगी एव प्रमाणित है ।

दलपत विलास

इन ख्यातों के अतिरिक्त "दलपतविलास" नामक एक अपूर्ण हस्त-प्रति अनूप-सस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर, मे विद्यमान है । इसके लेखक का नाम भी अज्ञात है । इस ग्रथ मे बीकानेर के महाराजा रायसिह के द्वितीय पुत्र श्री दलपतसिह का विवरण है । आरम्भिक दो पृष्ठो मे सृष्टि की उत्पत्ति दिखाने के बाद राव सीहा जी से राव जोधा जी तक तथा राव बीका से दलपतसिह तक की वशावली का उल्लेख है । श्री दलपतसिह की किशोरावस्था, रायसिह जी के दीवान कर्मचन्द बच्छावत के कार्य, रायसिह जी के पुत्र भोपत का रुष्ट होना, उसका मारा जाना, दलपत सिह जी को मारने का षड्यत्र, उनके द्वारा बाल्यकाल मे दिखलाई गई वीरता, अकबर के दरबार मे की गई उनकी सेवाये आदि इसके विषय है । इस रचना मे दलपतसिह के विषय मे ही अधिक मिलता है जिससे पता चलता है कि इस ख्यात की रचना इन्ही के समय मे हुई होगी । श्री दलपतसिह का राज्यारोहण स० १६६८ मे हुआ तथा स० १६७० मे इनका स्वर्गवास हो गया अतः सत्रहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध इसका रचना काल माना जा सकता है । महाराजा रायसिह जी के समय का गद्य का सर्वोत्तम उदाहरण इसमे मिलता है[1] ।

. ...

१—डा० दशरथ शर्मा : दयालदास की ख्यात भाग २ भूमिका पृ० ५

गद्य का उदाहरण—

"ताहरां कुंवर श्री दलपतसिंह जी री दृष्टि पडियो दलपत कुंवरे देखि अर राव दुरगै नूं कहियो जु औ कटारौ वाहे मानसिंघ नू देखौ का सू झालो। ताहरां राव दुरगै हाथ झालियौ—"

ख्यातेतर-गद्य-साहित्य

ख्यातों के अतिरिक्त १—पीढ़ियावली (वशावली), २—हाल, अहवाल, हगीगत, याददाश्त आदि -: ३—विगत : ४—पट्टा परवाना : ५—इलकावनामा : ६—जन्म पत्रियाँ : ७—तहकीकात आदि मिलती हैं जिनका सक्षिप्त विवरण यहा दिया जाता है :—

१—पीढ़ियावली (वंशावली)

क—राठौड़ा री वशावली—आदिनारायण से राठौड़ वश की उत्पत्ति तथा उसकी एक अपूर्ण वशावली।

ख—बीकानेर रा राठौड़ राजावां री वशावली – आदिनारायण से महाराजा रतनसिंह (१६२ वे) तक बीकानेर के राठौड़ों की वशावली है जिसमे केवल नाम ही अकित है।

ग—बीकानेर रा राठौड़ राजावां री पीढ़ियां राव बीका सू महाराजा अनोपसिंह जी ताई :—राव बीका जी से महाराजा अनूपसिंह जी तक की वशावली : इसके उपरान्त ईडर राठौड़ शासकों की सोनग से भगवानदास तक पीढ़ियावली अकित है।

घ—खीचीवाडा रा राठौड़ां री पीढियां:– सूजा के पुत्र देईदास तथा उनके पुत्र हरराज के वशजों की नामावली है। जो (हरराज) खीचियावाडा के पड में स्थिर हुआ। नामावली का सवत् १७६३ वि० दिया हुआ है।

च—राठौड़ अखैराजोतां री पीढ़ियां:– अखैराज राठौड़ के वंशजों की क्रमिक नामावली मात्र।

छ—सीसौदियां री वसावली तथा पीढियां:– ब्रह्मा से राणा सरूपसिंह तक की वशावली। राणा सरूपसिंह के शासन काल मे वशावली लिखने

का कार्य समाप्त हुआ, ऐसा लिखा है। इसके उपरान्त गुहादित्य से राणाओं की वशावली लिखी हुई है जिसके अन्तर्गत विभिन्न शाखाओं की पीढिया-वली भी सम्मिलित है। इसमे स० १७७१ वि० तक का वृत्तान्त मिलता है।

ज—कछवाहां री वसावली:– कुन्तल से महासिहौत जयसिह तक की कछवाहा वशावली अकित है।

झ—देवड़ा सीरोही रा धणिया री वसावली तथा पीढ़ियां – राव लाखण से राव अखैराज तक सिरोही के देवड़ाओं की वशावली।

ट—राठौड़ां ईडर रा धणिया री वसावली तथा पीढ़ियां — सोनग सिहावत से कल्याणमलौत जगन्नाथ तक के ईडर शासको की वशानुक्रमणिका जिसमे रानियों के नाम भी लिखे हुए हैं।

ठ—सीसोदियां री वसावली तथा पीढियां नै जागीरदारा री फैरिस्त:– सीसोदिया राणा लिखमसी से जगतसिह (मृत्यु स० १७०६) तक की वशावली तथा साथ ही उनके पुत्रो तथा पत्नियों की नामावली भी है। इसके उपरान्त शक्तावत एव देवलिया वशो की पीढ़ियावली लिखी है। तत्पश्चात फिर जगतसिह की मृत्यु एव उसकी रानियों का उल्लेख है। अन्त मे विभिन्न जागीरो की नामावली तथा उनसे होने वाली आय के साथ उनके जागीरदारों का भी उल्लेख है।

ड—जैसलमेर रा भाटियां री वसावली –भाटियों की तीन विभिन्न पीढियां : प्रथम में नारायण से रावल जसवन्त तक, द्वितीय मे दशरथ से जैतसी एव दयालदासौत सवलसिह तक, तृतीय मे जैसल से रावल भींव (जन्म स० १६१८) तक की वशावली है। द्वितीय वशावली मे जैतसी से सबलसिह तक वश की रानियों तथा राजकुमारों के भी नाम हैं। द्वितीय और तृतीय पीढ़ियावली मे भाटियों को सूर्यवशी बताया गया है।

ढ—हाडां री वसावली– सोमेश्वर (प्रथम) पृथ्वीराज, से छत्रसालौत भावसिंह (२६ वा) तक हाडाओ की-वशावली की सूची।

ण—राठौडां रा खांपां री विगत नै पीढ़ियां - जसवतसिंह के समय में वनी हुई राठौड़ों की विभिन्न खांपों का वर्णन उनकी उत्पत्ति तथा पीढ़ियावली।

त—राठौड़ां रै गनायतां री खांपवार पीढ़ियॉ .—जोधपुर नरेश महाराजा जसवतसिह् जी के समय के राठौड़ों के अतिरिक्त सरदारों की नामावली उनकी छोटी छोटी वशावली के साथ।

थ—बांधवगढ़ रा धणी बाघेलां री वशावली :—बांधवगढ़ के (बघेलखड में) बघेलों की वशावली का सक्षिप्त परिचय जिसमें उनका उत्पत्ति स्थान गुजरात माना है। वहां से वे वीरसिह् के साथ बघेलखड में आये (वीरसिह् प्रयाग की यात्रा के लिये गये वहां लोधा राजपूतो को मारकर बघेलखड के अधिपति बन गये) उसकी पीढ़ी मे विक्रमजीत से अकबर ने राज्य छीना तथा जहॉगीर ने उसे फिर से सिहासन पर बिठा दिया।

द—राठौड़ां री पीढ़ियॉ राउ सीहै जी सू बीकानेर रै राउ कल्याणमल जी तॉई :—इसमें बीकानेर के राठौड़ शासकों की वशावली है जिसमें केवल नामो का ही उल्लेख है।

ध—राठौड़ॉ री पट्टावली आसपास सू बीकानेर रै राजा सूरजसिघ जी तांई :—आसपास के राजा सूरजसिह् तक बीकानेर के राठौड़ शासकों की नामावली मात्र।

न—कॉधलौतॉ री पीढ़ियॉ —कॉधलौत राठौड़ों की वशावली के नामों का उल्लेख मात्र है।

प—जोधावत जोधपुर रै धणियां री पीढ़ियां :—जोधा जी के वश धारियों की नामावली जो सिहासन के अधिकारी हुए। कही केवल नामों के स्थान पर विवरणात्मक लघु टिप्पणिया भी हैं।

फ—भाटियां री पीढ़िया :—जैसलमेर, देरावर, बीकमपुर, पूगल, हापासर के भाटियो की नामावली।

ब—राठौणां री वसावली :—राजा पदार्थ से कु वर जगतसिह् की मृत्यु तक जोधपुर में राठौड़ों का ऐतिहासिक चित्रण है।

२–हाल अहवाल, हगीगत याददाश्त आदि

क—साखलां दहिया सू जांगलू लियौ तैरो हाल :—अजियापुर (जांगलू) एव पृथ्वीराज पर छोटी सी मनोरजक टिप्पणी तथा सांखलों

ने किस प्रकार दहियों से जांगलू जीता इसका भी विवरण है।

ख—पातसाह औरगजेब री हकीकत :—प्रारम्भिक दो पृष्ठों मे अकबर, जहाँगीर तथा शाहजहाँ के शासनकाल की प्रमुख घटनाओ का उल्लेख है। औरगजेब के शासन का विस्तृत विवरण है जिसमे उसके जोधपुर से युद्ध तथा विजय (स० १७४३) का विवरण है।

ग—दिल्ली रै पातसाहा री याद :—सुलतान समका गोरी से जहाँगीर (७३ वॉ) तक दिल्ली के मुसलमान सम्राटों की नामावली मात्र है। यह अपेक्षाकृत अर्वाचीन लिखी हुई ज्ञात होती है।

घ—राउ जोधै जी री वेढां कियां री याद :—राव जोधा जी द्वारा किये गये युद्धो की नामावली।

३–विगत

क—महाराजा मानसिंघ जी रै राणियां पासवानां कवरां वाका भाई हुवा तिणां री विगत —महाराजा मानसिह जी के पुत्रों की नामावली।

ख—महाराजा तखतसिह रै कवरां री विगत :—महाराजा तख्तसिह जी के पुत्रो की नामावली।

ग—चारणों रा सासणां री विगत :—इसमे सात स्वतत्र टिप्पणियां हैं १—गोघेलावास नामक गाव जिसको सासण मे बीकानेर नरेश पृथ्वीराज तथा मारवाड़ नरेश सगर के समय मे (१६७२ वि०) खिड़िया चीर को दिया गया था उसका विवरण है। २—सगर के द्वारा चरणों का आसिपा गणेश, भीसणदुर्गा तथा धिमाच खीड़ा इन तीनो गांवों को दिये जाने पर टिप्पणिया है। ३—राव रणमल के सम्बन्ध मे कुछ पद्य एव गद्य मे वर्णन जो चित्तौड़ मे मारा गया था, खिड़िया चानड़ के द्वारा जलाया गया वह (खिड़िया चांनड़) मारवाड़ आया वहा स० १५१८ वि० में राव जोधा ने उसे गोघेलावास दिया। ४—चिरजी की लघु वंशावली का वर्णन ५—चुरली के चारण देमला पर टिप्पणी ६—खुण्डला तथा खातावास के आसिपा चारणों पर टिप्पणी। ७—जगदीशपुरा के खिड़िया चारणों पर टिप्पणी।

घ—बूंदेलां री विगत—बुन्देलों की पीढ़ियावली जिसमे उनको

गेरवार राजपूत बतलाया गया है तथा उनका बनारस से समीपवर्ती ढूंडिया खेड़े, गेरवाड रायचन्दे के समय में जाना लिखा है । ढूंडिया खेडे से हाल (वेसस का एक सरदार) के साथ गोंडवाणा वहां से ओरछा के समीप कुड़ार जाकर बस गये । पीढ़ियावली झूंझारसिंह के पुत्रों तक चलती है जिनका (पुत्रों का) नाम नहीं दिया है ।

च—गढ़ कोटां री विगत :—जोधपुर, मडोवर, अजमेर, चित्तौड, जेसलमेर, जालौर, सिवाणा, बीकानेर, सोजत, मेड़ता, जेतारण, फलोदी, सांगानेर, पोहकरण, आगरा, अहमदाबाद, बुरहानपुर, सीकरी फतहपुर, कुंभलमेर, उदयपुर एव नागौर की स्थापना के विषय मे टिप्पणियां हैं ।

छ—जोधपुर रा देवस्थानां री विगत :—जोधपुर के प्राचीन मन्दिरों का (उनकी स्थापना के विषय मे विशेष रूप से) विवरण तथा उनकी नामावली है ।

ज—जोधपुररा निवाणां री विगत – जोधपुर शहर तथा उसके समीपवर्ती प्रदेश के तालाब, कुये, बावड़ी, जगल, कुड आदि की नामावली ।

झ—जोधपुर बागापत री विगतः– जोधपुर के प्रधान उद्यान उनकी स्थिति, वृक्ष, कुएं आदि का वर्णन ।

ट—जोधपुर गढ थी जिके जितरे कोसे छै त्यांरी विगतः– जोधपुर तथा समीवर्ती गाँव, परगना, तथा इसके स्थानो की दूरी कोसों मे उल्लिखित है ।

ठ—गढ़ा साका हुवा त्या री विगत –रणथभौर विजय (सं० १३५२ वि०) तथा अन्य कुछ शहरों के विजय तथा युद्धो की तिथियो का वर्णन टिप्पणियों के रूप मे है ।

ड—पातसाह साहजिहाँ रै बेटां उमरावां ने मनसप री विगत.– शाहजहा के पुत्र तथा उनकी मनसब का विवरण । इसका आरम्भ शाहजादा दारा से होता है तथा अन्त भोजराज कछवाहा से ।

ढ—पातसाह साहजिहां रै सूबां री विगतः– शाहजहां के २१ प्रान्तों की नामावली उनकी आय तथा परगना के साथ ।

ण—पातसाही मुनसप री विगतः– मनसबदारों की विभिन्न श्रेणियां पूर्ण विवरण के साथ ।

त—खत्रीवस री साखां री विगत – पैवार, गहलौत चौहान, भाटी, सोलकी, परिहार, गोहिया एवं राठौड़ की शाखाओं की नामावली ।

थ—श्री जी रा डेरा री विगत – जोधपुर दरबार जब डेरों में होते थे उस समय विभिन्न मनुष्यों की विभिन्न श्रेणियों तथा स्थानों का विवरण ।

द—हुजदारां रै गांव रोकड़ री विगत – स० १६६७ से स० १७०५ वि० तक के जोधपुर प्रधान कर्मचारियों की तथा गांवों की नामावली ।

ध—राजसिंघ जी रो बेटियां रा वनौला में दरबार सूं मेलियौ तिणरी विगत:– स० १६६६ वि० में राजसिंह की सात पुत्रियों के विवाह में महाराजा जसवतसिंह द्वारा लाहौर से आसोप को भेजे गये उपहारों का वर्णन ।

न—आंबेर जैसिंघ जी रा मरणा पर टीकौ मेलियो तिण री विगत:– जयसिंह जी की मृत्यु (स० १७२४ वि०) पर उत्तराधिकारी रामसिंह के लिये जोधपुर नरेश द्वारा भेजा गया टीका– १ हाथी, २ घोडे, कुछ वस्त्र उसका विवरण ।

प—तिहवारां में मोताद पावै त्यांरी विगत:– प्रमुख पर्वों पर महाराजा के द्वारा नाई, वैद्य, ड्योढीदार आदि को दिये जाने वाले उपहारों का वर्णन ।

फ—जैसलमेर रावल अमरसिंघ जी रा मरणा पर टींकौ मेलियौ तिण री विगत:– स० १७६० वि० में जोधपुर नरेश अजीतसिंह के द्वारा जैसलमेर के रावल अमरसिंह जी की मृत्यु पर उत्तराधिकारी रावल जसवतसिंह के राज्याभिषेक के समय पर भेजे गये (टीका) उपहारो का वर्णन ।

ब—बहू जी सेखावत जी अन्तरगढे जी री अधरणी री विगत – महाराज जसवतसिंह जी की रानी सेखावत जी के अधरणी[1] के समय (स० १७०८ वि०) दिये गये उपहारों का वर्णन ।

भ—कवर जी रै जनम उछव रा खरच तथा पटा री विगत – महाराजा जसवतसिंह जी के राजकुंवर पृथ्वीसिंह (जन्म स० १७०६) तथा जगतसिंह (जन्म स० १७२३) के जन्मोत्सव के उपलक्ष मे हुए व्यय तथा उनको दी गई जागीरों का वर्णन ।

१—एक प्रकार का उत्सव जो गर्भवतियों के [illegible] मनाया जाता है ।

म—जातां री खापां री विगतः– वैष्णव, पुरोहित ब्राह्मण, पटेल, चारण, जाट, कलाल, रैवारी, कायस्थ, जैन गच्छ, सुनार, डूम, मुहणोत, बनिया आदि जातियों की शाखाओं को सूची मात्र : तथा अन्त में राणा लाखा की सहायता से राठौड़ राव रिणमल द्वारा स० १४४४ वि० में मुसलमानों, नागौर-विजय पर तथा खीवसी द्वारा उनको फुसलाने पर टिप्पणियां।

य—पैडांरी विगतः– जोधपुर से मेवाड़ के तथा कुछ भारत के नगरों की दूरी (कोसों में) की सूची।

र—भुज नै नवानगर रा जाडेजां री विगतः–भुज तथा नवानगर के जाडेजां के स्थान पर टिप्पणी : यह राव भारा के द्वारा भुज नगर बसाने से (स० १६४४) प्रारम्भ होती है। जाय जोसा की पुत्री प्रेमा का जोधपुर के महाराज गजसिंह से विवाह (स० १६८०), अजा के पुत्र लाखा के राज्याभिषेक का समय सं० १७०२ तथा रिणमल के भाई रायसिंह का राज्याभिषेक का समय स० १७१८ दिया है। शखपाड़ा के युद्ध स० १७१६ वि० के साथ साथ इसकी समाप्ति होती है।

ल—हिन्दुस्तान रा सहरां री छेटी तथा विगत– भारत के प्रमुख नगरों–प्रधानतः सागर (तटीय) का संक्षिप्त परिचय।

व—अणहलपाटण रा छावड़ा भाण नै सोलकी (राज बीज) तथा मूलराज री विगतः– सोलकी भाई राज तथा बीज अनहलवाड़ा के अन्तिम छावड़ा शासक के विश्वास पात्र बने। उसने अपनी बहिन रुक्मणी का विवाह राज के साथ किया। राज के पुत्र मूलराज ने किस प्रकार अपने पिता को मारकर राज्याधिकार किया इसका विवरण है।

श—बीदावता री विगतः– राव जोधा जी द्वारा जीते गये लाडणू, छापर तथा द्रोणपुर का वर्णन है जो उन्होंने अपने पुत्र बीदे जी को दिये। बीदेजो के सात पुत्रो की नामावली है। आगे बीदावतों और बीकानेर के राठौड़ शासक तथा नागौर के नरेशों से सम्बन्ध बताया गया है।

४–पट्टा परवाना—

क—परधाना रौ तथा उमरावां रौ पटौः– महाराजा जसवंतसिंह जी (जोधपुर नरेश) के प्रधान खिचावत राठौड़ की जागीर तथा उमराव सूरजमलौत महेशदास की जागीर का वर्णन।

ख—राणीपदां रौ नेग तथा पटौः— सूरजसिंह की रानी सौभागदे, गजसिंह की रानी प्रतापदे, जसवतसिंह की रानी जसवत दे को दिये गये उपहारो तथा जागीरो का वर्णन ।

५-इलकाब नामा—

क—इलकावनांवौ अंगरेजां री तरफ सूं श्री हजूर साहिबां रै नावै आवै तथा श्री हजूर साहिबा री तरफ सूं जावै तिण री नकलः— महाराजा जोधपुर एवं ब्रिटिश सरकार के पत्र व्यवहार की प्रतिलिपि ।

ख—कागदां रा इलकावः— जोधपुर के महाराजा गंगासिंह तथा जसवतसिंह जी द्वारा जयपुर नरेश महाराजा जयसिंह को, बूंदी नरेश शत्रुसाल को, बीकानेर नरेश कर्णसिंह तथा अन्य मारवाड़ के प्रमुख जागीरदारों को लिखे हुये पत्रों का संग्रह है । महाराजा अजीतसिंह के द्वारा दी गई एक सनद भी इसमें संलग्न है ।

ग—खलीतां री नकलः— जोधपुर के महाराजा तथा उदयपुर के राणा के मध्य मे हुये पांच पत्रों की प्रतिलिपि ।

१—महाराजा अजीतसिंह तथा राणा संग्रामसिंह के मध्य (सं० १७७५)
२—कुंवर विजयसिंह तथा राणा जगतसिंह के मध्य (सं० अज्ञात)
३—महाराजा विजयसिंह तथा राणा अड़सी के मध्य (सं० १८२१)
४—राणा अड़सी तथा महाराजा विजयसिंह के मध्य (सं० १८२४)
५—राणा संग्रामसिंह तथा महाराजा अजीतसिंह के मध्य (समय अज्ञात)

६—जन्मपत्रियां—

क—राजा री तथा पातसाहा री जनम पत्रियांः— जोधा से लेकर मानसिंह के पुत्रों तक जोधपुर के शासकों की, चौहान पृथ्वीराज, कछवाहा सवाई जैसिंघ तथा प्रतापसिंह, एवं अकबर से लेकर औरंगजेब तक के देहली सम्राटों की जन्मपत्रियां इसमें हैं । जसवंतसिंह (द्वितीय) की जन्मपत्री पश्चात किसी दूसरे से बढाई है ।

७—तहकीकात—

क—जयपुर वारदात री तहकीकात री पोथी – इसमें जयपुर मे होने वाली घटना का विवरण है ।

२—धार्मिक-गद्य-साहित्य

"विकास काल" मे धामिक-गद्य केवल जैन आचार्यों द्वारा ही लिखा गया था किन्तु इस काल में ब्राह्मण-विद्वानों ने भी धर्म-प्रचार के लिये राजस्थानी-गद्य का प्रयोग किया। इस प्रकार इस काल के धामिक-गद्य-साहित्य को दो भाषाओं मे विभक्त किया गया है :—

क—जैन-धार्मिक-गद्य-साहित्य

ख—पौराणिक-गद्य-साहित्य

क—जैन-धार्मिक-गद्य-साहित्य—

इस काल में जैन-धार्मिक-गद्य ६ रूपों में मिलता है :—१—टीकात्मक २—व्याख्यान ३—प्रश्नोत्तर-ग्रंथ ४—विधि-विधान ५—तत्व-ज्ञान ६—कथा-साहित्य।

टीकात्मक-गद्य :—

बालावबोध लेखन की परम्परा इस काल में भी चलती रही। अब गुजराती और राजस्थानी दोनों अलग अलग भाषाये हो गई थीं अतः जैन-आचार्यो ने दोनो भाषाओं के प्रयोग अपने बालावबोध में किये। राजस्थानी के प्रमुख बालावबोधकार इस प्रकार है :—

१—साधुकीर्ति[1] (खरतरगच्छ)

इनके पिता ओसवाल वशीय सचिंती गोत्र के शाह वस्तिग थे। श्री दयाकलश जी के शिष्य श्री अमरमाणिक्य जी इनके गुरु थे। बाल्यकाल

१—देखिये :— क—जैन-गूर्जर-कविओ; भाग २ पृ० ७१६
ख—वही, भाग ३ पृ० १५६६
ग—जैन-साहित्य का सक्षिप्त इतिहास टिप्पणी ८५१, ८८१, ८८४, ८६६—६७
घ—युग-प्रधान जिनचन्द्र सूरि पृ० १६२
च—ऐतिहासिक-जैन-काव्य-सग्रह पृ० ४४

से ही इन्होंने अपनी कुशाग्र बुद्धि का परिचय देना प्रारम्भ कर दिया था। स० १६२५ में आगरे मे अकबर की सभा में इन्होंने तपागच्छीय आचार्यों को पोपह की चर्चा मे निरुत्तर किया।[1] वैशाख सुदी १५ स० १६३२ मे श्री जिनचन्द्र सूरि ने इनको उपाध्याय पद प्रदान किया। स० १६४६ में जालौर पहुँचने पर वही इनका स्वर्गवास हुआ। यहां पर सघ ने इनका स्तूप भी बनवाया है।

इनके लिखे हुए गद्य और पद्य दोनों के ग्रंथ मिलते हैं। गद्य-ग्रंथों में "सप्तस्मरण बालावबोध"[2] है इसकी रचना स० १६११ मे हुई।

वाचक विमलतिलक, साधुसुन्दर, महिमसुन्दर आदि इनके शिष्य थे जिन्होंने अपनी विद्वत्ता का परिचय अपने ग्रंथों मे दिया है। साधुसुन्दर का "उक्तिरत्नाकर"[3] उल्लेखनीय है।

२–सोमविमलसूरि[4] (लघुतपागच्छ)

इनका जन्म स० १५७० मे हुआ। स० १५७४ वैसाख शुक्ला २ को श्री हेमविमल सूरि द्वारा अहमदाबाद मे इनका दीक्षा संस्कार हुआ। स० १५६० मे इन्होंने गणि-पद प्राप्त किया। स० १५६५ में इनके वाचक-पद प्राप्त करने के उपलक्ष मे महोत्सव मनाया गया। आचार्य श्री सौभाग्यहर्षसूरि ने इनको सूरिपद प्रदान किया। स० १६०२ मे अहमदाबाद मे, स० १६०५ में खम्भतीर्थ मे, स० १६०८ मे राजपुर में, स० १६१० मे पाटण में, इन्होंने अपने चातुर्मास किये। स० १६३७ मे इनका स्वर्गवास हुआ। अपने जीवनकाल मे इन्होंने कई ग्रंथो की रचना की। गद्य ग्रंथों मे २ बालावबोध और एक टब्बा प्राप्त हैं :—

१—इस शास्त्रार्थ की विजय का वृत्तान्त कनकसोम कृत 'जयतपद वेलि" मे विस्तार से दिया गया है।

२—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान

३—ह० प्र० श्री मुनि विनयसागर-सग्रह, कोटा मे विद्यमान।

४—देखिये :— क-लघु पोसालिक पट्टावली पृ० ४४-४७
ख-जैन-गूर्जर-कविओ भाग ३ पृ० १५६६
ग-जैन-साहित्य का संक्षिप्त इतिहास टि० ७६१, ७७६, ८६१, ८६६, ६७३

१—दशवैकालिक सूत्र बालावबोध[1] २—कल्पसूत्र बालावबोध[2] (रचना स० १६२५) ३—कल्पसूत्र टब्बा[3]

३–चारित्रसिंह[4] (खरतरगच्छ)

यह खरतरगच्छ श्रीमतिभद्र के शिष्य थे। इनकी गणना परम विद्वानों एवं उच्च कोटि के कवियों में की जाती थी। इन्होंने गद्य और पद्य दोनों मे ८ रचनाये की हे। गद्य रचना सम्यक्त्वविचारस्तवन बालावबोध सं० १६३३ में झर्झरपुर मे लिखी गई। इसके अन्तिम २ पत्र अभय-जैन पुस्तकालय में विद्यमान हैं।

४–जयसोम[5]

श्री जिनमाणिक्यसूरि ने स० १६०५ में इनको दीक्षित कर इनका नाम जयसोम रखा। इससे पूर्व की प्रशस्तियों मे इनका नाम जयसिह मिलता है, ये क्षेमशाखा मे प्रमोदमाणिक्यजी के शिष्य थे। कहा जाता है कि इन्होंने अकबर की सभा के किसी विद्वान को शास्त्रार्थ मे निरुत्तर किया था। यह इनकी विद्वत्ता का प्रमाण हो सकता है। इनके, सस्कृत प्राकृत एव लोकभाषा के लगभग १२ ग्रथ मिलते हैं। लोकभाषा-गद्य की कृति प्रश्नोत्तर ग्रंथ है जिसकी रचना स० १६५० मे की गई थी[6]।

५–शिवनिधान (खरतरगच्छ)

यह श्रीजिनदत्तसूरि की शिष्य-परम्परा मे श्री हर्षसार के शिष्य थे। इनके शिष्यों में महिमसिह, मतिसिंह आदि प्रमुख शिष्य थे जिन्होंने

१—ह० प्र० खेड़ा-संघ-भडार में विद्यमान

२—ह० प्र० लीमडी-भंडार मे विद्यमान

३—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, वीकानेर में विद्यमान

४–देखिये:— क–जैन-गूर्जर-कविओ, भाग ३ पृ० १५१४, १५६६

ख–वही भाग २ पृ० ७३६

ग–जैन-साहित्य का सक्षिप्त इतिहास टि० ८५६, ८८२

घ–युगप्रधान जिनचन्द्र सूरि पृ० १६७

५–देखिये:— क–जैन-गूर्जर-कविओ भाग ३ पृ० १५६७

६–युगप्रधान जिनचन्द्र सूरि पृ० १६५-२०३

७-जैन-गूर्जर-कविओ भाग ३ पृ० १५६८

कई पद्य ग्र थों की रचनाये की। अपने पूर्व ज मेरुसुन्दर की भांति इन्होने भी कई उपयोगी ग्र थो की लोक भाषा में टीकाये की। इनको गद्य पुस्तको मे ५ बालावबोध इस प्रकार है १–शाश्वत-स्तवन पर बालावबोध[1] (स० १६५२ में शाकम्भरि मे लिखित) २–लघु सग्रहणी बालावबोध[2] (स० १६८० मे अमरसर मे लिखित) ३–कल्पसूत्र पर बालावबोध[3] (स० १६८० मे अमरसर मे लिखित) ४–गुणस्थान गर्भित जिनस्तवन बालावबोध[4] (स० १६६२ मे लिखित) ५–कृष्णवेलि पर बालावबोध। इनके अतिरिक्त निम्नलिखित गद्य-ग्र थ और मिलते है १–योगशास्त्र टब्बा+ २–कल्पसूत्र टब्बा[5] ३–चौमासी व्याख्यान ४–विधि प्रकाश[6]। ५–कालकाचार्य-कथा।

६–विमलकीर्ति[7]

इनके पिता हुंबड़ गोत्रीय श्री चन्द्रशाह और माता गवरा देवी थीं। स० १६५४ में इन्होने उपाध्याय साधुसुन्दर से दीक्षा ग्रहण की। श्री जिनराजसूरि ने इनको वाचक पद पर प्रतिष्ठित किया[8]। स० १६६२ में किरहोर मे इनका स्वर्गवास हो गया[9]।

इनकी लिखी हुई १० गद्य-कृतियो मे ६ बालावबोध है। "विचार षट्त्रिंशिका (दडक) बालावबोध" एव षष्ठिशतक-बालावबोध अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर, मे विद्यमान हैं। इनके अतिरिक्त श्री देसाई ने अपने "जैन-गूर्जर-कवियो" भाग ३ मे निम्नाकित रचनाओं का उल्लेख किया है:– १–जीवविचार बालावबोध २–नवतत्व बालावबोध ३–दडक

१—म० जै० वि० में ह० प्र० विद्यमान।
२—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान।
३—ह० प्र० बीजापुर मे विद्यमान।
४—ह० प्र० सांगानेर मे विद्यमान।
५—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान।
६—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर मे विद्यमान। मुनि विनयसागर संग्रह, कोटा।
७—जैन-गूर्जर-कविओ भाग ३ पृ० १६०२।
+—ह० प्र० तपा भडार जैसलमेर में विद्यमान।
८—ऐतिहासिक-जैन-काव्य-सग्रह पृ० ४६
९—युग प्रधान जिनचन्द्र सूरि, पृ० १६३

बालावबोध ४–पक्खीसूत्र बालावबोध ५–दशवैकालिक बालावबोध ६–प्रतिक्रमण समाचारी बालावबोध ७–उपदेशमाला बालावबोध ८–प्रतिक्रमण टब्बा।

७–समयसुन्दर[1] (खरतरगच्छ)

इनके पिता श्री पोरवाड़ शाह रूपसी और माता लीलादेवी थी। बाल्यकाल में ही इन्होंने श्री जिनचन्द्रसूरि से चारित्र ग्रहण किया। इनके विद्या गुरु वाचक श्री महिमराज एव श्री समयराज वाचक थे। इनकी विद्वत्ता भी विख्यात थी। स० १६४६ मे यह श्री जिनचन्द्रसूरि के साथ लाहौर गये वहॉ अकबर को सभा मे अष्टलक्षि नामक ग्रथ सुनाकर वाचक पद प्राप्त किया। सिन्ध मे विहार करके वहां गौ रक्षा का प्रशसनीय कार्य किया। जैसलमेर मे रावल श्री भीमजी को उपदेश देकर मीणों के हाथों से सांडा नामक जीवों को मारने से बचाया। स० १६७१ में श्री जिनसिंहसूरि ने लवेरे नामक ग्राम मे इनको उपाध्याय पद प्रदान किया। चैत्र शुक्ला १३ सं० १७०२ मे अहमदाबाद में इनका देहावसान हो गया।

यह राजस्थानी साहित्य के एक बहुत बड़े लेखक थे। इन्होंने कई ग्रंथों की रचना की। गद्य-ग्रथो मे "षडावश्यक-सूत्र-बालावबोध"[2] (र० स० १६८३) एव "यति आराधना भाषा"[3] (रचना स० १६८५) उल्लेखनीय है।

८–सूरचन्द्र[4]–

इनके जन्म-स्थान, माता एव वश आदि के विषय मे कुछ भी नही

.. . .

१–देखिये:—क–जैन-गूर्जर-कविओ, भाग ३ पृ० १६०७

ख–जैन-साहित्य का सक्षिप्त इतिहास टि० ५६, १३०, १३४, १४६, ३७४, ८४१, ८४४, ८४७, ५०७, ८६४, ८७६, ८६४, ६०४, ६०६, ६१०, ६५६, ६८०, ६६५

ग–युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरि पृ० १६७-६८

२—ह० प्र० ज्ञान भडार जैसलमेर मे विद्यमान।

३—ह० प्र० मुनि विनयसागर सग्रह कोटा में विद्यमान।

४—देखिये:—क–कविवर सूरचन्द्र और उनका साहित्य :–"जैन-सिद्धान्त-भास्कर" भाग १७, किरण १ पृ० २४

ख–जैन-गूर्जर-कविओ भाग ३ पृ० १६०६

मिलता। सस्कृत एव लोकभाषा मे इन्होंने लिखा है। राजस्थानी-गद्य मे लिखी हुई 'चातुर्मासिक व्याख्यान वालावबोध' स० १६६४ की रचना है।

मतिकीर्ति[1] (खरतरगच्छ)

यह श्री गुणविनय (खरतरगच्छ) के शिष्य थे। इनके गद्य-ग्रंथों में प्रश्नोत्तर-ग्रथ का उल्लेख स्वर्गीय श्री देसाई ने अपने जैन-गूर्जर-कविओ भाग २ पृ० १६०६ में किया है।[2]

इन लेखकों के अतिरिक्त अनेक जैन-विद्वानों ने अपनी गद्य-रचनाओं मे राजस्थानी का प्रयोग किया है। इन गद्य लेखकों एव इनकी रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं :—

लेखक	गद्य-रचना	लेखन-समय
१०–चन्द्रधर्म गणि (तपा०)	युगादिदेव स्तोत्र वाला०	१६३३ वि०
११–पद्मसुन्दर (खरतर०)	प्रवचन सारोद्धार वाला०	१६५१ वि०
१२–नगर्षि (तपा०)	सग्रहणी टवार्थ	१६५३ लगभग
१३–श्रीपाल (ऋषि)	दशवैकालिक सूत्र वाला०	१६६४ वि०
१४–कमललाभ (खरतर०) जिनचन्द्रसूरि, समयराज, अभयसुन्दर शि०	उत्तराध्ययन वाला०	
१५–कल्याणसागर	दानशील तपभाव तरगिनी	१६६४ वि०
१६–नयविलास (खरतर०)	लोकनाल वाला०	१६४० लगभग
१७–ब्रह्मर्षि (ब्रह्ममुनि)	लोकमालिका वाला०	
१८–विनयविमल शि०	जीवाभिगम सूत्र वाला०	
१९–धनविजय (तपा०)	छ कर्म ग्रथ पर वाला०	१७०० वि०
२०–श्री हर्ष	कर्म ग्रथ पर वाला०	१७०० वि०
२१–विमलरत्न सूरि	वीर चरित वाला०	१७०२ वि०
	जय तिहुअण वाला०	
	वृहत् संग्रहणी वाला०	
	शत्रुञ्जय स्तवन वाला०	
	नमुत्थुण वाला०	
	कल्पसूत्र वाला०	

१—युगप्रधान जिनचन्द्र सूरि पृ० २०२

२—ह० प्र० ज्ञान भडार बीकानेर मे विद्यमान

२२–राजसोम	श्रावकाराधना बाला०	
	इरियावही मिथ्यादुष्कृत स्तवन बाला०	
२३–हंसराज	द्रव्य संग्रह बाला०	१७०६ वि०
२४–कुंवर विजय	रत्नाकर पंचविंशति बाला०	१७१४ वि०
२५–पद्मचन्द्र	नवतत्व बाला०	१७१७ वि०
२६–वृद्धिविजय	उपदेशमाला बाला०	१७२३ वि०
२७–विद्याविलास	कल्पसूत्र स्तवन	१७३६ वि०
२८–यशोविजय उपा०	पंच निग्रंथी बाला०	
	महावीर स्तवन स्वोपज्ञ बा०	१७३३ वि०
	ज्ञानसार पर स्वोपज्ञ बा०	
२६–जीतविमल	ऋषभ पंचाशिका बाला०	१७४४ वि०
३०–विजयजिनेन्द्रसूरि शि०	स्थूलिभद्र चरित्र बाला०	१७६२ वि०
३१–अमृतसागर	सर्वज्ञशतक बाला०	१७४६ वि०
३२–सुखसागर	कल्पसूत्र बाला०	१७६२ वि०
	दीवाली कल्प बाला०	१७६३ वि०
	नवतत्व बाला०	१७६६ वि०
	पाक्षिक सूत्र बाला०	१७७३ वि०
३३–सभाचन्द्र	ज्ञानसुखड़ी	१७६७ वि०
३४–रामविजय	उपदेशमाला बाला०	१७८१ वि०
	नेमिनाथ चरित्र बाला०	१७८४ वि०
३५–लावण्यविजय	योगशास्त्र बाला०	१७८८ वि०
३६–भोजसागर	आचार प्रदीप बाला०	१७६८ वि०
३७–भानुविजय	पार्श्वनाथ चरित्र बाला०	१८०० वि०

इन रचनाओं के अतिरिक्त कई रचनाये ऐसी प्राप्त हैं जिनके लेखकों के नाम अज्ञात हैं। यह रचनाये राजस्थानी एवं गुजराती गद्य में मिलती है क्योंकि राजस्थान और गुजरात यह दो क्षेत्र ही जैन आचार्यों की निवास भूमि है। सोलहवीं शताब्दी के उपरान्त जब राजस्थानी और गुजराती दोनों स्वतन्त्र भापाये हो गई तब भी इन जैन आचार्यों की रचनाओ की भापा और शैली में कोई आकस्मिक अन्तर दिखाई नही पड़ता। धीरे धीरे उपरान्त की रचनाओं मे यह भेद विस्तृत हो गया।

२–व्याख्यान

इन व्याख्यानों के विपय पर्व-विधि और पर्व-अनुष्ठान के महात्म्य

हैं। यह व्याख्यान टीका और स्वतन्त्र दोनों रूपों मे मिलते हैं। सौभाग्य-पंचमी, मौन एकादशी, दीपावली, होलिका, ज्ञान पचमी, अक्षय तृतीया, आदि सभी पर्वों पर इन व्याख्यानो का पठन पाठन होता है। पर्व को मनाने की विधि, उस दिन किये जाने वाले अनुष्ठान आदि का विवरण इस प्रकार के ग्र थों मे दिया जाता है। उदाहरण के लिये "दीपावली-कल्प" और "सौभाग्य-पचमी" व्याख्यानो को लीजिए। प्रथम मे दीपावली से सम्बन्धित व्रत एव आचार विचारो को कहानियो द्वारा दृष्टान्त देकर समझाया गया है। इसी प्रकार "सौभाग्य पचमी" व्याख्यान मे कार्तिक सुदी पचमी का माहात्म्य और उसकी तपस्या का फल दृष्टान्त देकर बताया है।

इनका गद्य समझने के लिये कुछ उदाहरण यहा दिये जाते हैः—

१—श्री आदिनाथ पुत्र प्रथम चक्रवर्त्ति श्री भरत तेहनइ मरीचि इणै नामिइ पुत्र हूयउ। अनेरइ दिवसे आदिनाथ नइ केवलज्ञान ऊपनइ कु तई अयोध्या आव्या, देवताए समोसरनी रचना कीधी, तिणि अवसर वन-पालिकि आवी भरत नई वधावणी दीधी[1]।

२—श्री फलवधी पार्श्वनाथ प्रतै नमस्कार करी नै काती सुद पांचम तप नौ महिमा वर्णवीयै छै। भविक प्राणी नै उपगार भणी जिम पूर्वले आचार्य कह्यौ छै तिम हु पिण कहिस्यु। भुवन कहितां तीने त्रिभुवन मे सर्व अर्थनो साधक नौ करणहार ज्ञान छै। ज्ञान सेती मुक्ति पामी जै। ज्ञान सेती देवलोक का सुख पामी जै। तिणे वास्तै भविक प्राणियो प्रमाद छाडी नै काती सुदि पॉचम तपस्या करी भली तरै आराधउ। जिण भाति तै गुण मजरी अनै वरदत्त जिम पांचिम आराधी। दृष्टात [2]

३—प्रश्नोत्तर-ग्र थ

प्रश्नोत्तर रूप में ग्र थ लिखना जैन धर्म मे एक परिपाटी सी ही चल पड़ी है। सस्कृत और प्राकृत प्रश्नोत्तर ग्र थों के अनुवाद राजस्थानी भापा मे भी हुये, साथ ही उसी अनुकरण पर स्वतन्त्र प्रश्नोत्तर - ग्र थ लिखे जाते रहे। इन प्रश्नोत्तर ग्र थो मे जिज्ञासु प्रश्न करता है और आचार्य उसका उत्तर देकर उसकी जिज्ञासा का समाधान करते है। उदाहरण के

१—"दीपावली भापा कल्प" ह० प्र० अ० स० पु० बीकानेर मे विद्यमान
२—"सौभाग्यपचमी व्याख्यान" ह० प्र० अ० जै० पु० बीकानेर मे विद्यमान

लिये क्षमाकल्याण द्वारा रचित "प्रश्नोत्तर-सार्द्ध-शतक[1]" (रचना स० १८७४) तथा "विशेष-शतक[2]" (रचना काल १८८१) देखे जा सकते हैं। पहले ग्रंथ में भगवान तीर्थंकर व्याख्यान दे रहे हैं, जिज्ञासु प्रश्न करता है, और तीर्थंकर उसका समाधान करते हैं। इस ग्रंथ में कुल १५० प्रश्नों के उत्तर सग्रहीत हैं[3]। दूसरा संस्कृत का अनुवाद है। इसमें १०० प्रश्नों के उत्तर है।

भाषा की दृष्टि से प्रथम रचना पर गुजराती का तथा द्वितीय पर खड़ी बोली का प्रभाव दिखाई देता है। उदाहरणत:—

१—' चौवीस मे बोलै समय २ अनती हानि छै ए वचन सूत्र अनुसार छै। पिण कहण मात्र हीज नहीं छै समय २ एकेक वस्तु ना २ पर्याय घटै छै। पंचकल्पभाष्य मे जंबूद्वीपपन्नत्तीसूत्र में वृत्ति मे विस्तारै ये विचार कह्यो छै।"

प्रश्नोत्तरसार्द्धशतक पत्र २ (ख)

२—प्रश्न-पोया फूल से जिनराज जी की पूजा होय के नहीं, तब उत्तर कहै है-पोया फूल से जिनराज की पूजा होय। श्राद्धदिनकल्पसूत्र टीका में तैसे ही कह्यो है।

—विशेष शतक पत्र ६ (ख)

४—विधिविधान

यह जैनियों के कर्मकाण्ड के ग्रंथ हैं। इनमें पूजा-विधि, सामायिक, तपश्चर्या, प्रतिक्रमण, पौषध, उपधान, दीक्षा विधि आदि पर प्रकाश डाला गया है। "श्वेताम्बर दिगम्बर ८४ बोल[3]" मे दिगम्बर और श्वेताम्बर के ८४ भेदों को समझाया गया है। "खरतर तपा समाचारी भेद[4]" में खरतर-गच्छ तथा तपागच्छ के समाचारी भेद को स्पष्ट किया गया है। इस प्रकार

१—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय बीकानेर तथा मुनि विनयसागर संग्रह कोटा में विद्यमान

२—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर तथा मुनि विनयसागर सग्रह कोटा मे विद्यमान

३—ह० प्र० अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान।

४—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान।

के ग्रंथ भी कई मिलते हैं । क्षमाकल्याण कृत "श्रावक विधि प्रकाश[1]" और शिवनिधान कृत "श्राद्धमार्गविधि[2]" आदि इसी प्रकार के ग्रंथ हैं ।

गद्य का उदाहरण—

१—केवली ने आहार न मानै दिगम्बर, स्वेतांबर माने, केवली ने नीहार न मानै दिगम्बर, स्वेताम्बर मानै । केवली ने उपसर्ग न मानै दिगम्बर, स्वेताम्बर माने । + + + + आभरण सहित प्रतिमा न मानै दिगम्बर, स्वेताम्बर मानै । चवदै उपगर्ण दिगम्बर न मानै, स्वेताम्बर चवदै उपगर्ण साधु राखे ।

—दिगम्बर श्वेताम्बर ८४ बोल

२—खरतर विहार मै अचित पाणी लै सचित पाणी लै तपा सचित न लै । आँबिलै पिण सचित नो विसेष नहीं खरतर रै । खरतर त्रयवास तिविहार कीधै पाछले पहरै तिविहार चोबिहार करे । तपा परभात रो पचपाण सूरज उगतै ताइ करै ।

—खरतर तपा समाचारी भेद

५—तत्त्वज्ञान

इसके अन्तर्गत जैन दार्शनिक-विचार धारा के ग्रथ आते है । इन जैन-दर्शन के ग्रथों की सख्या बहुत बड़ी है । "आत्मनिदा-भाषा[3]" और "आत्म-शिक्षा-भावना[4]" यह दोनों ग्रथ उदाहरण के लिए उपयुक्त हो सकने है । दोनों का विषय आत्मा से सम्बन्ध रखता है । प्रथम में आत्मा को चिन्तन एव मनन में बाधक मान कर कोसा गया है । दूसरी मे आत्मा को सन्मार्ग पर चलने के लिये समझाया गया है । दोनों की शैली मे बहुत अन्तर है । दोनों के लेखकों के नाम अज्ञात हैं । इन दोनों के गद्य को देखने के लिये क्रमश २ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं —

१—हे आत्मा, हे चेतन, ऐ कुदृष्टां, ऐ कुश्रद्धायां, ऐ कार्यप्रवृत्ति, ऐ

१—ह० प्र० मुनि विनयसागर-सग्रह, कोटा मे विद्यमान
२—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर मे विद्यमान
३—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर मे विद्यमान
४—ह० प्र० अभय-जैन पुस्तकालय बीकानेर में विद्यमान

रस गृथ्थीपणौ, ऐ पोटी पोटी दृष्टां सामाइक दोय वड़ी मात्रा में तु मत चिंतवन कर। क्यां रे तु सम्यक्त मोहिनी क्या, रे तु मिश्र मोहिनी, क्यां रे कामराग में, क्यां रे स्नेहराग में, क्यां रे दृष्टि राग मे।.

—आत्मनिन्दा भाषा पत्र १ (क)

२—संसार माइ जीव नइ पांच प्रमाद महा वयरी जाणिवा। जिम कुण ही एकनइ एक वयरी हुइ। अनइ तेह वयरी बीहतउ सावधान थकउ रहइ। गाणे रपे वयरी मारइ। जां लगइ वइरी नइ वसिनावइ। तां लगइ वयरी पाखती प्रच्छन्न थिकउ छाड़इ नशी। . . ...

—आत्म शिक्षा भावना

६—कथा-साहित्य

जैन-धार्मिक-कहानियों की परम्परा बहुत प्राचीन काल से चली आती है। मध्यकालीन अवस्था तक पहुचने के लिये इन्हे कई स्तर पार करने पड़े। यह सभी कथाये प्राय. धार्मिक दृष्टि से ही उपयोगी है। यद्यपि इनके अतिरिक्त भी कुछ कहानिया ऐसी हैं जिनमें विनोदात्मक, ऐतिहासिक या बुद्धि-वर्द्धक तत्वों का समावेश है[1]। जैन-साहित्य में कथाओ के २ रूप मिलते हैं— १—निकथा २—धर्म-कथा। पहली के अन्तर्गत भक्त कथा, स्त्री-कथा और राष्ट्र-कथा आती है तथा दूसरी के अन्तर्गत धर्म-चर्चात्मक एव उपदेशात्मक कहानियां समाहित है। यह कथाये गद्य और पद्य दोनो रूपो मे मिलती हैं।

जैनागम-काल की कथायें—

जैनागम साहित्य मे ४ अनुयोग बतलाये गये है[2]। जिनमें प्रथमानुयोग में सदाचार सम्बन्धी कथाओं का उल्लेख है। जिनका विषय १—धार्मिक विधान के अनुसार सदाचारों का आचरण, २—मार्ग मे विघ्न बाधाये, ३—सदाचार की प्रतिज्ञाओ का निभाना, और ४—उसका परिणाम है। उपासकदशांग सूत्र में इसी प्रकार के धार्मिक आचारों का पालन करने

१—आराधना-कथा-कोप एव नन्दी-सूत्र की कथाये, राजशेखरसूरि के कथा ग्रथ की कथाये तथा प्रबन्ध-सग्रह की कथाये इनके उदाहरण है।

२—विशेष अध्ययन के लिये देखिये:—"जैन-भारती" वर्ष ११, स० १ पृ० २२।

वाले १० श्रावकों की कथा है। "अन्तगडदसा[1]" में तपस्या एवं उपवासों के द्वारा स्वर्ग-प्राप्ति की कथाये है। अनुत्तरोपपातिक, अन्त कृदशांग, मूलाचार आदि उल्लेखनीय कथा-ग्रंथ हैं। इस काल की कुछ कथाओं का सग्रह "दो हजार वर्ष पुरानी कहानियाँ" के नाम से प्रकाशित भी हो चुका है।

जैनागम-टीका-काल की कथायें—

विक्रम की पाचवीं से नवीं शताब्दी तक जैनागमों पर नियुक्तियां, भाष्य, चूर्णि और टीकाये लिखी गई[2]। इस काल मे स्वतन्त्र-कथा-ग्र थ बहुत कम लिखे गये। "वसुदेवहिण्डी", "पउमचरित्रम्" "धम्मिलहिण्डी" "हरिवंश-पुराण" आदि स्वतन्त्र कथा ग्रंथ कहे जा सकते है[3]। प्रथम २ ग्र थ महाभारत और रामायण के कथा-नायक कृष्ण और राम से सम्बन्धित हैं[4]। पौराणिक महापुरुषो की कथाओ के आधार पर "तरगवती", "मलयवती", "मगधसेना", "बन्धुमती", "सुलोचना" आदि कथाओ की रचना जैन विद्वानो ने की, क्योंकि इस समय वासवदत्ता सुमनोत्तरा, उर्वशी नरवाहनदत्ता, शकुन्तला, नलदमयन्ती आदि पौराणिक कथाये बहुत प्रचलित थीं इन्ही के अनुकरण पर जैन-आचार्यों द्वारा उक्त कथाये लिखी गई। आठवी शताब्दी मे श्री हरिभद्रसूरि ने "धूर्ताख्यान[5]" की रचना कर उसमे जैनेतर पुराणों की लोक प्रसिद्ध कथाओ का विनोदपूर्ण प्रस्तुत किया। इनका दूसरा कथा-ग्र थ "समराइच्च-कहा[6]" भी प्रसिद्ध है। श्री हरिसेन का "आराधना-कथा-कोष", श्री रविसेण का "पद्मपुराण", जयसिंह का "वरांगचरित्र", धनपाल का "भविष्यदत्त कथा" आदि नवीन शैली के कथा ग्र थो की रचना हुई। प्राचीन साहित्य से प्रमुख तत्व लेकर सर्व श्री जिनसेन,

१—देखिये:-"विश्व-भारती" वर्ष ३ अक ४

२—विशेष अध्ययन के लिये देखिये —डा० आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्याय एम० ए० डी० लिट० द्वारा सपादित "बृहद्कथाकोष" की भूमिका।

३—इन कथा ग्रंथों के मूल रूप अब अप्राप्य है।

४—विशेष अध्ययन के लिये देखिये.- नागरी-प्रचारिणी-पत्रिका वर्ष ५२ अ क १ श्री नाहटा जी का "जैन-साहित्यिक-लेख"

५—सिन्धी-जैन-ग्र थ-माला मे प्रकाशित

६—रायल ऐशियाटिक सोसाइटी, कलकत्ता, डा० हर्मन जैकोबी द्वारा सपादित।

गुणभद्र तथा हेमचन्द्र ने सस्कृत में, श्री शीलाचार्य, श्री भद्रेश्वर आदि ने प्राकृत में और पुष्पदन्त आदि ने अपभ्रंश में बड़ी बड़ी कहानियों की रचना की।

प्रकरण-ग्रंथ

दसवीं शताब्दी से तो जैन-मौलिक-कथा-ग्रन्थों की रचना का क्रम चल पड़ा। श्री दि० हरिसेनसूरि का "बृहद्-कथा-कोप"[1] (रचनाकाल स० ६८१) श्वे० श्री जिनेश्वरसूरि एव श्री देवभद्रसूरि आदि के कथा-सग्रह इस काल में मिलते हैं। प्रकरण-ग्रन्थों में धर्मोपदेश के दृष्टान्त या महापुरुषो के गुण स्मरण रूप में अनेक व्यक्तियों के नाम आये हैं। जिनका विस्तृत निर्देश टीकाकारों ने अपनी कथाओं मे किया है। इस प्रकार के पचासो प्रकरण-ग्रंथ ऐसे हैं जिनमें अवांतर कथाओं के रूप में कई कथायें संग्रहीत हैं। "भरहेसर-वृत्ति", "बाहुवली-वृत्ति", "ऋषिमण्डल-वृत्ति" आदि अनेक वृत्तियों मे सहस्रों कथाये हैं। मौलिक-प्रकरण-ग्रन्थों में सदाचार एव धर्मोपदेश के उदाहरण-रूप में कथाओं का उल्लेख हुआ है।

तेरहवी शताब्दी में रास, चौपाई, वेलि आदि में पद्य-कथा-ग्रंथ लिखे गये। प्रारम्भ में उक्त-वर्णित-वृत्तिया छोटी ही रहीं।[2] राजस्थानी भाषा का प्रयोग भी इन मे मिलता है।

राजस्थानी में जैन कथायें—

इस प्रकार जैन-साहित्य में कहानियो की परम्परा देखने के लिये डाली गई इस विहगम दृष्टि से स्पष्ट होता है कि जैन-कथा साहित्य बहुत प्राचीन एव विस्तृत है। पन्द्रहवीं शताब्दी से राजस्थानी-गद्य में लिखी गई जैन-कथाये मिलने लगती हैं। यह सब कथाये प्रायः धार्मिक ही रहीं जिनका मूल उद्देश्य धर्मोपदेश या धर्मशिक्षा रहा। यह कथाये दो रूपों में

. .. .

१—जैन-साहित्य का सक्षिप्त इतिहास टि० ७८१—८२, ८६८ से ६०१, ६७६।
श्री नाथूराम प्रेमी का "दिगम्बर-जैन-ग्रंथ-कर्ता और उनके ग्रंथ।"
कुछ दिगम्बर भंडारों की सूचियां "अनेकान्त" में प्रकाशित।
पडित कैलाशचन्द्र शास्त्री का "जैन-सिद्धान्त-भास्कर" मे प्रकाशित लेख
२—सिन्घी-जैन-ग्रंथमाला में प्रकाशित

मिलती है :— १-मौलिक एव २-अनुवाद। टीकाकारों ने व्याख्या करने के लिये इस प्रकार की कहानियों का सहारा लिया। इन कथाओं के असख्य रूप-रूपान्तर मिलते हैं। इन कथाओं का लेखन समय एव लेखकों का पता नहीं चलता क्योंकि इस ओर जैन-आचार्यों का ध्यान ही नही गया। यथा समय, अवसरानुसार उपयुक्त कहानी का प्रयोग कर आचार्यों ने अपने उद्देश्य को पूरा किया। यह कथाये ४ प्रकार की हैं :—

१—बालावबोध की कथाये
२—चरित्र कथाये
३—व्रत उपवासों की कथाये
४—हास्य-विनोदात्मक-कथाये

इन कथाओं का सक्षिप्त परिचय इस प्रकार है :—

बालावबोध की कथाये—

"बालावबोध" के अन्तर्गत आई हुई कथाये उपदेशात्मक हैं। इनकी रचनाये पन्द्रहवीं शताब्दी से प्रारम्भ हो चुकी थीं। सोलहवीं, सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी में इनकी बहुत रचना हुई इसके उपरान्त इनके लेखन कार्य मे शिथिलता आने लगी।

कोरे उपदेश की शिक्षा पाखड हो सकती थी। उसका स्थायी प्रभाव अधिक समय तक नहीं रह सकता था अतः उपदेशों के साथ दृष्टान्त रूप मे कथाओं को गुम्फित कर देने से जैन-आचार्यों को अपने कार्य मे अधिक सफलता मिली। इन कहानियो के तीन प्रकार हैं :—

क—पारस्परिक
ख—परिवर्तित
ग—नव-रचित

पहले प्रकार की वे कहानियां है जिनका उदाहरण के लिये परम्परा से प्रयोग चला आता था। यह कहानिया बहुत ही लोक प्रसिद्ध हो चुकी थीं। दूसरे प्रकार की कथाये जैनेतर धर्म-कथाओं, लोक प्रचलित कथाओं, ऐतिहासिक कथाओं आदि में आवश्यक परिवर्तित कर धार्मिक शिक्षा के उपयुक्त बनाई गई। तीसरे प्रकार की कथाओं के लिये जैन-आचार्यों को कहीं बाहर नहीं जाना पडा। जब उनको उपर्युक्त दोनों प्रकार की

कहानियों से उद्देश्य सफल होता दिखाई न दिया तब उन्होंने अपने अनुभव, कल्पना एवं बुद्धि बल से नवीन कथाओं की सर्जना की।

यह सभी कहानियाँ रूपक या दृष्टान्त रूप में लिखी गई हैं। पिण्ड-निर्युक्ति, आवश्यक, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, पयन्ना, प्रतिक्रमण आदि पर रचे गये बालावबोध-ग्रंथों में सहस्रों की संख्या में यह संग्रहीत हैं। इन कथाओं का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है :—

क—पाप और पुण्य की कहानियां:—

ऐसी कहानियों में पाप का दुष्परिणाम एवं पुण्य का सुफल दिखलाया गया है।

ख—श्रावकों की कहानियां:—

जैन-तीर्थकरों के अनुयायी बन कर जिन श्रावकों ने संसार त्यागा तथा मुक्ति प्राप्त की उनके जीवन की प्रमुख घटनाओं को लेकर लिखी गई कहानियों का प्रयोग भी जैन-आचार्यों ने अपने बालावबोधों मे किया है।

ग—सतियों की कहानियां :—

इसके अन्तर्गत उन साध्वी स्त्रियों की कहानियां आती हैं जिन्होंने शील की रक्षा के लिए यातनाये सही। इस कष्ट सहन के परिणाम स्वरूप ही उनकी वन्दना की गई है तथा इनके आधार पर कई उपदेशों की सृष्टि की गई।

घ—मनोविकारों के दमन की कहानियां :—

क्रोध, अहंकार, लोभ, मोह आदि मनोविकारो के दमन के लिये जैन-धर्म मे बहुत सी शिक्षाये दी गई है। इन मनोविकारो को जीत लेना ही जीवन का प्रधान उद्देश्य है। इसीलिये जैनाचार्यो ने कई दृष्टान्तिक कहानियो के आधार पर अपनी शिक्षाओं को आधारित किया है।

च—पारमार्थिक कहानियां :—

सदाचार का आचरण करने वाले व्यक्तियो को प्राप्त होने वाले फल

का दिग्दर्शन इन कहानियो मे किया है। सदाचरण से जो पारमार्थिक लाभ होता है उसकी महिमा ही इन कहानियों का वर्ण्य विषय है।

छ—जन्मजन्मान्तर की कहानियां:—

कर्मकाण्ड एव पुनर्जन्म पर जैन-मत आस्था रखता है। अत कर्मो का फल कई जीवन तक कैसा मिलता है इसका दिग्दर्शन कराने वाली कहानियों के प्रयोग भी जैन विद्वानो ने किये है।

ज—कष्ट सहन की कहानियां :—

परोपकार, अहिंसा आदि का स्थान जैन-मत मे बहुत ऊचा है। इनके पालन करने मे जो कठिनाइया उठानी पडती हैं उनका परिणाम अतत अच्छा होता है। समाज में इन सद्‌गुणों की प्रतिष्ठा करने के लिये ऐसी कई कहानियाँ मिलती हैं जिनमे उदाहरण देकर इस प्रकार कष्ट सहने का माहात्म्य बताया गया है।

झ—चमत्कारिक-कहानियां :—

जैन-आचार्यों, महापुरुषो, विद्याधरों आदि के द्वारा दिखलाये गए उन चमत्कारों से सम्बन्ध रखने वाली कहानियां भी मिलती हैं जिनसे प्रभावित होकर अनेक राजा महाराजाओ ने जैन-मत ग्रहण किया। इन कहानियो मे अलौकिकत्व की प्रधानता पाई जाती है।

इनके अतिरिक्त और भी कई विषय हैं जिन पर दृष्टान्त या रूपक के माध्यम से सदाचार की शिक्षा देने के लिये जैन-टीकाकारों ने अपने बालावबोधो मे कहानियों के प्रयोग किये।

चारित्रिक कथाये

चारित्रिक कथाये प्रायः अनुवाद रूप मे मिलती है। इनमें जैन, महापुरुषों एव तीर्थकरो आदि तथा उन श्रमण-अनुयायियों के जीवन की झांकियो के रूप में कथाये आती है। सस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रश मे कल्पसूत्र आदि रूपों मे लिखी गई कहानियो की भाति राजस्थानी मे भी इस प्रकार की कहानियां दृष्टिगोचर होती हैं। उदाहरण के लिये

"श्रीपाल-चरित्र[1]", "नेमिनाथ-चरित्र" (टव्वा[2]) "पार्श्वनाथ या अष्ट-गणधर-चरित्र[3]" "जम्बू-चरित्र[4]" "उत्तमकुमार-चरित्र[5]" "मुनिपति-चरित्र" आदि देखे जा सकते है।

व्रत उपवासों की कहानियां :—

व्रत और उपवास जैन-सम्प्रदाय के अत्यन्त आवश्यक अंग रहे हैं। आत्मशुद्धि, अहिंसा आदि की साधना के लिये इनका उपयोग किया जाता रहा है। धार्मिक-पर्वों का महत्व बताने के लिये किये गये व्याख्यानों में भी इस प्रकार के व्रत और उपवासों का प्रसग आता है। इन कथाओं की परम्परा भी प्राचीन है। सस्कृत मे भी ऐसी कई कहानियां मिलती हैं[6]।

ऐसी कथाओं में व्रत और उपवास का महत्व दिखाया जाता है। यह कथाये दृष्टान्त रूप में लिखी गई है। इनके प्रमुख विषय इस प्रकार हैः—

१—व्रत विशेष का महात्म्य
२—व्रत विशेष का पालन करने से पूर्व श्रावक की दशा
३—उसके द्वारा व्रत विशेष एव अनुष्ठान आदि
४—उस व्रत की फल प्राप्ति के रूप में मनोकामना पूर्ण होना।

लोकभाषा में "सौभाग्य-पंचमी की कथा", "मौन एकादशी की कथा", "ज्ञानपचमी की कथा" आदि अनेक कथाओं के अनुवाद मिलते हैं।

हास्य विनोदात्मक कथायें :—

उपदेशात्मक कहानियों के अतिरिक्त जैन-कथा-साहित्य में हास्य और विनोद की कहानिया भी मिलती है, किन्तु यह हास्य और विनोद धर्म से बाहर नही झांकता अत· हास्य और विनोद में भी धार्मिक तत्व अन्तर्निहित होता है। उदाहरण के लिये "धूर्त्तोपाख्यान" देखिये·—

१—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर मे विद्यमान। न० ३०५६
२—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान। नं० ३००६
३—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान। न० ३०८१
४—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर मे विद्यमान। नं० ३१३४
५—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान न० ३१०४
६—विशेष अध्ययन के लिये देखियेः—जैन-सिद्धान्त-भास्कर, वर्ष ११ अंक १

इस कथा में ५ धूर्त्तों द्वारा सुनाये गये व्याख्यानों का उल्लेख है। ये धूर्त्त अपनी कथाओं मे ऐसे कथानक लाते हैं जिससे आश्चर्योन्मुख मनोरंजन होता है जैसे हाथी से भयभीत होकर तिल्ली के पेड़ पर चढ़ना, उस पेड़ को हिलाया जाना, उसके फूलों का नीचे गिरना, हाथी के पैरों से कुचले जाने पर उसमे से तेल निकलना, उसकी नदी वह जाना, हाथी का उस नदी मे बहकर मर जाना, उपरान्त धूर्त्त का नीचे उतरना, उस तेल को पी जाना और उज्जैन पहुचकर धूर्त्तों का मुखिया बनजाना आदि। इसी प्रकार की और भी अनेक कथाये इस कथा ग्रंथ में आई हैं। इन कथाओं के सत्य होने का समर्थन दूसरे श्रोता-धूर्त रामायण महाभारत आदि के पुष्ट प्रमाण देकर करते हैं। इस "धूर्त्तोपाख्यान" का दूसरा पक्ष भी है। यह ग्रंथ केवल निरर्थक हास्य के लिये ही नही लिखा गया। इसका मूल उद्देश्य अप्रत्यक्ष रूपों मे जैनेतर धर्मों में प्रचलित उपहासास्पद प्रकरणों का दिग्दर्शन कराना भी है। इस प्रकार इन दोनों उद्देश्यो की पूर्त्ति इस ग्रंथ में हुई है।

प्रसग रूप में आई हुई इस प्रकार की और भी कई कहानियां है जो हास्य के साथ साथ शिक्षा, जैन-मत का समर्थन, जैनेतर धर्मो की रूढियो का खण्डन या उपहास करने में सहायता करती हैं।

ख—पौराणिक-गद्य-साहित्य

पौराणिक-धार्मिक-गद्य अनुवाद, टीका तथा कथाओं के रूप मे मिलता है। पुराण, धर्मशास्त्र, माहात्म्य-ग्रंथ, स्तोत्र ग्रंथ आदि के अनुवाद राजस्थानी भाषा मे प्राप्त हैं। इसके उदाहरण उन्नीसवीं शताब्दी से पूर्व के नही मिलते। इन अनुवाद और टीकाओं मे एक सी भाषा और शैली को अपनाया गया है। यहाँ तक कि एक ही मूल के कई अनुवाद भी मिलते हैं। वास्तव में न तो विषय की दृष्टि से और न भाषा की दृष्टि से यह साहित्य के विद्यार्थी के काम के हैं। केवल धार्मिक-साहित्य की एक विशेष गद्य-शैली के रूप मे ही इनका महत्व है। उदाहरण के लिए उक्त विषयों के कुछ अनुवाद एव टीकाओं का उल्लेख ही अलम् होगा।

पौराणिक विषयो में गरुड़ पुराण तथा भागवत के दसम स्कन्ध के अनुवाद लिये जा सकते है। इनमे प्रथम के ८ अनुवाद मिले है[1] जिनमे

...

१—यह सभी हस्त प्रतियां अनूप-सस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर मे विद्यमान है।

३ अनुवाद तो लक्ष्मीधर व्यास, श्रीकृष्ण व्यास तथा श्री हीरालाल रताणी ने क्रमशः सम्वत् १८७७, स० १८८६, स० १९१३ में किये। चौथे अनुवाद का लेखन समय स० १९१४ मिलता है। शेष ४ अनुवादों के न तो लेखक का पता चलता है और न उसके लेखन समय का।

धर्मशास्त्र-विषयक "कर्मविपाक" तथा प्रतिष्ठानुक्रमणिका २ अनुवाद हैं। कर्मविपाक में कर्ममीमांसा तथा दूसरे में प्रमुख प्रतिष्ठानों का उल्लेख हुआ है। माहात्म्य-ग्रंथों में स्कन्धपुराणान्तर्गत एकादशी माहात्म्य तथा इसी विषय का बारह एकादशी के माहात्म्य से सम्बन्ध रखने वाले अनुवाद मिलते हैं। दूसरा अनुवाद अपनी प्रश्नोत्तरी भाषा के लिए उल्लेखनीय है। स्तोत्र ग्रंथों मे १–किसन-ध्यान-टीका[1] २–रामदेव जी महाराज रो सिलोको[2] ३–विष्णु-सहस्रनाम टीका[3] आदि हैं। इनमें टीकाओं के साथ साथ सस्कृत में मूल पाठ भी दिया है।

वेदान्त के विषयों में भगवद्गीता की टीकाये भी महत्वपूर्ण हैं। "अरजन गीता[4]" में अर्जुन द्वारा प्रश्न पूछे जाने पर भगवान कृष्ण संक्षेप में उसे गीता का सार समझाते हैं। इसका कलेवर बहुत ही छोटा है। भगवद्गीता की दो टीकाये "भगवद्गीता-टीका[5]" तथा "भगवद्गीता-संक्षेपानुवाद[6]" भी इसी प्रकार की है। इनमें प्रथम अधिक प्राचीन प्रतीत होती है। इसके प्रारम्भिक एव अन्त के कुछ पत्र नष्ट हो गये है। दूसरी प्रति अर्वाचीन है इसमें सस्कृत का मूल पाठ नहीं है किन्तु इसकी भाषा प्रथम की अपेक्षा कम प्रौढ़ है। दूसरी कृति से मिलती जुलती "भगवद्गीता-सार[7]" नाम की एक सक्षिप्त टीका और है जिसमें अर्जुन और कृष्ण के पारस्परिक संवाद है। इसमें अध्याय का क्रम नहीं रखा गया है।

.. ..

१—ह० प्र० अनूप-सस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान

२—वही

३—वही

४—वही

५—वही

६—वही

७—वही

कथायें—

ये कथाये २ प्रकार की है १—व्रत-कथाये २—पौराणिक-कथाये।

धार्मिक-उपदेश, नैतिक-परम्परा तथा कर्मकाण्ड की महत्ता दिखाना ही व्रत-कथाओं का उद्देश्य है। ये कथाये पर्व-विशेष, तिथि विशेष या वार (दिन) विशेष से सम्बन्ध रखती है। व्रत-कर्मकाण्ड इनका महत्वपूर्ण अ ग है। जैन-कथाओं या बौद्धों की जातक कथाओं का प्रयोग जिस प्रकार धामिक उद्देश्य से किया गया है उसी प्रकार दृष्टान्त रूप में इन कथाओं का उपयोग हुआ है। व्रत-कथाओं में व्रत का माहात्म्य इस प्रकार दिखाया जाता है कि साधारण जनता इनकी ओर स्वाभाविक रूप से आकर्षित हो जाती है। ये कथाये परिणाम रूप मे मनोवांछित फल प्रदान करने वाली होती है। इन कथाओ का प्रारम्भ प्रमुख देवताओं से माना गया है। जैसे अमुक व्रत-कथा सूर्य ने याज्ञवल्क से कही, कृष्ण ने युधिष्टर से कही या कृष्ण ने नारद से कही इत्यादि। उस व्रत के पालन करने का किस को कौनसा फल मिला, उस व्रत पालन की क्या विधियाँ है, क्या अनुष्ठान है ये सभी बाते इन कथाओ मे मिलती है। एकादशी, नृसिह-चतुर्दशी, जन्माष्टमी, रामनौमी, सोमवती-अमावस्या, ऋषि पचमी, बुद्धाष्टमी, गणेश चतुर्थी आदि अनेक कथाये इसी प्रकार की है [1]। ये सभी कथाये सस्कृत कथाओं पर आधारित है।

व्रत कथाओ के अतिरिक्त कुछ अनूदित कथाये ऐसी भी है जो पुराण, महाभारत, रामायण आदि की कथाये है। जैसे—नासिकेत री कथा, ध्रुव-चरित्र, रामचरित री कथा, तन्त-भागवत, शान्ति पर्व री कथा इत्यादि[1]।

इन कथाओ की भाषा और शैली प्राय: मिलती जुलती है। चलती भाषा ही काम मे लाई गई है। देशज शब्दो के प्रयोग भी अधिक मिलते है। एक उदाहरण देखिये—

"गगाजी रो तट छै। विसपायन रिषेसुर बारै बरसां री तपस्या करने बैठा छै। बरत सूं ध्यान करनै बैठा छै। तठै राजा जयसेन आयौ। आय ने विसपायन जी सू निमस्कार कीयो। निमस्कार करि नै राजा पूछियौ श्री रिषेसुर जी थे मोटी बुध रा धनी को। रिपेसुरां मे वडा छो। श्री व्यास जी रा सिप छो थे मोन् पाप मुचनी कथा सुनाओ।"

—नासिकेत री कथा[1]

१—ह० प्र० अनूप-सस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर मे विद्यमान

३—कलात्मक - गद्य

क—बात-साहित्य

कहानी का बीज-बिन्दु

मानव की रागात्मक-प्रवृत्ति में ही साहित्य-सर्जना की मूल शक्ति अन्तर्निहित है। संसार का सम्पूर्ण साहित्य मानव के मनोभाव एवं मनोविकारों का इतिहास है। कहानी साहित्य का एक महत्वपूर्ण अंग है जिसमें मानव की औत्सुक्य वृत्ति को मनोरंजनात्मक शान्ति मिलती है। मनोवैज्ञानिक धरातल पर, चाहे वह वैयक्तिक हो अथवा सामूहिक, कहानी की रूपरेखा बनी है—उसका विकास और विस्तार हुआ है। संक्षेप में कहानी का बीज-बिन्दु मानव के भावना-क्षेत्र की जिज्ञासा एवं कुतूहल का निकटतम सम्बन्धी है।

आदि मानव और आदि प्रवृत्ति

आदि मानव की आदि प्रवृत्ति तथा उसके व्यापार इतने विस्तृत नहीं थे। इस अवस्था तक पहुंचने के लिये उसे कई ऊंची नीची भूमियां पार करनी पड़ी। प्रारम्भ-काल में प्रकृति ही उसके लिये सब कुछ थी। उसने प्रकृति को समझना प्रारम्भ किया। इस प्रकार उसे कई अवस्थाओं में से निकलना पड़ा होगा। इन अवस्थाओं का आनुमानिक अनुक्रम इस प्रकार हो सकता है:—

१—प्रकृति और आदिमानव का सम्पर्क।
२—उसके द्वारा प्रकृति में देवत्व एव आत्मतत्व का आरोप।
३—प्रकृति में परा-प्रकृति की अवधारणा।
४—मानव, प्रकृति और परा-प्रकृति में पारस्परिक सम्पर्क तथा कार्य-कारण साम्य, अंश-अंशी की कल्पना।

प्रथम अवस्था में आदि मानव को प्रकृति से भय हुआ। आतंक से पराभूत होकर दूसरी अवस्था तक पहुंचने तक उसने प्रकृति की उपासना आरम्भ करदी। सूर्य, इन्द्र, अग्नि आदि में उसे देवत्व दिखाई पड़ा। यह अवस्था अधिक स्थायी नहीं रह सकी। उसकी समझ में धीरे धीरे आने

लगा और उसको प्रकृति का रहस्य ज्ञात हुआ। परिणामत. उसका आतक कम होने लगा। वह प्रकृति के विविध उपादानो को अपनी ही भांति प्राणवान समझने लगा। तीसरी अवस्था मे उसने प्रत्यक्ष-प्रकृति की सीमा से बाहर झांका। उसे किसी अन्य कर्त्तव्य-शक्ति का आभास हुआ। इसके कारण वह चौथी अवस्था में आ पहुचा तथा अपने में भी वह एक असीम शक्ति का आविर्भाव समझने लगा। उसे कार्य कारण का ज्ञान हुआ तथा उस असीम शक्ति के साथ उसने अ श-अ शी का सम्बन्ध स्थापित किया।

मानव की ज्ञान-भूमियां—

आदि काल से अर्जित मानव का ज्ञान-स्रोत प्रधान रूप से २ धाराओं में प्रभावित हुआ। १—विशिष्ट और २—साधारण, पहले प्रकार का ज्ञान समाज नियता ऋषि—महर्षियो की थाती बना जिसके आधार पर उन्होंने समाज की व्यवस्था की। इसके लिये उनके पास दो अमोघ शस्त्र थे : श्रद्धा और भय। धार्मिक शिक्षा के लिये श्रद्धा बहुत आवश्यक वस्तु थी जिसके बिना आगे नही बढ़ा जा सकता था। दूसरा था दड का आतक। यह भी एक ऐसा अ कुश था जिसके कारण पीछे नहीं हटा जा सकता था। पाप और पुण्य के धरातल निश्चित हुए। सामाजिक ज्ञान से समाज मे परस्पर नैतिक सम्बन्ध एव मनोरजन की सामग्री एकत्रित की गई।

यह सब कार्य कहानी के द्वारा ही सम्पन्न हुआ। वैदिक काल, उपनिषद्-काल, पौराणिक-काल, रामायण तथा महाभारत-काल सभी मे कहानियो का प्रभुत्व रहा है। बौद्ध-धर्म की जातक कथाये तथा जैनों के धर्म-ग्र थों की कथाये भी धार्मिक शिक्षा के महत्वपूर्ण अ ग रही है।

भारत के प्राय सभी प्रान्तों मे इस प्रकार की धार्मिक, नैतिक या उपदेशात्मक-कथाये किसी न किसी रूप मे लोक-भाषा मे मिलती है। इनके अतिरिक्त प्रान्त की स्थानीय सभ्यता एव सस्कृति के आधार पर भी कहानियां बनती रही। यह क्रम अब भी चल रहा है।

राजस्थान भी इसका अपवाद नहीं रह सका। यहां की राजनैतिक परिस्थिति, सभ्यता एव सस्कृति के मान, प्रचलित आचार-व्यवहार, आदर्श आदि का प्रभाव यहा की कथा—साहित्य पर पड़ा, इन्हीं के आधार पर पारम्परिक कथाये चलती रही तथा नवीन कहानियो की रचना भी बन्द नहीं हुई। इन कहानियो के असख्य रूप-रूपान्तर प्राप्त होते है।

राजस्थानी-वातों पर सांस्कृतिक प्रभाव

राजस्थान की कहानियों पर प्रमुखत चार सस्कृतियों का प्रभाव पड़ा। १–ब्राह्मण-सस्कृति २–जैन-संस्कृति ३–राजपूत सस्कृति तथा ४–मुस्लिम सस्कृति। इनमें प्रथम दो सस्कृतियों के प्रभाव प्राचीन हैं। ब्राह्मण कथा साहित्य में पौराणिक, आनुष्ठानिक एव नैतिक या उपदेशात्मक रहीं[1]। जैन कथा-साहित्य में दृष्टान्त रूप में उनका उपयोग हुआ है[1]। राजपूत संस्कृति से प्रभावित होने वाली कहानियां ऐतिहासिक वीर पुरुषों से सम्बन्ध रखने वाली हैं। इनमें राजपूतों के आदर्श का चित्रण हुआ है। मुसलमानों के आने पर उनकी सस्कृति का प्रभाव यहां के (राजस्थान के) कथा साहित्य पर भी पड़ा। फलस्वरूप कुछ ऐसी कहानियां भी मिलती हैं जिनमे वासनात्मक प्रेम आदि की छाप दिखाई देती है।

राजस्थानी-वातों का वर्गीकरण

सम्पूर्ण राजस्थानी वातों को स्थूल रूप से दो भागों में विभक्त कर सकने हैं :— १–मौखिक और सग्रहीत २–पारम्परिक, नव-रचित एव अनूदित

मौखिक और संग्रहीत—

कहानी सुनने और सुनाने का एक नैसर्गिक व्यापार है। राजस्थान में भी असख्य कहानिया सुनी और सुनाई जाती हैं। यह कहानियां "वात" नाम से पुकारी गई हैं। कहानियां कहने और सुनने वालों की तीन कोटियां मिलती हैं : १–घर के भीतर २–मुहल्ले या गाव की चौपाल मे ३–धनिकों के रग महल मे।

घर में भोजन कर लेने के उपरान्त बच्चे और बूढे जब सोने की तैयारी करने लगते है तब बच्चे अपनी बूढी दादी, नानी या मां से कहानी सुनाने का आग्रह करते है। बच्चो का मन रखने के लिये कहानियां सुनाई जाती है। एक दो कहानियों से बच्चों का मन नही भरता। उनका "एक और" कथन तब तक समाप्त नही होता जब तक उनको नीद नही आ जाय कहानी कहने वाले के पास भी उनका अक्षय भडार होता है।

१–पिछले पृष्ठों मे इनका विवरण दिया जा चुका है।

गांवों में रात्रि के समय, प्रमुख रूप से शीतकाल की दीर्घ-रात्रियों में भोजन करने के उपरान्त बीच में आग जलाकर जब ग्राम वासी अग्नि के आस-पास गोलाकार रूप मे बैठकर ठड से छुटकारा पाने का प्रयास करते है तब इधर-उधर की चर्चा के उपरान्त कहानियो का रग जमता है। कहानी कहना भी एक कला है और सुनना भी। एक व्यक्ति कहानी कहने लगता है और श्रोताओं मे से कोई एक "हू कारा" देता है। इस "हू कारे" के बिना कहानी मे रस नही आता + तथा कहने वाले का उत्साह भी ठडा पड़ जाता है। इसीलिये राजस्थान में यह कहावत प्रसिद्ध हो गई है "वात मे हू कारा, फौज मे नगारा"

धनिकों का मन वहलाने के लिये कहानी भी एक साधन है। यहां उचित वेतन पर व्यवसायी कहानी कहने वाला नियुक्त किया जाता है। भोजन आदि से निवृत्त होकर मसनदों के सहारे बैठे हुए रईस कहानी सुनते हैं, उनके आसपास कुछ आदमी और बैठ जाते है। पेशेवर कहानी कहने वाले की कहानियों मे कला एवं रसात्मकता अधिक होती है। लम्बी चौड़ी भूमिका के उपरान्त कहानी का आरम्भ होता है। प्रसगवश आये हुए वर्णनात्मक स्थानों का बडी सजावट के साथ चित्रण किया जाता है। यह कहानिया छोटी से छोटी और बड़ी से वड़ी होती हैं, यहां तक कि एक-एक कहानी कहने में रातें वीत जाती हैं पर सुनने वालों की उत्सुकता मे किसी प्रकार का अन्तर नही आता।

यह मौखिक वातें कर्ण-परम्परा के आधार पर फलती फूलती रहती हैं। लोक-रुचि एव लोकरजन के अनुसार समय-समय पर परिवर्तित एव परिवर्द्धित होती रहती है।

इन मौखिक वातों में से कुछ को लिपिबद्ध करने का प्रयास अत्यन्त आधुनिक है। लिखित रूप मे आ जाने पर इन वातो का कलेवर निश्चित हो गया है, अब उसके परिवर्तन का कोई कारण नही रहा। अब वे पठन-पाठन की वस्तु हो गई है। इन सग्रहों के लेखक एव लेखन-समय का उल्लेख नही मिलता, इसीलिये इनका लिपि काल निश्चित नही किया जा सकता फिर भी यह कहा जा सकता है कि अठारहवीं शताब्दी से पूर्व के ऐसे प्रयास अब उपलब्ध नही है।

पारम्परिक-नव-रचित एवं अनूदित

सग्रहीत वातों में तीन प्रकार की कथाये मिलती है :— १-पारम्परिक

२–नव-रचित एव ३–अनूदित। पारम्परिक वाते तो श्रुत-परम्परा से मौखिक रूप मे चली आती हुई वातों का यथावत संग्रह है। कुछ कहानियों की नवीन सृष्टि भी हुई क्योंकि कथा-सर्जन लोक-मानस की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। इनके अतिरिक्त पौराणिक काल की कथाओं के भाषानुवाद भी राजस्थानी में किये गये। रामायण और महाभारत की कथाये उल्लेखनीय है।

राजस्थानी के संग्रहीत वात साहित्य को २ प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है–क–अर्द्धैतिहासिक वाते, ख–अनैतिहासिक या काल्पनिक वाते।

क–अर्द्धैतिहासिक-वातें

अर्द्धैतिहासिक वे वाते है जिनमे पात्र एव घटनाओं में से एक ऐतिहासिक हो. ये कहानियां इतिहास से भिन्न होती है। इनमें या तो पात्र ऐतिहासिक होते है और घटनाये अनैतिहासिक या ऐतिहासिक घटनाओं में कुछ काल्पनिक परिवर्तन अनैतिहासिक पात्रों के प्रयोग से कर दिये जाते है।

राजस्थान सदैव से ही अपनी वीरता तथा बलिदान और वैभव के लिये प्रसिद्ध रहा है। राजपूतों के युद्ध और प्रेम, आत्मसम्मान की भावना, शरणदायिनी शक्ति, प्रजा-पालन आदि साहित्य के लिये शाश्वत प्रेरणा के मनोहर उत्स है। राजपूत रमणियों के जौहर उनकी सतीत्व निष्ठा एव वीरता आदि आज भी अलौकिक वस्तु जान पड़ती है। इस प्रकार जीवन के स्पन्दन का अनुभव इन कथाओं मे मिलता है। ये अर्द्धैतिहासिक कथायें दो प्रकार की है :— अ–वीर गाथात्मक, आ–प्रेम गाथात्मक।

अ–वीर गाथात्मक अर्द्धैतिहासिक कथायें

वीरता राजस्थान का आदर्श रहा है अतः कहानियों में किसी न किसी प्रकार से यह तत्व पाया जाता है। व्यक्ति या व्यक्तियों के जीवन-चरित्र इसी को केन्द्र मान कर चले हैं। स्वदेश-प्रेम, जाति-प्रेम, गौरक्षा, आत्म-सम्मान आदि के लिये अपने प्राण विसर्जन तक कर देना यहां का प्रधान आदर्श रहा। इस प्रकार की कुछ कथाये निम्नांकित हैं।

"राव अमरसिह जी री वात"[1] (लिपिकाल स० १७०६) इस कथा

1—भारतीय-विद्या, वर्ष २ अंक १ पृ० ३४

में राव अमरसिंह से सम्बन्ध रखने वाली घटनाओं पर प्रकाश डाला गया है। जैसे, जोधपुर-नरेश महाराजा गजसिंह द्वारा अमरसिंह को जोधपुर से निष्कासित किया जाना, अमरसिंह का बादशाह शाहजहां के समीप पहुंचना, बादशाह द्वारा उनको नागौर जागीर में मिलना, बीकानेर से युद्ध, सलाबत-खां से उनकी खटपट तथा भरे दरबार मे उसको कटार से मार डालना, असावधान अवस्था में उन पर खलील खां का आक्रमण, उसकी असफलता, अर्जुनसिंह गौड़ द्वारा धोखे से अमरसिंह का मारा जाना। बादशाह द्वारा उनका शव उनके साथियो को देना, उनके साथियो द्वारा युद्ध, अर्जुनसिंह द्वारा बादशाह को भड़काना, बादशाह का क्रोधित होकर राजपूतों को लुटवाना, कुछ राजपूतों का मारा जाना, अमरसिंह की रानियो का सती होना आदि स्थानो पर अमरसिंह का व्यक्तित्व व्यक्त हुआ है। "फमै धीरधार री वात" में फमै नामक एक वीर राजपूत सुवावड़ी का राजा था। जीदरै खीची ने पाबूजी की गाये चुराई। पाबू जी ने युद्ध करके गाये छीनली। इस युद्ध में बूडो जी अपने १२ साथियो के साथ मारे गये। जीदरा अपने को असमर्थ पाकर फमै की शरण मे आया। पाबू जी और फमै मे युद्ध हुआ जिसमे पाबू जी मारे गये। और फमा धीरधार कहलाया। "महाराजा करणसिंह जी रा कुवरा री वात" मे वीकानेर नरेश महाराजा करणसिंह जी के चारों पुत्रों - अनूपसिंह जी, केशरीसिंह जी, पद्मसिंह जी और मोहनसिंह जी की वीरता पर प्रकाश डालने वाली घटनाये है। इस समय औरगजेब देहली का सम्राट था। इन चारों कुवरों ने उसकी सहायता की थी। केशरीसिंह जी की वीरता पर तो उसे विश्वास एव गर्व था। इस विपय मे २ दोहे प्रसिद्ध है—

केहरिया करणेश का तै सूजौ भगै सार
दिली सुपने देख सी गयो समुंदा पार।

पिड सूजौ पाधारियौ औरग लियौ उबारि
पतिसाहो राखी पगै केहर राजकुमार।

इसीलिये औरगजेब के राज्य मे गोवध करने वाले ३२ कसाइयों को इन्होंने मौत के घाट उतार दिया और औरगजेब ने उसका कोई प्रतिकार नहीं किया। मोहनसिंह जी ने भरे दरबार मे शहर कोतवाल का वध कर दिया था। बात बहुत छोटी सी थी, उस मुसलमान कोतवाल ने मोहनसिंह जी के हिरन को अपने व गले पर बांध लिया था तथा उसको लौटाने से इन्कार किया था। पद्मसिंह जी की वीरता से सम्बन्ध रखने वाली कथा

काल्पनिक सी जान पड़ती है। इस कथा में दिखाया गया है कि उन्होंने अपनी वीरता से किसी भूत को परास्त किया था।

इसी प्रकार "राठौड़ सीहै जी ने आसथान री वात" में कन्नौज से सीहै जी के गमन से आसथान द्वारा खेड़ विजय तक का वर्णन है। "गोहिल अरजन हमीर री वात" मे अनहिलवाड़ा पाटण के सोलकी राजा के दोनों पुत्र अरजन और हमीर की कथा है। "जैसलमेर री वात" में जैसलमेर के राज रावल रतनसिह के शासन काल में जैसलमेर पर अलाउद्दीन द्वारा किये गये आक्रमण से रावल कैहर के राज्यारोहण तक का विवरण है। "नाराइन मीढ़ा खां री वात" मे माडव के पठान राजा मीढ़ा खां का बूंदी के नारायणदास के द्वारा मारा जाना दिखाया है। "राजा भीम री वात" अनहलवाडा पाटण के शासक भीम तथा उसके उत्तराधिकारी करण की कथा है। "खीचिया री वात" मे औरगजेब के समय में हाड़ा भगवतसिह चतरसालोत की विजय का चित्रण है। "नानिग छावड़ री वात" में नानिग, देवग, अजैसी और विजैसी इन चारों छावड भाइयों का सिहोरगढ़ से पोकरण आना तथा नानिग का वहां का अधिपति वनना है। "माहलां री वात" मे राणा मोहिल सुरजणोत के समय से वैरसल तथा नरवद की राव गोधे द्वारा पराजय, वीदो का अधिपति होना वर्णित है। "रायसिंघ खींवावत री वात" मे रायसिह खींवावत जोधपुर नरेश जसवतसिह जी का एक सरदार था। महाराजा गजसिह जी की मृत्यु के उपरान्त वास्तविक उत्तराधिकारी अमरसिह जी के स्थान पर जसवतसिंह जी को राजा वनाने में इन्होंने सहायता की थी। इसके अतिरिक्त मुहणौत नैणसी द्वारा की गई आर्थिक-अव्यवस्था को इनकी सहायता से जसवंतसिह जी ने ठीक किया।

"तुंवरा री वात" हरदास मौकलोत वीरमदे दूदावत री वात" "गोपालदास गौड़ री वात", "राठौड़ ठाकुरसी जैतसीहोत री वात" आदि इसी प्रकार की व्यक्ति प्रधान वाते हैं।

इन वातों में ऐतिहासिक घटनाओं के अतिरिक्त कल्पना तथा अभौतिक तत्वों की सहायता भी ली गई है जैसे "तुंवरां री वात" मे रामदे जी को अलौकिक एव दिव्य पुरुष वतलाया गया है। पोकरण में भैरव राक्षस के रहने के कारण अजैसी उसे त्याग कर चले। राह में उनके पुत्र हो गया जिसका नाम रामदे रखा गया। इन्होंने (रामदे) वाल्यकाल

से ही अपने चमत्कार दिखाने प्रारम्भ किये। सात वर्ष की अवस्था मे एक छडी की सहायता से ही इन्होंने उस भैरव को परास्त कर दिया।

कुछ बाते युद्ध की जीवित झांकियां बन पाई हैं। "चौहान सातल सोम री वात" मे समीयाण गढ के शासक सातल एव सोम का अलाउद्दीन से, "राव मण्डलीक री वात" मे गिरनार के राव मण्डलीक का गुजरात के बादशाह महमूद से, "मारवाड़ री वात महाराजा रामसिंघ जी री" में जोधपुर के महाराजा रामसिह जी के जीवन काल मे हुये युद्धो के चित्र हैं। "जैसे-सरवहिये री वात" मे चारण के उकसाने पर अहमदाबाद के बादशाह का गिरनार के शासक जैसे-सरवहिये पर आक्रमण, सरवहिये की पराजय, "पाबूजी री वात" में पाबू जी द्वारा किये गये युद्धों का विवरण है।

युद्ध के चित्र इन कहानियों मे सजीव हुये है। उदाहरण के लिये "पाबूजी री वात" का एक उदाहरण देखिये-

अर पहलडी लड़ाई माहे चॉदे खीची नू तरवार बाही हती। तद पाबू जी तरवार आपड़ लीवी। कही मारौ मती। बाई राड हुसी, तद चॉदे कही राज आय तरवार आपडी सु बुरी कीवी। औ छोडै छै। मरिया भला। पण पाबूजी मारण दिया नही। तठै फौज आई। चॉदे कही राज, जो मरिया हुवौ होत तो पाप कटियो हुतो। हरामखोर आयो। तठै पाबूजी वुहा (बढ़े) ने लडाई कीवी। वड़ो रिठ वाजियो तसू पाबू जी काम आया।"

आ-प्रेम गाथात्मक अर्द्धैतिहासिक वातें

राजपूतों के युद्ध के साथ प्रेम और विवाह भी सलग्न है। दोनों मे कार्य कारण का सम्बन्ध है "वीर भोग्या वसुधरा" के सिद्धान्त को मानकर राजपूत चलते थे। वे विवाह के लिये सगुन नही मनाया करते थे[1]। वीर और शृगार के इस अद्भुत सयोग से जीवन मे एक प्रकार का उत्साह भरा रहता था। पद्य मे ऐसे कई उदाहरण मिलते है। गद्य मे भी ये

१—सगुन विचारै ब्राह्मण बनिया, सिरधरि मौर वियाहन जाहि
सगुन विचारै हम का खत्री, जो रण चढ़ करि लौह चवाहि।
(आल्हाखण्ड जगनिक)

कथानक उपयोगी सिद्ध हुए। इस प्रकार के प्रेमाख्यानों में "अचलदास खीची री वात", "जगमाल मालावत री वात", "कान्हड़दे री वात", "कांधल जी री वात", "जाड़ेचा फूल री वात", "हरदास ऊहड़ री वात", "कोड़मदे री वात", "चूड़ावत री वात" आदि प्रमुख हैं। उदाहरण के लिये अचलदास खीची री वात[1] देखिये।

अचलदास खीची री वात

"अचलदास खीची री वात" राजस्थानी की अच्छी कहानियों में से है। इसमें ४ प्रमुख पात्र हैं— १–गागरोण गढ़ के अधिपति अचलदास खीची, २–झीमी चारणी, ३–अचलदास खीची की प्रथम रानी मेवाड़ के मोकल की पुत्री लालां तथा ४–उनकी दूसरी रानी, जांगलू के खीवसी की पुत्री उमा सांकड़ी। वस्तुतः यह जांगलू और गागरोण के बीच लालां और उमा की कहानी है।

इसके कथानक में ऐतिहासिक, साहित्यिक एव अलौकिक तत्व मिलते है। ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि पर साहित्यिक चित्रण के लिये इसमे कल्पना का सहारा लिया गया है।

ऐतिहासिक-भूमिः—

अचलदास खीची (कोटा राज्य के अन्तर्गत गागरोण के नरेश) ऐतिहासिक व्यक्ति हैं। ये मेवाड़ के राजा मोकल के जामाता थे। इनका विवाह जांगलू के खीवसी की पुत्री से भी हुआ था। कहानी के अन्त में अचलदास पर मुसलमान बादशाह का आक्रमण, राजपूतों के द्वारा किये गये जौहर का आधार भी ऐतिहासिक ही है। इसी विषय पर "अचलदास खीची की वचनिका[2]" लिखी गई है।

साहित्यिक-भूमि :—

झीमी चारणी का इस कथा मे वही स्थान है जो जायसी के "पद्मावत" में हीरामन तोते का (उसके पारलौकिक संकेत को छोड़कर)।

....

१—"अचलदास खीची की वचनिका" से इसका कथानक भिन्न है।

२—अनूप-सस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर

राजा अचलदास खीची से वह जांगलू के खीवसी की पुत्री उमा साँखली के रूप का वर्णन करती है। इस रूप वर्णन को सुनकर राजा को उमा के प्रति पूर्वराग होता है। यह पूर्वानुराग उसको राजा रत्नसेन की भाति उच्छृ खल नहीं बना देता। राजा झीमी चारणी की सहायता से उमा साँखली से विवाह करने के लिये प्रस्तुत हो जाता है। झीमी चारणी ने उमा का रूप वर्णन बडे ही स्वाभाविक ढग से किया है :—

"उमां साषुली मारवणी रो अवतार। आसमान सू ऊतरी जाणे इन्द्र री अपछरा। सरोवर रो हस। सारद को कमल। वसत की मजरी। भादवा की बादली। बादलां की बीज मेह को ममौलो। बावनो चदन। सोलमो सोनो। रायकेल को ग्रभ। हस को बचो। लछमी को अवतारु। प्रभता कौ सूर। पूनम कौ चांद। सरद की चांदणी की क्रिया। सनेह की लहर। गुण को प्रवाह। रूप को निधान। गुणवत की मूल। जोवन को खेखणो। चौसठ कला री जाण ।"

उमा के इस सौन्दर्य के प्रति राजा आकर्पित होता है। अतुल धन-राशि देकर वह झीमी चारणी को विदा करता है। झीमी चारणी जांगलू पहुचकर विवाह सबन्ध निश्चित करती है। इस विवाह की स्वीकृति के लिये अचलदास अपनी पहली रानी लाला मेवाड़ी के महलों मे जाता है। रानी वचन लेती है। उसकी केवल एक शर्त है कि विवाह के उपरान्त उसकी अनुमति के विना राजा उमा के महलों मे न जाय। अचलदास इसे स्वीकार कर लेते है।

विवाह होता है, किन्तु विवाह के उपरान्त राजा गागरौण नही लौटता। लाला को चिन्ता होती है। वह पत्र-वाहक के साथ सदेश भेजती है कि यदि राजा नहीं लौटेंगे तो वह जल जायगी। वह रूप-गर्विता है, प्रणय-गर्विता है और वचन-गर्विता है। पत्र राजा तक नही पहुच पाता। उमा उसे बीच मे ही चीर कर फेक देती है। लालां जलने को प्रस्तुत होती हैं। मन्त्री उसे रोकते हैं तथा स्वय राजा को लिवाने के लिये जांगलू प्रस्थान करते है। वहां पहुचकर वे राजा को बतलाते है कि उनकी अनुपस्थिति मे किस प्रकार राज्य-व्यवस्था शिथिल हुई जा रही है। मन्त्री के आग्रह से राजा लौटता है।

गागरोण पहुचकर राजा अपने वचन का पालन करता है। सात वर्ष तक वह उमा के महलो मे नही जाता। उमा को चिन्ता होती है। वस्तु जगत के वात-प्रतिघात से हटकर वह धार्मिक क्षेत्र की ओर झुकती है। एक

दिन उसे स्वप्न होता है, जिसमें एक देवी आकर उसे गायत्री का व्रत करने का आदेश देती है। उमा उस आदेश का यथावत् पालन करती है।

अन्त में सातवें वर्ष में उस व्रत की सफलता निकट आती है। गायत्री देवी स्वय प्रकट होकर उमा को हार का उपहार देती है। यह हार ही राजा को उसके महलों में इस प्रकार लाता है—

उमा उस दिव्य हार को पहन कर बैठी है। लालां की एक दासी उमा के इस हार को देख लेती है। वह लालां से उसकी चर्चा करती है। लालां केवल देखने के लिए उस हार को मगवाती है। उमा इस शर्त पर हार देने को तैयार हो जाती है कि लालां एक दिन के लिये राजा को उसके महलों में भेजे। लाला स्वीकार कर लेती है। उसे हार मिल जाता है। हार पहनकर लालां अचलदास के सम्मुख आती है। राजा उस हार के विषय में पूछते हैं। रानी झूठा उत्तर देती है कि यह हार उसे मन्त्री से प्राप्त हुआ है। लालां अचलदास को एक प्रतिज्ञा पर उमा के महलों में जाने की अनुमति देती है कि राजा वहां जाकर वस्त्र नही उतारे, कटारी नहीं खोले और उमा की ओर पीठ करके पौढ़े। उमा के यहां पहुंचकर राजा को हार की कथा ज्ञात होती है। वे लालां के प्रति उदासीन हो जाते हैं और लाला भी आजीवन उनसे नहीं बोलती।

अन्त में राजा युद्ध में मारा जाता है। उमा और लालां दोनों सती हो जाती हैं।

इस प्रकार इस कथानक मे अचलदास, लालां और उमा के चरित्र-चित्रण के अच्छे असवर आये है। अचलदास इस कथा का आदर्श नायक है। राजाओं मे बहु-विवाह की परम्परा तो प्राचीन है ही फिर भी वह अपने दूसरे विवाह की अनुमति लालां से लेता है। जांगलू से लौटने पर वह अपनी प्रतिज्ञा का पालन करता है। वह सौन्दर्य का उपासक है किन्तु साथ ही रणक्षेत्र मे तलवार चलाना भी जानता है। वह जौहर कर सकता है और करता भी है। सक्षेप मे अचलदास सौन्दर्योपासक, प्रतिज्ञा-पालक एव आदर्श राजपूत है।

लाला और उमा का सम्बन्ध सौत का है। नारी सुलभ सौतिया डाह दोनों मे है। सतीत्व की रक्षा दोनों ने की है। अचलदास के शव के साथ दोनों सती होती है। आभूषण प्रेम लालां मे अधिक है। उपासना की निष्ठा उमा मे।

झीमी चारणी भी इस कथा का महत्वपूर्ण पात्र है किन्तु उसका चरित्र चित्रण ठीक नहीं हो पाया। इस कथा मे अनावश्यक विस्तार नहीं मिलता।

इस कहानी की भाषा प्रौढ़ एव परिमार्जित राजस्थानी-भाषा है। वर्णन के शब्द चित्र इसमे बहुत ही सुन्दर बन पाये हैं। गोधूली की लग्न मे अचलदास एव उमा का विवाह होता है। राजा मण्डप के नीचे बैठे हैं इसका एक चित्र देखिये—

"गोधूलि रो लग्न छै। अचलदास जी आई नै चु री माहे बैठा छै। उमा सांखुली सिणगारि नै सखियां ल्यायां छै। गीत गाइजै छै। हथलेवो जौडियो। ब्राह्मण वेद भणे छै। पला बाधा छै। अचलदास परणीया छै। ब्राह्मण नु घणो दीयो छै। परणीज ने महल माहैं पधारिया छै। "

छोटे छोटे वाक्यों में यह चित्र उत्तम बन पाया है। इसी प्रकार की भाषा सम्पूर्ण कहानी मे व्यवहृत हुई है।

ख—अनैतिहासिक या काल्पनिक बातें

इस प्रकार की कथाये राजस्थानी मे बहुत मिलती हैं। इनकी कुछ विशेषताये इस प्रकार हैं —

१—इनके पात्र या घटनाये सभी काल्पनिक होते है। कभी कभी ऐतिहासिक व्यक्तियो के नामों का प्रयोग भी कर लिया जाता है। जैसे राजा भोज, विक्रमादित्य, भर्तृहरि, शालिवाहन आदि कई कहानियों के नायक हैं। ये नाम प्रायः भारत की सभी लोक-कथाओं में आते हैं।

२—अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये कहानीकार लौकिक एव लोकोत्तर सभी प्रकार की सामग्री का उपयोग करता है। इन कहानियों मे आये हुए कुछ तत्व इस प्रकार है:—भूत, वैताल, पिशाच, भैरव, ककाली, जोगणी (योगिनी), साधु, तन्त्र-मन्त्र, सिद्ध, पीर, उड़न खटोला, काशी-करवत लेना, पाषाण से प्राणी हो जाना, प्राणी का पाषाण प्रतिमा हो जाना, शीश दान देकर जीवित होना, उड़ने वाली खड़ाऊ, उड़ने वाली छड़ी, किसी का जीव किसी में रहना आदि।

३—यह वातें मानव-लोक तक ही सीमित नहीं होती. यहां पशु पक्षी भी मनुष्य की भाषा बोलते हैं। मनुष्य के साथी होते है। सुख दु:ख सभी अवसरों पर उसकी सहायता करते है। इस प्रकार चेतन ही नही अचेतन-

जड़-जगत भी उसी प्राण-वायु से स्पन्दित होता दिखाई देता है।

वर्गीकरण–

इन कथाओं का वर्गीकरण कई प्रकारों में किया जा सकता है। सुविधा के लिये कुछ विभाग इस प्रकार हैं —

क–प्रेम की कथायें–

इन कथाओं में प्रेमी और प्रेमिकाओं के संयोग और वियोग के चित्र होते हैं। प्रेम बालकपन का प्राण, यौवन का सहचर और वृद्धावस्था का सहारा होता है। इसीलिये मनुष्य के लिये वह अत्यन्त आवश्यक है। यौवन में उसका रूप अधिक आकर्षक एव उन्मादक हो जाता है, उसके अनेक व्यापार तथा अवस्थाये है। शिशु-स्नेह तथा वृद्धानुराग की कथाये भी राजस्थानी में मिलती हैं किन्तु यौवन-प्रणय के तो असख्य चित्र हैं। इस भौतिक लोक की सीमाओं को छोड़ कर उस लोक तक भी इसकी जड़ें पहुँची हैं। यह प्रेम जन्म-जन्मान्तरों का बन्धन है। इस प्रकार की कुछ प्रणय कथाओं का उल्लेख यहां किया जाता है।

"रतना-हमीर री वात"

यह एक शृंगारिक रचना है। लेखक ने प्रारम्भ में ही इसका स्पष्टीकरण कर दिया है—

> कुसुम तणा सर पांच कर, जग जिण लीनों जीत।
> तिण रो सुमिरण करतवां, रस ग्रन्था री रीत॥

यह कथा चम्पू शैली में लिखी हुई है। इसके महत्वपूर्ण स्थल इस प्रकार हैं:—

१—रत्ना, चन्द्रगढ़ की राजकुमारी, उसका विवाह चित्रगढ के नरेश इन्द्रभाण फूलाणी के पुत्र लक्ष्मीचन्द के साथ होना। विवाह के समय रत्ना और उसकी भाभी का सवाद।

२—रत्ना विवाह से असन्तुष्ट।

३—ससुराल में रत्ना के द्वारा सूरजगढ के राव दलपति के पुत्र हमीर का चित्र देखा जाना, तथा उसका उसके रूप पर मोहित हो जाना।

४—चित्रगढ़ की राजकुमारी चित्रलेखा का सम्बन्ध हमीर से होना।

५—हमीर का बरात लेकर चित्रलेखा की ओर प्रस्थान। इधर रत्ना का अपने पितृ-गृह को लौटना। मार्ग में दोनों का चपा बाग मे ठहरना। शिव मन्दिर में दोनों का साक्षात्कार होना। दोनों का एक दूसरे पर आसक्त होना। रत्ना द्वारा विविध शृंगारिक चेष्टाओं द्वारा उसे आकर्षित करना।

६—हमीर द्वारा रत्ना को पत्र लिखा जाना तथा रत्ना द्वारा उसका उत्तर दिया जाना।

७—हरियाली तीज पर दोनों का मिलने का निश्चय करना। रत्ना द्वारा मिलने के उपाय बतलाया जाना।

८—मिलने की निश्चित वेला मे हमीर द्वारा आखेट के मिस सूरजगढ से चलकर चन्द्रगढ पहुचना।

९—रत्ना की प्रतीक्षा। घोर वर्षा। हमीर का चन्द्रगढ पहुचकर फूल बाग में ठहरना।

१०—चतरू द्वारा रत्ना को हमीर के आगमन की सूचना मिलना।

११—निश्चित समय में दोनों का फूल बाग में साक्षात्कार आदि।

इस प्रकार यह कथा सयोग शृंगार का उदाहरण है। इसका गद्य भी कलात्मक है जैसे रत्ना का स्वरूप वर्णन देखिये—

"सरूप रै भार भरियो नाजक अ ग। जिण आगे कांमइ के सर में कचन रो रग। नालेर जिसा सीस उपर केसां रो भार तिकै जाणे तम रा ही ज वार। तिणरा मुख री ओपमा तो पूरण चद्रमा ही न पावै। कहां कठा ताई दीठा ही ज बण आवै। नैण जी के अमृतरा ही ज नैण। वेण जिको कोयल री ही ज वैण। धनष ज्यूं ही मुहा री खच। नासिका जिका सुवा री चुच। अधर प्रवाली जिसा वणियां। दात जाणे हीरा री कणियां। बाह तो चपा री डाल। हाथ पग जिकै कमल सू ही सुकुमाल। जिका हालीती लजावै हस री गति ने। जिण रो रूप गुणा री ओपमां रभा अर रत ने और ही इण नू दूयां ओपमा किसड़ी ....."

वियोग श्रृंगार का उदाहरण "सयणी चारणी[1] री वात" देखी जा सकती है। सयणी चारणी कच्छ के वेकरे ग्राम के निवासी वेदा की पुत्री है। बीजाणंद चारण उसका प्रेमी है। प्रेमी अपनी प्रेमिका को प्राप्त करना चाहता है। प्रेमिका सवा सवा करोड़ के सात गहने पाने के उपलक्ष में विवाह के लिये प्रस्तुत होती है। इस इच्छा की पूर्ति करने के लिये प्रेमी दूर देश चला जाता है। प्रेमिका बड़ी उत्कंठा से उसकी प्रतीक्षा करती है। अवधि समाप्त हो जाती है पर प्रेमी लौटकर नहीं आता। प्रेमिका की विरहातुरता बढती है। उसका हृदय काव्य के रूप में फूट पड़ता है। निराश होकर अन्त में वह हिमालय में गल जाने के लिये चली जाती है। कुछ समय उपरान्त उत्सुकता एवं प्रसन्नता से भरा हुआ उसका प्रेमी अपने कार्य में सफल होकर लौटता है। पर अपनी प्रेमिका को वहां न पाकर वह भी हिमालय की ओर प्रस्थान करता है। इस प्रकार इस कहानी का अन्त बहुत ही करुणाजनक है।

"बीझै सोरठ री वात", "दिनमान रै फल री वात", "रावल लखन-सेन री वात", "देवरे नामक दैरी वात", "जोगराज चारण री वात" "सोहणीरी वात", "बीजड़ बीजोगण री वात", "ढोला मारू री वात", "जलाल गहाणी री वात" (मुस्लिम प्रेम) आदि वाते इसी प्रकार की प्रेम गाथाये हैं।

ख—स्त्री चातुर्य की कथायें

कुछ कहानियां ऐसी मिलती हैं जिनमें स्त्री के चातुर्य को प्रदर्शित करने का प्रयास हुआ है। इन कहानियो में विभिन्न परिस्थितियां में डाल-कर स्त्री के चरित्र को ऊंचा उठाया गया है। जैसे "विणजारा वणजारिन री वात"[2] में स्त्री ने पुरुष को सुधारा है। अपने पति के कहने पर पत्नी अपनी चतुरता का परिचय देती है। वह अपना प्रयोग एक फूहड़ लकड़हारे पर करके उसे सभ्य पुरुष बना देती है। यही स्त्री की विजय है। "साहूकार री वात[3]" में भी वह इसी प्रकार अपने को चतुर सिद्ध करती है। वाणिज्य के लिये १२ वर्ष तक बाहर जाने वाला पति (साहूकार) अपनी

....

१—राजस्थान भारती भाग १, अंक २–३ पृ० ८१-९२

२—राजस्थान भारती, भाग १, अंक १, पृ० ८१,-८३

३—राजस्थानी : भाग ३, अंक ३, पृ० ७४।

पत्नी से ३ इच्छाये प्रकट करता है १–पतिव्रत-धर्म की रक्षा करते हुए पुत्र उत्पन्न करना २–सुन्दर भवन बनाना ३–अश्व मगवाकर उनके लिये अश्व-शाला का निर्माण करवाना। इनमे प्रथम कार्य अधिक कठिन है किन्तु पत्नी अपनी चतुराई से ग्वालिन का वेश धारण कर विदेश मे उसी साहूकार के पास पहुचती है। वह उसे पहचान नहीं पाता तथा अपने चरित्र से गिर जाता है। इस प्रकार उस कठिन कार्य में भी वह सफल होती है। ठीक इसी प्रकार की कहानी बुन्देल खन्ड में वीर विक्रमादित्य की कहानी के नाम से प्रसिद्ध है। जिसमें साहूकार के स्थान पर विक्रमादित्य के नाम का प्रयोग किया गया है।

"फोफाणद री वात[1]" तथा "राजा भोज, माघ पिडत तथा डौकरी री वात" भी इसी प्रकार की वाते है। प्रथम कहानी मे महेवची चारणी और फोफानन्द को वार्ता है। पुरुष मांगकर अपने असामर्थ्य को प्रदर्शित करता है किन्तु स्त्री उसे इस कार्य के लिये भर्त्सना देती है तथा अपने सामर्थ्य से अपने वैभव के उपकरण जुटाती है। दूसरी कथा मे राजा भोज और माघ नामक पडित डोकरी (बुढिया) से चतुराई मे पार नहीं पाते।

इनके अतिरिक्त अधिकांश कहानियाँ ऐसी है जिनमे नारी के चरित्र-चित्रण मे सूक्ष्म-दृष्टि से काम लिया गया है।

ग–साहसिक एवं पराक्रम सम्बन्धी कथायें–

इस प्रकार की कहानियो मे साहस, पराक्रम आदि को अधिक स्थान मिला है। साहसिक रचनाओं मे "खीवै वीजै री वात"[2] एव "राजा भोज अर खापरा चोर री वात"[3] देखी जा सकती है। "खीवै वीजै री वात" सयोग एव दैव घटना प्रधान है। खीवा और वीजा दोनो प्रसिद्ध डाकू है। एक नाडौल रहता है और एक सोझित। दोनों ने एक दूसरे के विषय में सुन रखा था किन्तु एक दूसरे को देखा नही था, दोनों का मिलन बडे ही आकस्मिक रूप से होता है। बीजा एक दिन खीवै के घर सैध लगाता है। दीवार मे छेद करने की आहट से खीवा जग जाता है। वह टगी हुई तलवार उतारकर सावधान होता है। तलवार उतारने से एक मक्खी उड़ती

१—राजस्थानी भाग ३, अ क ४,
२—अनूप-सस्कृत-पुस्तकालय बीकानेर मे विद्यमान
३—वही

है। बीजा समझ लेता है कि भीतर जागरण हो चुका है। अतः वह भी जागरूक हो जाता है। छेद पूरा होने पर वह एक काली हंडिया को लकड़ी में लटका कर छेद में डालता है। खीवा उस पर तलवार से प्रहार करता है। हंडिया टूट जाती है। खीवा भीतर से हंसता है बीजा बाहर से। दोनों का परिचय होता है। इसके उपरान्त दोनों सम्मिलित डाके डालते हैं जिनमें १–चित्तौड़ से जय विजय नाम घोड़िया चुराना एव २–पाटण के खतयुगी मन्दिर से स्वर्ण कलश उतारना मुख्य हैं। इन दोनों में उन्हें सफलता मिलती है।

इस कथा में चोरी की क्रिया के स्वाभाविक चित्र मिलते हैं। बीजा चित्तौड़ से जय-विजय घोड़ियां लेने जाता है, सात तालों में यह घोड़ियां रखी जाती हैं। पहरेदार अपने सिर के नीचे तालियां रख कर सोता है। किन्तु बीजा अपने कार्य में असफल नहीं होता।

"अमावस री राति रौ आइ नै वीजौ लागौ घड़ीयालै री घड़ी बाजै तरी खूटी ५–६ मारै। वलै घड़ी बाजै तरै खूंटी मारै। इयुं करतां छए पडकोटा लोपि ने पडवा दोलो आइ फिरियौ। आइ फिरि नै पड़वै ऊचो चढ़ीयो। पड़वै चढ़ि ने एकै वाती विचला कोल्हू उतारिया।

पसवाडे धरती मूकीया मूकि नै वेहूँ वाति पकड़ि नै माहि लै पासी धस सु उतरियौ। उतरि नै दीयौ बुझाय दीयो। दिवो बुझाइ ने माचा रा पागा हाथ उपरा उठाइ पारवती कीया। पारवती करि नै सिरहांणै हूं हवलै हवलै कूची लीधी, कूंची लै नै साते दरवाजा खोलीया। खौलि नै जय रै लगाम देर काढ़ी।'

इसी प्रकार खीवै के घर चोरी करते जाते हुए बीजै का एक स्वाभाविक चित्र इस प्रकार है—

"आधा भादवा री आधी रात गई छै। ताहरां काला कांवल री गाती मारि, टोपी माथे मेल्हि जांघीयो पहिरि छुरी काढ़ि कटि वाध अर सहर माहे चोरी नूं चालीयौ।"

"राजा भोज अर खाफरा चोर री वात" मे धारा नगरी को राजा भोज चौदह विद्याओं का जानने वाला है। खाफरा नामक चोर उसके यहां नौकर है। वह नगर मे चोरी करता है और उसकी चोरी पकड़ी नहीं जाती। राजा नगर मे ढिंढोरा पिटवाता है कि यदि चोर उसके पास चला आवे तो राजा

उसके सब अपराधों को क्षमा कर देगा। खाफरा उसके पास जाता है। राजा उसे अपनी प्रतिज्ञानुसार क्षमा कर कुछ जागीर दे देता है। एक दिन राजा उस चोर से चोरी की कला सीखने की इच्छा प्रकट करता है। दोनों शरीर में तेल लगा तथा आवश्यक उपकरण लेकर नगर में प्रविष्ट होते हैं। एक साहूकार के घर में उन्होंने चोरी की। प्रातःकाल जब सेठ को इस चोरी का पता चलता है तब राजा भोज के पास वह इसकी सूचना पहुचाता है। राजा उसकी सम्पूर्ण खोई हुई पूजी के उपलक्ष में धन देता है। इसके उपरान्त खाफरे की कुछ चालें—उसका मर जाने का बहाना करना, पुनर्जीवित हो जाना, तथा अन्य कई घटनायें साहसिकता के अच्छे उदाहरण हैं।

इनके अतिरिक्त "दीपालदे री वात[1]" "दूदे जोधावत री वात[2]" "सातल सोम री वात[3]" भी इसी प्रकार की कहानियां हैं।

दीपालदे री वात पुरुषार्थ, दान, और परोपकार की कहानी है :—

१—अमरकोट के राजा दीपालदे का जैसलमेर की भूमि में अपनी पत्नी को ले आना।

२—मार्ग में एक चारण को हल जोतते हुए देखना।

३—चारण द्वारा हल में एक ओर बैल तथा दूसरी ओर अपनी पत्नी को जोतना।

४—यह देखकर चारणी के स्थान पर दीपालदे का जुत जाना तथा चारणी को भेजकर अपने रथ के बैल मंगवाना।

५—बैलों के आने पर खेती करना। उपरान्त अच्छी उपज होना।

६—जिस स्थान पर राजा जुता था उस स्थान पर मोती पैदा होना।

दूदै जोधावत री वात में वैर प्रतिशोध की भावना है। जोधा का पुत्र दूदा नरसिंहदास के पुत्र मेघा को मारकर अपने पुराने वैर का बदला

१—राजस्थानी भाग ३, अंक २, पृ० ७३
२—वही पृ० ७५
३—राजस्थान भारती : भाग २, अंक २, पृ० ६०

लेता है। दोनों जब युद्ध भूमि में अपनी सेनाये लेकर पहुचते हैं तो दूदा मेघा को द्वन्द युद्ध के लिये ललकारता है। मेघा उसे स्वीकार कर लेता है तथा द्वन्द युद्ध में दूदा के हाथ से मारा जाता है।

"सातल सोम री वात" वीरता की कहानी है। कुंभटगढ़ नरेश चौहान सातलसोम देहली के सुलतान अलाउद्दीन की सेवा में रहते हैं। नित्य दरबार में अलाउद्दीन गर्वोक्ति करता है कि ऐसा कौन वीर है जो उससे लोहा ले सके। एक दिन सातलसोम से यह नही सहा गया और उन्होंने अलाउद्दीन से लोहा लेने का निश्चय किया। दोनों में युद्ध होता है। १२ वर्ष तक भी अलाउद्दीन गढ को नही जीत पाता है। अन्त में गढ़ का द्वार खुलता है तथा सातलसोम युद्ध में काम आते हैं।

इस प्रकार की और भी कई कहानियां हैं जिनमें पराक्रम सम्बन्धी विवरण मिलता है।

घ—भोज और विक्रमादित्य सम्बन्धी कथायें—

राजा भोज विक्रमादित्य, शालिवाहन, गन्धर्वसेन, भर्तृहरि आदि इतिहास प्रसिद्ध व्यक्तियों के नामों का प्रयोग कथाओं में हुआ है। लोक-कथा साहित्य में विक्रमादित्य का नाम बहुत प्रसिद्ध है[1]। इनमे से कुछ कथाये लिपिबद्ध भी की गई हैं। "राजा वीर विक्रमादित्य अर नक्षत्र जातीक री" वात आदि में विक्रमादित्य के नाम से कई घटनाओं का सम्बन्ध जोड़ा गया है। राजा भोज भी कई कहानियों के नायक हैं। वे कहीं खापरा चोर, आगिया बैताल, कवड़िया जुआरी, माडिकदे सदवाण के मित्र बनते हैं और कहीं राक्षसी के पास स्वर्ण-मक्षिका।

"राजा भोज माघ पिडत अर डोकरी री वात", "चौबोली", "राजा भोज खापड़ा चोर", "राजा भोज री पनरवी विद्या", "त्रिया चरित्र" "राजा भोज री चार वातां", "भोज री वात", "जसमा ओड़णीरी वात" आदि मे भोज के नाम आये हैं। "पिगला री वात" तथा "गन्धर्वसेन री वात[2]" में पिगला और गन्धर्वसेन के नामों के साथ अनैतिहासिक कथाये जोड़ी गई है।

१—शान्तिचन्द द्विवेदी : विक्रम स्मृति-ग्रंथ, पृ० १११
२—यह सब बाते अनूप सस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर मे विद्यमान हैं।

च–अद्‌भुत-कथायें–

राजस्थानी कहानियों की यह विशेपता है कि उनमे आप्सरिक एवं वैतालिक तत्व तो कही न कही घुस ही आते हैं। कहानी की विलक्षणता, मोहकता एवं आकर्षण शक्ति को बढ़ाने के लिये इनका प्रयोग होता है।

"राजा मानधाता री वात" में अप्सरा लोक का चित्रण हुआ है। अजयपाल की जादू की लकड़ी मानधाता को सात समुद्र पार ले जाती है। वहा मानधाता को ६ धूनियों के सम्मुख चार योगी दिखाई देते हैं। योगी उसे खड़ाऊं देते हैं। उनको पहिनते ही मानधाता अप्सरालोक मे जा पहुंचता है। ये अप्सराये इन्द्रलोक की है। उनमें से एक उसको वरमाला पहिनाती है—

"देखै तो आगे राजा मानधाता सूता छै। अपछरायां कह्यौ भाणेज मामा मेल्हीयो, कह्यौ जी मामा मेल्हीयो। ताहरा एकै अपछरा भाणेज रै वरमाला घाली छै। सु अपछरां सु सुख भौगवै छै। यु करतां मास ६ हूवा। छठै महीने कोठार री कूच्यां लाया छै। अपछरायां कह्यौ ये चार कोठार मता खोल ज्यो। यु कहि अपछरायां इन्द्र रै मुजरै गयां छै।"

मानधाता प्रति छै मास मे एक एक कमरा खोलता है। क्रमशः प्रत्येक कमरे में उसे गरुड़पख, मोर, अश्व एव गधा मिलता है। गरुड़पख उसे इन्द्र के अखाडे मे ले जाता है। मोर उसे सारे नागलोक में घुमाता है। अश्व उसे मृत्युलोक एवं यमपुरी की प्रदक्षिणा करवाता है। गधा उसे पीछा ही उसके मामा अजयपाल के पास अजमेर पहुंचा देता है।

"वीरम दे सोनगरा" की कथा मे पापाण की प्रतिमा का एकाएक अप्सरा हो जाना ध्यान आकर्पित करता है .—

"देहरै में पाखाण री पूतली। सो घणी रूड़ी फूटरी। कान्हड़दे जी उणरै रूप दिसी घणो गौर करि जोवण लागा। तिण समै कोई दैव रै जोग उवा पूतली थी तिका अपछरा हुई। तरै रावजी कह्यो, थे कुण छो। तरै उवा वोली अपछरा छूं। मै थाने वरिया छै। पिण म्हारी आ वात किणी आगै कही तो परी जासूं।"

इस प्रकार कन्हड़दे की रानी के रूप में वह रहती है। वीरम दे उसका पुत्र है। एक दिन की वात है कि वीरमदे को कोई मस्त हाथी उठाने

ही वाला होता है। गवाक्ष में बैठी हुई रानी उसे देखती है। वहीं से वह अपने हाथ फैलाकर अपने पुत्र को उठा लेती है। इस प्रकार अलौकिक व्यापार देखकर उसके अप्सरा होने की बात प्रकट होती है, फलस्वरूप अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार वह वहीं अन्तर्ध्यान हो जाती है।

"पाबू जी री वात" में भी, इसी प्रकार, धांधल जी किसी अप्सरा से विवाह करते हैं। इस अप्सरा से सोना नाम की लड़की और पाबू नाम का लड़का उत्पन्न होता है।

"जयमाल मालावत" की कहानी में वैतालों की सहायता से जगमाल अहमदाबाद के बादशाह मुहम्मद बेग को परास्त करता है। पाटण से १२ योजन दूर सोभटा नामक नगर का अधिपति तेजसी तुंवर मुसलमानों के हाथ से अपने तीन सौ साथियों के साथ मारा जाता है। म्लेच्छों के हाथ से मारे जाने के कारण ये सभी राजपूत प्रेत योनि में पड़ते हैं। जगमाल मालावत तेजसी तुंवर को प्रेत योनि से मुक्त कराता है। तेजसी तुंवर प्रसन्न होकर अपने साथी तीन सौ प्रेतों को जगमाल की सहायता करने का आदेश देता है। ये वैताल जगमाल मालावत की सहायता करते हैं।

ककाली, भैरव एव जोगनियों आदि का वृत्तांत "जगदेव पंवार री वात" में आता है। जगदेव पवार अपने आश्रयदाता सिद्धराज (नरेश) की रक्षा भैरव और जोगनियों से करता है। जब अर्द्ध रात्रि के समय राजा सिद्धराज जोगनियों का हंसना और रोना सुनता है और उसका कारण जानना चाहता है तब जगदेव पवार ही उसका पता लगाकर सूचना देता है कि यह पाटन और दिल्ली की जोगनियां हैं :—

तरै उवै बोली, पाटण री जोगणियां छा। तिको प्रभात सवा पोर दिन चढ़तै सिधराज जै सिह री मृत्यु छै। तिण सूं रुदन करा छां। .. . तरै कह्यो म्हें दिल्ली री जोगणियां छां जिके राजा जै सिह ने लेण ने आई छां। तिण सूं बधावा गीत गावा छां।

जगदेव ने जिस भैरव से राजा की रक्षा की थी उसका स्वरूप इस प्रकार चित्रित हुआ है :—

"राजा पौढ़िया था। नै कालो भैरूं लूंगी रो लगोट पहरियां केस

तेल माहे गरक कीयां, सिंदूर लागो गुरज[1] हाथ माहें लीधां, चोखा ऐराक[2] माहें मैमंत हुवो थको सिघराव छै तिठे जाय नै हाथ पकड़ नीचे नाखि पगॉ नीचे दे नै जाड़े जी कने भेरू पौढ़ रहयो।"

इसी कथा में वर्णित कंकाली का स्वरूप भी देखिये :—

"तिका काली डीगी[3] मोटा दांत, दूबली, घणी डरावणी, माथारा लटा बिखरिया, घणां तेल माहें चवती, धवला केस माथे, निलाड़ सिंदूर थेथड़ियो थको, लोवड़ी[4] काली, कालो घावेला[5], कांचली तेल माहे गरकाब थकी, उघाडै माथे कीधां, हाथ माहे त्रिसूल झालियां दरबार आई।"

यह ककाली जगदेव पवार की दान-प्रतिष्ठा को बढ़ाने के लिये दरबार में आती है। सिद्धराज से वह दान की याचना करती है। सिद्धराज उत्तर देते हैं कि जितना जगदेव देगा उससे चौगना वह दान करेगा किन्तु जब जगदेव अपना सिर उतार कर ककाली को अर्पण करता है तब सिद्धराज अपनी असमर्थता पर लज्जित होता है। ककाली प्रसन्न होकर जगदेव को पुनर्जीवित कर देती है।

राक्षस का स्वरूप "चौबोली" एवं "सूरां अर सतवादियां" की कथा में दिखाई देता है। "चौबोली" में राजा भोज किसी राक्षसी की जटा में स्वर्ण मक्षिका बन कर रहता है। "सूरां अर सतवादिया" में फूलमती राक्षस की नगरी में निवास करती है जिसने सारे नगर को जन-रहित कर दिया था। राजा वीरमाण उस राक्षस को मार डालता है।

आप्सरिक एव वैतालिक तत्व राजस्थानी कहानियों में कहीं न कहीं किसी न किसी रूप में मिल ही जाते हैं। इन कहानियों के लिये कुछ भी असम्भव नहीं।

राजस्थानी का सम्पूर्ण कथा साहित्य औत्सुक्य-वृत्ति का ही पोषक रहा है। इतिवृत्तात्मक-कथा-तत्व घटनाओं के वर्णनात्मक विस्तार पर

....

१—अस्त्र विशेष

२—मदिरा

३—लम्बी

४—ओढ़ने का वस्त्र

५—लहंगा

आधारित रहा। उसके कथानक में आश्चर्य, कुतूहल, जिज्ञासा आदि मानसिक मनोवृत्तियों को तुष्ट करने वाले तत्व ही प्रधान रूप से आये। लौकिक-अलौकिक, ऐतिहासिक अनैतिहासिक, झूठे-सच्चे, काल्पनिक-वास्तविक आदि व्यापारों के विचित्र संश्लिष्ट रूप-विधान इनमें पाये जाते हैं। इन कहानियों में पात्रों के चरित्र-चित्रण की ओर ध्यान बिल्कुल नहीं गया है। स्वाभाविक या मनोवैज्ञानिक आधार पर बहुत कम पात्र खड़े हुए दिखाये पड़ते हैं। कथानक के तार-तम्य एवं प्रवाह की रक्षा करने के लिये पात्रों को कठपुतली बनना पड़ा है। आसुरी, दैवी या मानवी वृत्तियों में लिपटे हुये पात्र भाग्य या अप्रत्याशित परिणामों की शरण में छोड़ दिये गये हैं। उनमें जीवन का स्पन्दन नहीं दिखलाई पड़ता। देश और काल का ध्यान भी इन कथाओं में बहुत कम रखा गया है। अर्द्धैतिहासिक बातें यद्यपि इतिहास के स्थूल धरातल पर खड़ी की गई हैं तथापि उनमें कल्पना एवं ऊहात्मक तत्वों के उपयोग करने का अधिकार उपेक्षित नहीं किया गया है। देश और काल की स्थूल सीमाओं में दैवी या आकस्मिक घटनाओं का स्फुरण प्राण वायु से वंचित रह जाता है अतः नवीन कल्पनालोक के उन्मुक्त गगन में इन कथाओं को श्वास लेने की आवश्यकता हुई। मनोरंजन ही इन कथाओं का एक मात्र उद्देश्य रहा। इसीलिये सामाजिक, नैतिक आदर्श, यथार्थ आदि की ओर ध्यान जाना अस्वाभाविक था। प्रासंगिक या आकस्मिक रूप से जहां कहीं इनका निर्वाह हो पाया है वहाँ कहानी के सौष्ठव में कुछ कला के दर्शन भी होते हैं।

ख—वचनिका

इस काल में शिवदास चारण की "अचलदास खीची री वचनिका" के समान एक वचनिका मिलती है। इसका नाम "राठौड़ रतनसिंह जी महेशदासोत री वचनिका" है।

राठौड़ रतनसिंह जी महेसदासोत री वचनिका

इस वचनिका का लेखक जगमाल (कवि जग्गो) खिडिया जाति का चारण था। इसके पिता रतलाम नरेश श्री रतनसिंह के राज-कवि थे। उज्जैन की लड़ाई के पूर्व जगमाल जोधपुर महाराजा जसवंतसिंह के दरबार में था। वहीं इसके पूर्वजों की सांकड़ा जागीर थी, किन्तु जग्गा का जसवंतसिंह के दरबार में रहना संदिग्ध है।[1]

जगमाल का जीवन वृत्तान्त अज्ञात सा है। कहा जाता है कि, उज्जैन की लड़ाई में राजा रतनसिंह ने अपने पुत्र रामसिंह को जगमाल के सुपुर्द किया था। इसी लड़ाई का वृत्तान्त इस वचनिका में मिलता है। जगमाल युद्ध-भूमि मे प्रस्तुत था किन्तु उसको राजा रतनसिंह ने शस्त्र ग्रहण करने की आज्ञा नहीं दी थी। शिवदास चारण की भांति ही जगमाल ने अपने आश्रयदाता की वीरता का चित्रण किया है। इन दोनों वचनिकाओं मे निम्नांकित बातों का साम्य मिलता है :—

१—नायक का युद्ध मे जाना तथा अपनी वीरता दिखाते हुए वीर गति प्राप्त करना।

२—नायक अपने चारण को युद्ध के मैदान तक ले जाता है किन्तु उसे युद्ध मे भाग नहीं लेने देता। वह चाहता है कि उसका चारण अपनी रचना द्वारा उसे अमर करे।

१—टैसीटोरी : वचनिका राठौड़ रतनसिंह महेस दासोत री, भूमिका पृ० ५

३—चारण अपने आश्रयदाता नायक की वीरता का चित्रण कर उसे अमर करने का प्रयास करता है।

४—चारण को नायक अपने पुत्र के संरक्षण में छोड़ जाता है।

५—दोनों का आधार ऐतिहासिक घटना है।

ऐतिहासिक भूमि— सन् १६५८ में शाहजहां के दो पुत्र औरंगजेब और मुराद विद्रोही होकर आगरा की ओर चले। शाहजहां ने जोधपुर नरेश महाराजा जसवंतसिंह को सेना देकर उन्हें रोकने के लिये भेजा। सन् १६६० ई० के लगभग उज्जैन के समीप दोनों सेनाओं की मुठभेड़ हुई जिसमें महाराजा जसवंतसिंह परास्त हुये। महाराजा जसवंतसिंह के सरदारों में श्री रतनसिंह भी थे जो इस युद्ध में काम आये। ये ही इस वचनिका के नायक हैं।

इस वचनिका में गद्य-अंश बहुत ही कम है। प्रारम्भ में शिव और शक्ति का स्मरण है। इसके उपरान्त— क–रतनसिंह जी का वर्णन ख–औरंगजेब और मुराद का सेना लेकर आना ग–शाहजहां द्वारा महाराजा जसवंतसिंह को भेजा जाना, घ–दोनों सेनाओं में युद्ध, च–रतनसिंह की मृत्यु, छ–ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, महेश आदि का आना, ज–रतनसिंह का वैकुण्ठ पहुंचना, झ–रतनसिंह की रानियों एवं चार खवासों का सती होना आदि का विस्तार पूर्वक विवरण इस वचनिका में मिलता है।

भाषा और शैली की दृष्टि से यह वचनिका शिवदास चारण की वचनिका से समानता रखती है। भाषा परम्परा से मुक्त नहीं है। अनुप्रासान्त गद्य का एक उदाहरण यहां दिया जाता है।

"तिण वेला दातार भूंझार राजा रतन मूंछां धर हात बोले।
तरुआर तोलै।
आगे लका कुरखेत महाभारत हूआ,
देव दाणव लड़ि मूआ।
चारिजुग कथा रही।
वेद व्यास वालमीक कही।
सु तीसरो महाभारत आगम कहता उजेणि खेत,
अगनि सोर गाजसी।
पवन याजसी॥

गजबंध छत्रबंध गजराज गुड़सी ।
हिन्दु असुराइण लड़सी ॥
तिका तौ वात साकाबध आइ तिरै चढ़ी
दुइ राह पातिसाहां री फौजां अड़ी
दिली रा भर भारथ भुजे दिआ
कमधज मुद्रै किआ
वेद सासत्र वताया सु आसाण आया ।
उजेणि खेत धारा तीरथ धणी रौ काम खित्री रौ धरम चाचवी जै
लोहां रा बोह सेलां रा धमका लीजै
खाडां री खाट खड़ि झारझड़ि डण्डाहड़ि खेलीजै
पातसाहा री गजघड़ा झड़ां औझड़ां मारि ठेलीजै ।

ग-दवावेत

इस प्रकार की रचनायें राजस्थानी में कम मिलती हैं। जो प्राप्त हुई हैं उनमें किसी पर फारसी का प्रभाव है तो किसी पर हिन्दी का। सभी प्राप्त दवावैत अठारहवीं शताब्दी के उपरांत की रचनायें हैं। इससे पूर्व की दवावैत नहीं मिलतीं। इस काल की कुछ उल्लेखनीय दवावैत इस प्रकार हैं :—

१—नरसिंहदास की दवावैत[1]

इसका लेखनकाल अठारहवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध है। इसके लेखक का नाम भाट मालीदास मिलता है। इस पर हिन्दी का प्रभाव स्पष्ट झलकता है :—

गद्य का उदाहरण—

"जरबफत पाटता है। अंबर फटते है। सभा विराजती है। कीरत राजते हैं। घोड़े फिरते हैं। पायक अड़ते है। गुणीजण राग घटता है। वह वषत बणता है। सोभा बणती है। श्री दिवाण पधारते है। दुसमण को जारने है। देसों दूर डरते है। साहो काम सरते हैं। कवीसुर बोलते हैं। भरना बोलते हैं।

२—जिनसुखसागर जी की दवावैत[2]

यह जैन रचना है। श्री उपाध्याय रामविजय ने स० १७७२ में इसकी रचना की। इसका दूसरा नाम "मजलस" है।

. . . .

१—श्री अगरचन्द नाहटा : कल्पना, मार्च १९५३, पृ० २१०।
२—वही

गद्य का उदाहरण—

"दुस्मन दूर है सब दुनी में हुक्म मंजूर है। मगरूरां की मगरूरी दफै करते हैं, छत्रधारी की सी रौंस धरते हैं। बडे बड़े छत्रपती, पढ़पती देसोत डंडोत करते है, चिकारे मुकारे भुंज मरते हैं। (और) भी कैसे हैं – गुनु के गाहक हैं, गुनु के जान हैं, गुनु के कोट है, गुनु के जिहाज है। विजैजिन के राज हैं षट्दर्शन के महाराज है, सब दुनियां बीच जस नगारे की आवाज है।

३—जिनलाभ सूरि की दवावैत

यह उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ की रचना है। पाचक विनय भक्ति (वस्तपाल) ने इसे बनाया। यह जिन सुखसूरी की दवावैत से चौगुनी बड़ी है। गद्य के अतिरिक्त इसमे गीतों के प्रयोग भी किये गये है।

गद्य का उदाहरण—

"फिरि जिनु का जस का प्रकास, मनु हस का सा बिलास।
किधुं हरजू का हास, किधु सरद पुन्यु का सा उजास।
फिरि जिनु का रूप अति ही अनूप, मनु सबका रूपवंतुकारूप
जाकु देपन चाहे सुरन के भूप। कामदेव का सा अवतार,
किधुं देव का सा कुमार। तेज पुंज की झलक, मनु कोटिन
सूरज की झलक।"

अंतिम दोनों दवावैतों पर फारसी का प्रभाव है। इनकी रचना सिन्ध में हुई[1] अतः फारसी के शब्दों का आजाना अस्वाभाविक नहीं है।

४—दुरगादत्त की दवावैत[2]

ईसरदा ठिकाने के किसी जागीरदार से उचित इनाम न पाने पर दुर्गादास ने इस दवावैत की रचना की। उक्त सरदार की दुर्गादत्त ने अपनी

१—कल्पना मार्च १९५३, पृ० २१६

२—यह दवावैत मुझे आदरणीय डा० श्री मथुरालाल जी शर्मा, एम० ए० डी० लिट०, की अनुकम्पा से प्राप्त हुई है। इस लेख के द्वारा यह सब ने पहले प्रकाश में आ रही है।

इस दवावैत में भरसक निन्दा की है। इसके गद्य में अनोखा प्रवाह है पद्य-गत -"वयण सगाई" अलंकार की भांति इस दवावैत में वर्ण-मैत्री मिलती है। इस पर हिन्दी का बहुत अधिक प्रभाव दिखाई पड़ता है।

गद्य का उदाहरण—(१)

"जाय .. से दवा पढी। उस कोली आँखसे सामा जोया। एक तो जमी एक आसमान को चढी। हात से मान सनमान दिया। सिर तो जमीन से लगाय लिया। पुस्त से पूण हात मलद्वार ऊचा किया। जिस राम से वीर आसन बैठा न गया। पछाड़ी कूं दस्त टेक अगाड़ी कूं पाव पसार दिया। उस वगत . ऐसा नजर आया। मुंदी चिराक सा दीदार दिखाया। टोले से सिर पर पगड़ी के बंद। लकड़ी के खूटे पर मकड़ी के फद। सूना सा अबूना दूना सा कान। चकमक के कड़े के अरड़े के पान। मोली सी मूंभी पर कोली सी आंख। पोली सी भीतूं में खोली सी पांख। गाढा सा देखण मे बाडासा सहत। हंगाया पाडा कै साडा सा महत। घूले में भरियोड़ी पूले सी मूंछ जंबुक की जघा के गधे की पूंछ।

२—पूरब की तरफ .. बतू का देस। रोभ्रूं का रैवास। भांडू का भेस। जिस देस में दो नाम गांव। बेवकूवों का वास। धूरतूं का धास। मंगतूं का मोहल्ला। कगालूं का कोट। हीजड्डूं का सहर। जारूं का जेट। चुगलूं का चबूतरा। रुगलूं का रैवास। कुकरमूं का कोठार। अधमूं का ऐवास। भूख का भांडा। मालजादूं का मुकाम। अनीत का अखाड़ा। अदतूं का आराम। हराम का हटवाड़ा। हरामजादूं की हाट। खोट्टूं का खजाना। परेतूं का पाट। विपत का बगीचा बुराई का वास। काल का कुंडाला मरी का मेवास। आदि .....

घ—वर्णक-ग्रंथ

इस काल में कुछ ऐसे ग्रंथों की भी रचना हुई जिनमें वर्णन के प्रमुख स्थलों की रूप रेखाये दी हुई हैं। वर्णक ग्रथ इस प्रकार है :—

१—राजान राउत रो वात वणाव

यह एक वर्णन-विषयात्मक निबन्ध है इस लेख में बतलाया गया है कि राजाओं का वर्णन करते समय कौन कौन से प्रमुख स्थलों पर किस प्रकार प्रकाश डालना चाहिये। चार अध्यायों में यह पूर्ण हुआ है। प्रारम्भ में स्तुति है। ओंकार महादेव, उनका हिमाचल पर्वत और आबू के वर्णनोपरान्त राजराजेश्वर, पटरानी तथा राजकुंवर का विरद गाया है।

सूर्य वशी राजा, उनका वैभव, उनके सिहासन, छत्र, चवर, निशान आदि के विषय मे कह चुकने के उपरान्त प्रथम अध्याय का वर्णन-क्रम इस प्रकार चलता है :—

१—राजपथ—पांच कोट, वाग, वावड़ी, कुआं, सरवर, बड़ पीपल आदि।

२—गढ़कोट—परकोटे के कंगूरे - आकाश को निगल जाने के लिये मानों दात - उनकी ऊंचाई - समीपवर्ती खाई की गहराई। गढ़ के भीतर के कुआ, सरवर, धान, घृत, तेल, नमक, ईंधण, अमल आदि

३—नगर—देवालय - कथा कीर्तन, नाटक, धूप, दीप, आरती, केसरचंदन, अगर, झालर झनकार।
धर्मशाला, दानशाला, योगेश्वर - त्रिकुटी साधक एवं धूम्रपान करने वाले, दिगम्बर, श्वेताम्बर, निरजनी, कनफटे, जोगी, सन्यासी अवधूत फकीर। निवासी लखपति, करोडपति, सौदागर छत्तीस इतर जाति।

बाजार—सोना, रूपा, जवाहर, कपड़ा - रेशम, पटकूल, पसम शराफ बजाव जौहरी, दलाल, छैल नायिका (वेश्या) आदि।

४—राजकुमार के सम्बन्ध के लिये विभिन्न स्थानो से आये हुए नारियल

५—विवाह की तैयारियां (बरात गमन) हाथी, घोड़े बैल, रथ पैदल आदि कलस वधाना, आला नीला बांस, केलि-खंभ, चौरी, पाणिग्रहण संस्कार, मंगलाचार, छत्तीसविधि–१-तंत्री २-वीणा ३-किन्नरी ४-तबूरा ५–नीसाण ६-ढोल ७-दमामा, ८-भेरि ९-मूंगलि १०-नफेरी ११-सदन भेरि १२-झांझ १३-मंजीरा १४-मादल, १५-श्री मंडल १६-डफ १७-ऊंडक १८-रंगतंग १९-मुंहचंग २०-ताल २१-कंसाल २२-तंबूर २३-मुरली २४-रिणतूर २५-शखं, २६-ढोलक, २७-रायगिड़गिड़ी, २८ रवाज २९-रावण हतो ३०-पूंगी, ३१-अगलचौ, ३२ झालर, ३३-पिनाक, ३४-वरघू, ३५-सारगी, ३६-करनाल।

६–भोज—दो प्रकार के अन्न, अ-वायौ आ-अड़क। तीन प्रकार के मांस– अ-जलजीव, आ-थलजीव, इ-आकाश जीव। पांच प्रकार के साग– अ-तरकारी, आ-कन्दमूल, इ-डाल कोंपल, ई-पान-पत्र, उ-फलफूल गोरस–अ-दूध आ-दही, इ-अन्य प्रकार। मिठाई, नमक, तेल, हींग, वेसवार, चरकाई।

७–दहेज—हाथी, घोड़ा सुखासन, रथ, पायक, जवाहर, हीरा, मोती माणिक्य सोना रूपा, दास, दासी।

८—बरात लौटना - भांति भांति के उत्सव

९—रानियों के सोलह शृंगार - बारह आभूषण, राजकुमार के सोलह शृंगार (पद्य में) द्वितीय अध्याय में ऋतु वर्णन एवं प्रकृति चित्रण

१०–विवाह के उपरान्त रंगरेलियां - ऋतु विहार, ऋतु चर्या, ऋतु के अनुसार आचार व्यवहार, षट्-ऋतु वर्णन

११–ऋतुओं के अन्तर्गत आये हुये पर्व - नवदुर्गा, दशहरा, देवोत्थान, एकादशी, होली, दिवाली।

तृतीय अध्याय में युद्ध और आखेट वर्णन

१२–राजकुमार के बत्तीस लक्षण—१-सत, २-शील, ३-गुण, ४-रूप, ५-विद्या ६-तप, ७ अल्पाहारी, ८-उदारचित्त, ९-तेज, १०-धनकर, ११-दौलतवंत १२–सकलनायक, १३-दयालु, १४-विचारशील १५-दाता १६-बुद्धिमानी १७-प्रमाणिक, १८-यश, १९-उद्यम, २०-लाज, २१-धीरज २२-राजसम्मान

२३-शूर, २४-साहसी, २५-बलवान, २६-भोगी २७-योगी, २८-भुजायण, २९-भाग्यवान, ३०-चतुर, ३१-ज्ञानी, ३२-देवभक्त,

१३—मुगल सम्राट से उनका युद्ध—मुगल सेना का सजना, राजपूत सेना का सजना, छत्तीस आयुध, १-सर सीगणि, २-छुरी, ३-कुन्त, ४-साग ५-गेड़िहल, ६-मोगर, ७-गोली, ८-गोफण, ९-शख, १०-गुरज ११-मूसल १२-घण, १३-प्रासी, १४-चक्र, १५-खड्ग, १६-गदा, १७-चाबक, १८-फरसा, १९ कूह, २०-कवाण, २१-बन्दूक, २२-ढाल, २३-कटार, २४-खपटसो, २५-सेलइ, २६-त्रिशूल, २७-सांठो, २८-घको, २९-वन्सहड़ी ३०-भूकन्त, ३१-चहुलिसुलो, ३२-चटक, ३३-दृडायुध, ३४-चली, ३५-कडील गण, ३६-तोमर। युद्ध की तैयारी, युद्ध का आरम्भ, युद्ध-वाद्यों का बजना, दोनों ओर से आयुधों के प्रयोग, घमासान युद्ध रौद्र रस का प्रकोप मतवाले सामन्तों के वार: गज एवं अश्वों का चिघाड़ना: घायलों का रण-क्षेत्र मे कराहना आदि: राजपूतों की विजय: विजय के उत्सव

१४—राजकुमार का आखेत-वर्णन—आखेट की तैयारी · साथ मे सेना विविध आयुध · गज, उनकी सजावट आदि: चातुर्मास के विश्राम स्थल: वर्षा वर्णन: साथ के पिजर-बद्ध अनेक पक्षी: अनेक शिकारी पक्षी तथा अन्य आखेट मे सहयोगी पशु पक्षी।

१५—चतुर्थ अध्याय में आखेट के उपरान्त विश्राम विविध आयुधों का खोला जाना: भोजन बनाना · दोपहर का अमल आदि: अमलोपरान्त अवस्था का चित्रण: दोपहर-समाप्ति · लौटने की तैयारी: लौटना प्रतीक्षा मे प्रासाद के गवाक्षों से देखती हुई रमणियों के चित्र: महल में प्रवेश: रगमहल के प्रेमालाप आदि।

वस्तु चित्रण प्रथम अध्याय मे अधिक हुआ है। दूसरे अध्याय मे प्रकृति चित्रण उल्लेखनीय है, तृतीय एव चतुर्थ अध्याय प्राय विवरणात्मक हैं।

कुछ उदाहरण

क—वस्तु चित्रण (नगर वर्णन)

गदाल सहर गढ़ कोट बाजार पौलि पगार बाग बावुड़ी बगीचा कूआ

सरवरां री, वड़ां पीपलां री छिवि । सहर री पाखती विराज नै रही छै। पारवती अरटां री भींगड़ि चींग रड़ी पड़ी नै रही छै। डहा रो खटाको लागि नै रहियो छै। पाखती वील वभि नै रही छै........गढ कोट चोफेर कांगुरा लागया थका विराजै छै। जाणे आकास गिलण नूं दाँत दिआ छै। ऊंची नजर करि जोइजै तो माथा रो मुगट खड़हड़े। तिण काटरी खाही ऊंडी द्रह नागद्रही सरीखी। जड़ छै ल पाताल री जड़ां सूं लागि नै रही छै।

ख—प्रकृति चित्रण

ऋतु वर्णन शरद् ऋतु से प्रारम्भ होता है। राजान राजकुमार विवाह के उपरान्त आनन्द मनाते हैं। सयोग शृंगार में प्रकृति के कुछ पार्श्व देखिये—

"सरोवरां रा जल निरमल हूवा छै। कमल पोइणी फूलि रहिया छै। सरग रा देवां नै पितारां नूं मातलोक प्यारो लागे छै कामधेनु गायां छै सू धरती री पाकी औषधि रा रस चरै छै। दूधां रा सवाद अमृत सरीखा लागै छै।"

"सरद रित रै समै री पूनिम रौ चन्द्रमा सोलै कला लियां समपूरण निरमली रैण रौ उजली चांदली रै किरण करि नै हस नूं हंसनी देखै नहीं नै हंसणी हंस देखै नहीं छै। मिलि सकता नहीं छै। तारां बार बार साहो मांहे बोलि बोलि नै वेरह गमावता छै। भण चांदणी री सपेती करि नै महादेव नंदी धमल ढूंढता फिरै छै। सो लाभता नहीं छै। इन्द्र ऐरावति जोतां फिरै छै। इण भांति री सरद रित री सपेती चांदणी री सोभा विराज नै रही छै।"

हेमन्त

"हेमन्त रित लागी। पछ रौ वाउ फिरियौ। उतराधो वाउ वाजियो। हेमन्त रा बरफ ऊपाडिआ, टाढ़ो टमकियौ, प्रालौ पड़ण लागौ।...... .... .. हेमाचल रा पहाड़ रा टूंका ऊपरै ऊजला बरफ रा टूक वधण लागा। बड़ाई पाइ दिन लघुता पाई। इहां नदियां रा जल जमि ठठ हूआ। नदी खीण पड़ी घटी। .. ..अगनी जल सारिखी ठंढी लागै छै। जल आग दाह सरीखौ लागै छै।"

शिशिर

"... ... सिसिर रित री माह मास री राति रौ प्रालौ पड़ै छै। उतराध रौ पवन उतामलो टीपां खाइ नै रहीयौ छै। तिण रित माहे छोह ढालिग्रां ऊडा मोहरां माहै ऊडा तहखाना मांहे खेर कोइलां री मकालां जगाड़ी जे छै। तपन तापन रा सुख लीजै छै।"

वसंत

".. .... दखिण दिसा मलयाचल पहाड रौ पर्वत वाजिग्रौ छै। सीत मंद सुगध गति पवन मतवाला मे गल ज्या परिमल झोला खावतौ वहै छै अढ़ार भार वनसपती मकरंद फूलादि रा रस मांणतौ थको वहै छै। अंबर मोरीजै छै। कू पलां फूटी छै। वणराइ मंजरी छै। वासावली फूंट रही छै। केसू फूलि रहिग्रा छै। रितराज प्रगटीया छै। वसंत आयौ छै। भमर मधुकर झकार करी रहीया छै। मधुरी वाणी रा सुर करि कोकिला बोलि रही छै। बाग बगीचां दरखत गुलकारी झिमि फूल रही छै।

दिस दिस केसरिग्रां पिचकारी छूटि रही छै। आकास ऊपरै अबीर मै गुलाल री अंबरै डबरी लागि रही छै।

डफ चग, मुहचग वाजि नै रहिग्रा छै। वीणा ताल मृदग वाजि रहिग्रा छै। वासली बाज रही छै। ढोलां बाजि रही छै। फाग गाइ जै छै। फाग खेली जै छै। नाची जै छै। हास विनोद कीजै छै। हास रस हुइ नै रहिग्रा छै।"

ग्रीष्म

"... . नैरत दिसा रौ ऊनो पवन वाजिग्रौ छै। उन्हालसी प्रगटीग्रौ छै। जेठ मास, लागो छै। सूरिज व्रख सक्रान्ति आयौ छै। सु जाणीजै छै। सूरिज व्रखां ने दरखतां रा आलो ताकै छै। तो बीजा तोकां री कोण बात।

तरवरां रा पान झडिग्रा छै। सुजाणै वस्त्र विनां नागा डिगधरां सरीणा नजर आवै छै। निवाणा रा पाणी मीठिग्रा छै पाइणी वाल नै रही छै। आछै जल मांछला तड़भड़ी रहीग्रा छै। गजराज सूका सरोवर ढूंढता फिरै छै सादला केसरी सिंह ज्वालानल [illegible]

वीझा वन रा हाथिआं री पेट री छाया सूता विसराम करै छै । भुयग सर्प नीसरिआ छै । सा लू ने तावड़ै री अगनी सूं वलतां थकां द्रौड़ि द्रौड़ि नै हाथीआ रै सीतल सूंडाहला माहे पैसि पैसि रहीआ छै । इण भांति रा सबल जीव तिके निवल हुइ नै रहीआ छै ।

वर्षा का वर्णन इस ऋतु वर्णन के साथ नही हुआ है। इसका तो केवल नामोल्लेख ही कर दिया है। इसका प्रसग तीसरे अध्याय में आया है—

"तण उपरान्ति करि नै राजान सिलामति चौमासा री छावणी हुइ छै । आगम रित आवी छै । आसाढ़ घूघलीओ छै । उतराध री घटा काली कांठलि ऊपड़ी छै । आडगरी गुडलि माहे ऊडी गाजीओ छै । बगला पावस बैठा छै । पंखीआं मालास मरिआ छै । पावस पड़िने रहिया छै परनाल खाल पहाड़ खड़कीया छै । चात्रग मोर बोलि न रहिआ छै ।"

ऋतु वर्णन में पृथ्वीराज की "वेलि कृष्ण रुकमणी री" का अनुसरण किया गया है। ऋतु वर्णन में पर्व एव त्यौहारों की ओर भी लेखक का ध्यान गया है। यद्यपि इस "वांत वणाव" में स्वतन्त्र प्रकृति चित्रण नहीं हुआ है तथापि यदि प्रसग को ध्यान में रखा जाय तो इसका स्वतन्त्रता में तनिक भी सन्देह नहीं होता ।

२—खीची गंगेव नींबावत रौ दोपहरो

इसमें गगेव नी बावत खोची की दोपहर-चर्या का विस्तृत विवरण है। विषय की दृष्टि से इसके २ विभाग किये जा सकते हैं

१—आखेट सम्बन्धी (पूर्वार्द्ध में)

२—भोज सम्बन्धी (उत्तरार्द्ध में)

प्रथम में आखेट की तैयारी एव उसकी सफलता दिखलाई गई है। दूसरे में जलाशय के तट पर नीबावत द्वारा किये गये भोजन का दृश्य है। यह विवरणात्मक-चित्र-शैली में लिखा गया है। इसकी भाषा प्रौढ़ एवं परिमार्जित है कही कही पर पद्यानुकारी गद्य के भी अच्छे उदाहरण मिलते हैं :—

एक उदाहरण देखिये—

"वरखारितु लागी : विरहण जागी । आभा झरहरै : वीजां आवास

करै। नहीं ठैवां खावै : समुद्र न समावै। पहाडां पाखर पड़ी। घटा ऊपड़ी मोर सोर मडै : इन्द्र धार न खंडै। आभो गाजै : सारग वाजै। द्वादस मेघ-नै देवौ हुवौ : सु दुखियारी री ऑख हुवौ। झड़ लागौ : प्रथी रो दलद्र भागो दादुरा डहिडहै सावण आणवै री सिघ कहै। इसी समइयौ वण रह्यो छै। वरखा मड ने रही छै ' विजली झलौमिल करिनै रही छै। वादलां झड़ लागो छै सेहरां सेहरो वीज चमक नै रही छै। जाणे कुलटा नायका घर सूं नीसर अ ग दिखाय दूसरै वर प्रवेस करे छै। मोर कुहकै छै : डेडरां डहकै छै। भाखरां रा नाला वोल नै रहया छै। पाणी नाला भर नै रहया छै। चौटड़ियाल डहकने रही छै। वनस्थली सू वेलां लपट नै रही छै। प्रभात रो पोर छै। गाज आवाज हुई नै रही छै। जाणे घटा घणे हरख सूं जमी सू मिलण आयी छै।"

इस प्रकार के वातावरण मे नींवावत का आखेट प्रारम्भ होता है। वर्षा ऋतु के ऐसे समय मे नीवावत की आखेट (सैल-सिकार) की इच्छा स्वाभाविक है।

आखेट वर्णन—

आखेट वर्णन में नींवावत का आखेट के लिये १—तैयारी करना और उसके उपरान्त २—शिकार करना ये दो महत्वपूर्ण कार्य आते हैं। इनमें पहले की अपेक्षा दूसरे का वर्णन अधिक विस्तार से हुआ है। प्रथम के अन्तर्गत नींवावत का एक सहस्र घोडे प्रस्तुत करना, उसके सरदारों का अस्त्र शस्त्र से सुसज्जित होकर आना, नींवावत का वाहर निकलना है। द्वितीय का चित्रण नगारे के साथ होता है। एक ओर शिकारी कुत्ते, चीते, घोड़े वाज, सिकरा, कुही आदि हैं दूसरी ओर सूअर, हिरन, खरगोश, तीतर, लवा, वटर आदि हैं। शिकार का वातावरण वन रहा है जिसके कई शब्द-चित्र आकर्षक हैं जैसे—

"घोड़ां रा पगांसूं जमी गूंज रही छै। खेह रो डोरो आकास नै जाय लागो छै। घूघरमाल घोड़ां री वाज रही छै। हींस कलल होफ हुई नै रही छै। वहलियां रा घूघरां जंगा रो झनकार हुइ नै रह्यौ छै। वहलां रा वास पइयां रो खड़वड़ाहट हुइ नै रह्यौ छै। होकारा हुइ नै रह्या छै। नगारे इकडंको हुइ नै रह्या छै। सहनायां मे मलार राग हुइ नै रह्यो छै। निसाण मुंहड़े आगै फरहर नै रहवा छै। . ... "

भोज वर्णन

आखेट के श्रम, दोपहर की धूप तथा रात्रि के अमल की खुमारी उतर जाने से नींबावत और उसके साथियों को प्यास लगती है । अपने सारे शिकार को एकत्रित कर वे निकटवर्ती जलाशय के समीप पहुंचते हैं। सरोवर पर घोड़ों से उतरना, अपने वस्त्र एव अस्त्र शस्त्र खोलना, विश्राम करना आदि का विस्तृत वर्णन है। इसके उपरान्त नीबावत का अपने साथियों के साथ अमल करना, भजन और ख्याल सुनना, सरदारों द्वारा जलचरों का शिकार किया जाना, बकरों का काटा जाना, शिकार किये गये जानवरों का मांस तैयार करना, भोजन करना आदि के चित्र हैं। भोजनोपरान्त नीबावत अपने साथियों के साथ लौटते हैं महलों में रानियां उनकी प्रतीक्षा खड़ी हैं :—

"ज्यां का मलूक हाथ पांवं जघा कदली को ग्रभ, बांह चपा री डाल, सिघ सी कमर, कुच नारंगी, नख लाल ममोला, ग्रीवा मोर सी, बोली कोकल सी, अधर प्रवाली, दांत दाड़मी कुली, नाक सुवा की चोंच, नाथ रामोनी जाणै सुक्र ब्रिहसपत सारखा दीपै छै। जाणे लाल कवल री खुसबोय लेवण सेत भवर आया छै म्रघ सा नेत्र, मीन जिसा चपल । मुह जाणे इन्द्र धनख छै । मुख पून्यूं है चन्द ज्यूं सोलहै कला संपूरण छै । पेट पीपल रौ पान छै । पॉसॉ माखन री लोथ छै । नितंब कटोरा सा छै । नाभी मंडल गुलाब रो फूल सो छै ।. ......"

उक्त-वर्णित दोनों ग्रंथों की भांति कुछ ऐसे भी ग्रंथ मिलते हैं जिनमें केवल वर्णन के उदाहरण ही उपस्थित किये गये हैं । ऐसे ग्रंथों में कुछ इस प्रकार हैं :—

३—वाग्विलास या मुत्कलानुप्रास[1]

इसके वर्ण्य-विषय इस प्रकार हैं— १-नरेश्वर वर्णन २-नगर वर्णन ३-माहत्म्य वर्णन ४-वनभूमि ५-सरोवर ६-राजसभा ७-वैमानिक देव

१—यह ग्रन्थ जैसलमेर के भंडार से प्राप्त हुआ है। इसके कुल ८ पत्र हैं जिनको देखने से इसकी रचना काल सौलहवीं शताब्दी हो सकता है। प्रति प्राप्ति स्थान : यति लक्ष्मीचन्द्र जी बड़ा उपासरा खरतरगच्छ जैसलमेर

८-जिनवाणी ९-मुनि १०-देशनाम ११-नायिका १२-जिन वर्णन १३-शील १४-तप १५-भावना १६-चोर १७-मंत्री १८-दुर्जन १९-दरिद्री २०-राज २१-ये किण काम रा (ये किस काम के) (निरर्थक वस्तुयें) २२-सुश्रावक २३-रावण राज्य २४-अश्वी २५-गुरू २६-सुश्राविका २७-तपोधना (महासती) २८-देव गुरु का आशीर्वाद २९-सौख्य ३०-धर्म-आराधना ३१-द्रव्य ३२-पुष्प वृक्ष। ३३-मरूथल-यात्री ३४-वाटिका, ३५-प्रमाद ३६ विरहिणी ३७-द्वादस मास वर्णन ३८-चतुर्दश स्वप्न वर्णन ३९-राजा ४०-राजकुमार ४१-मन्त्री ४२-शरीर सकलापु (अंग राग) ४३-खाद्य वस्तु ४४-पकवान ४५-वस्त्र ४६-आभरण ४७-प्रधान वृक्ष ४८-सगर्व स्त्री ४९-वियोगिनी ५०-कृत्रिम-स्नेह ५१-युद्ध ५२-शाकिनी ५३-वैताल ५४-अश्व ५५-नगर सेठ ५६-पुत्र के प्रति माता का स्नेह ५७-सहजवाक्य ५८-शोभा निलय ५९-वेश्या वर्णन ६०-धवलगृह ६१-चन्द्रोदय ६२-सूर्योदय ६३-अशोभनीय वस्तुएं ६४-प्रसिद्ध वस्तुयें (लीला परमेश्वर की) सृष्टि ब्रह्मा की आदि ६५-चचला लक्ष्मी ६६-कलि प्रवर्तन ६७-पुतली (प्रतिमा) ६८-नगर वर्णन ६९-लोक वर्णन ७०-युवराज वर्णन ७१-सत्पुरुष प्रतिज्ञा।

इस वर्णक ग्र थ मे कहीं कहीं सस्कृत का भी प्रयोग हुआ है। कोई वर्णन दो वार भी आगया है किन्तु उसमे पुनरुक्ति दोप नहीं आने पाया। भाषा मे अन्त्यानुप्रास का ध्यान रखा गया है।

गद्य का उदाहरण—

वनभूमि का वर्णन

शिव तणा फेत्कार, थूअड तणा धूत्कार। सिंघ तणा गु जारव, व्याघ्र तणा घुघुरान। सूयर घुरकइ, चित्रक वरकइ, वैताल किलकिलइ, दावानल प्रज्जलइ। रीछ ऊछलइ भ्रमरी भ्रमइं मृग रमइं, जिसा हुइ दविधा रु ख, इसा दीसइ भील। इसी वनभूमि।

४—कुतूहलम्[1]

इस प्रति के अन्त में "इति कौतूहलम्" शब्द लिखा है जिससे पता चलता है कि कुतूहल उत्पन्न करने वाले वर्णनो के कलात्मक उदाहरण यहां

१—अगरचन्द नाहटा (राजस्थान भारती) वर्ष ३ अ क ३ पृ० ४३

मिलते हैं। एक उदाहरण—

वर्षाकाल—

ऊमटी घटा, बादला होइ उकठा, पड़इ छटा भाजइ गटा, भीजइ लट
मेह गाजइ, जाणे नाल गोला वाजई, दुकाल लाजइ,
सुवाव बाजइ, इन्द्र राजइ, ताप पराजइ।
बीज झबके, मेह टबके, हीया दबके, पाणी भभके, नदी उब
वनचर लबके आयो अबके।
बौलइ गोर, डेड करे सोर, अंधार घोर, पेंइसइ चोर, भीजइ ढोर
खलके खाल, वहै परनाल, चूमे माल, साँप गया पयाल।
झड़ लागी, लोक दसा जागी,
घर पड़े, लोग ऊंचा चडै—

५—समाश्रृंगार[1]—

इस ग्रंथ की प्राप्त प्रति सं० १७६२ में महिमा विजय द्वारा लिखी ग
है। इसमें वर्णन बहुत अधिक तथा आकर्षक है।

गद्य का उदाहरण—

वर्षा—

वर्षा कालहुउ, वहितौ रहिउ कुयउ,
वावि पाणी भरता रया। वादल उनया।
मेघ तणा पाणी वहै, पंथी गामइ जाता रहै।
पूर्वना वाजइ वाय, लोक सहु हर्षित थाय।
आकाश घड़हड़े, खाल खड़हड़े।
पंखी तड़फड़इ, वड़ी माणस लड़थड़इ।
काठ सड़इ, हाली हल खडइ।
आपणा घरि कादम फेड़इ, बीजा काज मेड़इ।
पार न लींइ। साघ विहारन करोइ।
अनेक जीव नीपजै, विविध धान ऊपजै।
लोकनी आस पूजै, गाय भैंस दूजै - आदि

....

१—राजस्थान भारती – वर्ष ३ अंक ३ पृ० ४४

६–दो अनामक अपूर्ण ग्रंथ

१–वर्णनात्मक वड़ी प्रति[1]

यह प्रति प्राप्त वर्णक-ग्रंथों में सबसे वड़ी है। इसके ४० पत्र प्राप्त हैं। वर्षा वर्णन का एक दृश्य देखिये—

गद्य का उदाहरण—

"अब भाद्रपद मास, पूरइ विश्व नी आस, लोक नइ मनि थाइ उल्लास।

जिह नइ आगमि वरसइ मेह, न लाभइ पाणी नो छेह, पुनर्नव थाइ देह।
भला हुइ दही, परी खा कोइ कहे नदि सही, पृथ्वी रही गहगही।
साचइ कादम माचइ, करसणि नाचइ। नीपजइ सातइ धानि देखतां प्रधान।
नासइ दुकाल, माद्रवे ढू ढइ सुगाल आदि–

२–दूसरी अपूर्ण प्रति

यह प्रति श्री अगरचन्द नाहटा को केशरियानाथ भडार, जोधपुर का अवलोकन करते हुए मिली[2]। इसमे कुल १५७ वर्णन हैं १५८ वां अधूरा ही रह गया है–

गद्य का उदाहरण—

विहरणी—

हारु चोड़ती, बलय मोड़ती। आमरण माजती वस्त्र गॉजती किंकणी कलाप छोड़ती, मस्तक फोडती। वक्षस्थल ताड़ती कचुड फाड़ती।
केशकलाप रोलावती, पृथवी तलि लौटती।
आंसू करि कंचुक सींचती, डोडली दृष्टि मींचती
दीनवचन बोलती सखीजन अपमानती।

. . . .

१—ह० प्र० डा० भोगीलाल खांडेसरा : वड़ौदा विश्व विद्यालय के पास विद्यमान

२—अगरचन्द नाहटा - राजस्थान भारती वर्ष ३ अंक ३-४ पृ० ४६

थोड़इ पाणी मांछली जिम तालोचलि जाती शोक विकल थाती।
त्तणि जोयइ, त्तणि रोयइ। त्तणि हंसइ, त्तणि रूसइ।
त्तणि आक्रंदइ, त्तणि निंदइ। त्तणि भूमइ, त्तणि बूमइ।
तेह तनु, सताप चदण। आदि

कविवर सूर्यमल

(जन्म सं० १८७२ : मृत्यु सं० १९२५[1])

सूर्यमल बीसवीं शताब्दी के प्रौढ राजस्थानी लेखकों में हैं। इनके पिता चंडीदास एव माता भवानबाई थी। बूंदी निवासी श्री चण्डीदास जी स्वयं डिंगल और पिंगल के प्रसिद्ध विद्वान थे। उनके गीतों का संग्रह "बल-विग्रह" के नाम से प्रकाशित है। वशाभरण (कोप) तथा "सार-सागर" इनके अप्रकाशित ग्रंथ हैं।

पिता की भांति श्री सूर्यमल जी ने अपनी प्रतिभा का परिचय बाल्य-काल से ही देना प्रारम्भ किया। दस वर्ष की आयु में इन्होंने "राम रजाट[2]" नामक ग्रंथ की रचना की। एक वर्ष में इन्होंने संधि ज्ञान प्राप्त कर लिया[3]। तथा १२ वर्ष की अवस्था तक ये व्याकरण में पद-ज्ञान के अधिकारी हुये[4]। इसके उपरान्त सूर्यमल की कवित्व शक्ति का क्रमिक विकास होता गया।

इन्होंने कुल ६ विवाह किये जिनसे केवल एक कन्या उत्पन्न हुई। उस शिशु-कन्या को प्यार करते करते शराब के उन्माद में इतना हिलाया डुलाया कि वह भी मर गई। श्री मुरारी दान को इन्होंने दत्तक पुत्र बनाया।

....

१—देखिये:—
वीर सतसई भूमिका पृ० १२
कवि रत्नमाला पृ० ११४
राजस्थान साहित्य को रूपरेखा पृ० १४४
डिंगल मे वीर रस पृ० ९८
वश भास्कर

२—इसमें बूंदी नरेश श्री रामसिह जी के दौरे एव आखेट का वर्णन है।

३—वश भास्कर प्रथम राशि, प्रथम मयूख पृ० १६

४—वही पृ० १५

इनकी सबसे महत्वपूर्ण रचना "वंशभास्कर" है जो सात भागों में प्रकाशित है। इसमें राजपूतों को ६ वंशों का इतिहास है। प्रासगिक रूप से कई अवतरण बीच बीच में आये हैं। यह पद्य ग्रंथ है किन्तु कुछ स्थानों पर गद्य का भी प्रयोग है। अपने जीवन काल में सूर्यमल इस ग्रंथ को पूरा नहीं कर सके। बूंदी नरेश की आज्ञा से दत्तक पुत्र मुरारीदान ने इसे पूरा किया।

कविवर सूर्यमल ने अपने वश-भास्कर के चतुर्थ, पंचम, षष्ठ एवं सप्तम राशियों में गद्य का प्रयोग किया है[1]। यह गद्य कुल १८३ पृष्ठों में

....

१—चतुर्थ राशि :—

पृ० ११८६—१२१३,	४।१,	२, ३,	११०-११-१२	=२८
१२६१—१२६७,	४।६,		११५	= ७
१३४१—१३४६,	४।१५,		१२४	= ६
१३४६—१३८२,	४।१५,	१६, १७	१२४-५-६	=३४
१६१०—१६२८,	४।३५,	३६	१४४-४५	=१६
				९४

पंचम-राशि :—

१७६२—१७७२,	५।७६		१५४।५५	=१०
१८११—१८२६,	५।११	१२	१५८-५६	=१६
१८४१—१८५०,	५।१३		१६०	=१०
१९६७—१९७६,	५।१५			=१०
				४६

षष्ठ राशि :—

३०७३।३०७४,	७।२६	= २

सप्तम राशि :—

२३२४—२३३७,	६।११	१६४	=१४
२६६१—२६७३,	७।१०	२२२	=१३
२६७४—२६८७,	७।११	२२३	=१४
			४३

है। इसके साथ दोहे और छप्पय भी हैं। गद्यांश को "सचरण गद्य" नाम दिया गया है। इस गद्य में प्रौढ़ राजस्थानी के रूढ शब्दों का प्रयोग मिलता है ।

गद्य का उदाहरण—

इणरीत आपरा ओर भी विसेस वीरां नू बधाई काकारा द्वार रो कंवाड़ होइ सेना समेत सलेम ४।१ उठै ही आडो रहियो ।

अर काकै भी पुलियार होइ प्राची १ रो परिकर इक्टठो करि फेर भी दिल्ली पर चलावण दृढ़ भाव गहियो ।

इण बात रै हाके पहली सितारा १ बीजापुर भावनगर प्रमुख दक्खिण पच्छिम रा अधीस दो ही साहजादा मिलिया तिकै दूजा अग्रज रै अनुकार साचे संकल्प दिल्ली रा दायाद होइ साम्हां चलाया।

अर दिल्लीस भी घणा साहस थी आपरा जावण में आडो होइ चलायो इसड़ा वड़ा कुमार दारा न सूं साम्हें पूगण रो विदेस देर विदा कीधो। जतरे तापि नू लांघि नर्मदा नदी रै नजीक आया।१२।

—सप्तम राशि दशम मयूख पृ० २६६१

४—वैज्ञानिक-गद्य

वैज्ञानिक गद्य दो रूपों में मिलता है—क-अनुवादात्मक और ख-टीकात्मक। अनुवाद या टीकाये सस्कृत से की हुई हैं। राजस्थानी मे स्वतन्त्र रूप से लिखे गये वैज्ञानिक गद्य के उदाहरण बहुत कम मिलते हैं। प्राप्त अनुवाद एवं टीकाये योग शास्त्र, वैद्यक तथा ज्योतिष से सम्बन्धित है।

योग-शास्त्र—

योग-शास्त्र के अन्तर्गत दो टीकाये उल्लेखनीय है— क-गोरख शत टीका[1] और ख—हठ-प्रदीपिका-टीका[2]। पहली मे हठयोग की क्रियाओं पर प्रकाश डाला गया है। सस्कृत मूल पाठ भी साथ मे दिया हुआ है। दूसरी मे हठयोग का प्रमुख ग्र थ हठ-प्रदीपिका पर टीका की गई है। इसका लेखनकाल अन्तर्साक्ष्य के आधार पर स० १७८७ निश्चित है। बीकानेर मे पुरोहित श्रीकृष्ण ने यह टीका लिखी। इन दोनो ग्र'थो मे विषय साम्य है।

गद्य के उदाहरण—

क-"एक तो आसन, दूजो प्राण सरोध, तीजौ प्रत्याहार, चौथौ धारणा पांचमौ ध्यान, छट्ठो समाधि। ये छह योग का अ ग छै।"

—गोरख शत टीका

ख-"श्री गुरू ने नमस्कार कर स्वात्माराम योगीश्वरै। केवल निः केवल राजयोग की ताई हठ विद्या छै सु उपदिशी जियै छै। कहीयै छै।"

—हठयोग प्रदीपिका टीका

वैद्यक—

वैद्यक विषय के प्राप्त अनूदित ग्र थ इस प्रकार है— (क) ऋतु चर्या (अपूर्ण) (ख) योग-चिन्तामणि-टीका (ग) रसाधिकार (घ रसायण विधि

१—ह० प्र० अनूप-सस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर मे विद्यमान।
२—वही

(च) पालकाप्य गजायुर्वेद टबार्थ, (छ) घोड़ी चाली विवरण (ज) शालिहोत्र (झ) प्रताप सागर[1]।

प्रथम ग्रंथ में विभिन्न ऋतुओं के अनुसार वात, पित्त और कफ की अवस्थाओं का उल्लेख है। ऋतु-चर्या पर प्रकाश डालने के उपरान्त रस-प्रशंसा का प्रसंग भी आया है। दूसरा ग्रंथ हर्षकीर्ति उपाध्याय द्वारा लिखित योग चिन्तामणि (संस्कृत में) की टीका है। इसमें पाक विज्ञान चूर्ण गुटिका (गोली) क्वाथ, घृत, तैल, भस्म, मृगाक, आसव आदि के तैयार करने की प्रणाली बताई गई है। तीसरे और चौथे ग्रंथ में रस और रसायन पर विचार हुआ है। पांचवी रचना गज चिकित्सा से सम्बन्ध रखती है। इसमें हाथियों के प्रकार, उनकी जाति लक्षण, गुण, रक्षा विधि तथा उपचार प्रणाली पर प्रकाश डाला गया है। छटी में घोड़ों की चौसठ व्याधियां और उनके उपचार बताये हैं। सातवीं में घोड़ों की जाति रंग, गुण शुभा शुभ लक्षण, शरीर निर्माण, नाड़ी परीक्षा, रोग और उनके उपचार का उल्लेख है। यह घोड़ा चाली विवरण की अपेक्षा अधिक विस्तार से लिखी गई है। आठवीं रचना जयपुर नरेश महाराजा प्रताप सागर "व्रजनिधि" द्वारा तैयार करवायी गई है। इसका प्रचार तथा प्रसिद्धि दोनों ही अधिक हुई है।

ज्योतिष

वैद्यक की भांति ज्योतिष के भी अनूदित ग्रंथ ही मिलते हैं। इनको तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है – (१) राशिफल आदि (२) शकुन शास्त्र (३) सामुद्रिक शास्त्र।

प्रथम विभाग के अन्तर्गत १–साठ संवछरी फल[2] २–डक्क मंडुली ज्ञान विचार[3] ३–द्वादश राशि विचार[4], ४–पंचांगविधि[5] ५–रत्नमाला टीका[6]

....

१—इन सबकी हस्त प्रतियां अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय में विद्यमान हैं।

२—ह० प्र० अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर, में विद्यमान।

३—वही

४—वही

५—वही

६—वही

६–लीलावती[1] प्राप्त हैं इनमें राशि और उनके फल पर ही अधिक प्रकाश डाला गया है। १–देवी शकुन[2] २–शकुनावली[3] ३–पासाकेवली शकुन[4] : ये शकुन शास्त्र से सम्बन्धित हैं। प्रथम दो की रचना रावल अखैराज ने की है। तीसरी जैन समयवर्द्धन गणि की है। इन तीनों मे शकुन के ऊपर विचार व्यक्त किये गये हैं। १–सामुद्रिक टीका तथा[5] २–सामुद्रिक शास्त्र[6] में सामुद्रिक विज्ञान के रहस्यों का उद्‌घाटन किया गया है।

५—प्रकीर्णक-गद्य

इस काल में निम्नलिखित चार नये क्षेत्रों में राजस्थानी गद्य का प्रयोग हुआ-(क) अभिलेखीय, (ख) पत्रात्मक, (ग) नीति विषयक (घ) यंत्र-मंत्र सम्बन्धी।

क—अभिलेखीय—

जैसलमेर मे पटवों के यात्री-संघ का वर्णन करने वाला शिलालेख अभिलेखीय गद्य का अच्छा उदाहरण है[1]। इस यात्री सघ का प्रतिष्ठा महोत्सव बड़ी धूमधाम से हुआ था। इस शिलालेख से पता चलता है कि इस उत्सव में ढाई लाख यात्री सम्मिलित हुये थे। उदयपुर, कोटा, बीकानेर किशनगढ, बूंदी, इन्दौर आदि के नरेशों ने भी उसमें भाग लिया था। इसमें संघ का भोज, उसका वैभव आदि का विस्तार से वर्णन किया गया है।

गद्य का उदाहरण—

"जैसलमेर, उदैपुर, कोटे सु कुंकुम पत्रयां सर्व देसावरा में दीवी। चार-चार जीमण किया। नालेर दिया। पछै सघ पाली भेलो हुवो। उठे जीमण ४ किया। सघ तिलक करायो। मिति माह सुदी १३ दिने। श्री जिन महेन्द्र सूरि जी श्री चतुर्विधि सघ समक्ष दीयो। पछै सघ प्रमाण कीयो। मार्ग मे देखता सुणतां पूजा पडिकमणां करता सांते क्षेत्र मे द्रव्य लगावतां जायगां जायगां समेला होता मारगमाहे सहारा रां गामारां सर्व देहरा जुहारया।"

ख-पत्रात्मक :—

सत्रहवी से बीसवी शताब्दी तक के हजारों पत्र श्री नाहटा जी के सग्रहालय में विद्यमान हैं। सामयिक महत्त्व होने के कारण ऐसे असख्य पत्र नष्ट हो गये होंगे। पत्रों में बोलचाल की भाषा का ही प्रयोग होता है

. . . .

१—जैन-साहित्य-सशोधक : भाग १ अक २ पृ० १०८

अत: भाषा के विकास का अध्ययन करने के लिये ये पत्र अत्यन्त महत्व के है। इन पत्रों के ३ विभाग किये जा सकते है—

१—बीकानेर नरेश तथा जैन-आचार्यो का पत्र-व्यवहार

२—जैन आचार्य या साधुओं एव श्रावकों के पत्र

३—जन साधारण के पत्र

नरेशों द्वारा जैन आचार्यो की सुविधा के लिये आज्ञा-पत्र निकाले जाते थे। इनमे वे अपने राज्य के अन्तर्गत आये हुए जैन आचार्यो को कोई कष्ट न हो ऐसी इच्छा प्रकट करते थे। जैसे—

छाप :

"महाराजाधिराज महाराज श्री जोरावरसिंघ जी वचनात् राठौड़ भीमासिंघ जी कुशलसिंघ जी मु हता रघुनाथ योग्य सुप्रसाद वांचजो। तिथा सरसे मे जती अमरसी जी छै सु थाने काम काज कहै सु करदीज्यो। ऊपर घणो राखज्यो। फागुण वदी ४ स० १७९६"

जैन आचार्य भी आवश्यकतानुसार समय समय पर नरेशों को पत्र लिखते रहते थे इनके कई विषय होते थे। एक सिफारश का उदाहरण—

"श्री परमेसर जी सत्य छै"

स्वस्ति श्री भटारक सिरीपूज श्री जिनलाभ सूरि जी योग्य राजाधिराज श्री वखतसिंघ जी लिखावतां नमस्कार वचज्यो । तथा वाणारस नैणसी जी राजकनै आया छै। ये महाजोग्य छै। पंडित छै। इणानै उपाध्याय पद दिराय नै सीख दिराज्यो – सवत् १८०४ रा फागण वदि १३"

दूसरे और तीसरे प्रकार के पत्र बहुत अधिक सख्या में हैं इन पत्रों का उद्देश्य व्यवहारिक है। उदाहरण के लिये तीसरे प्रकार के एक पत्र का उदाहरण देखिये—

"स्वस्ति श्री पार्श्वजिन प्रणम्य रम्य मनसा श्री बीकानेर नगरे सर्वगुण निधान सत्क्रिया सावधान प० प्र० भाई श्री हीरानन्द जी गणि गजेन्द्रान् श्री मुलतानतः राम चद लिखि त सदा वदना जाणिवी .. तथा पत्र १ आगे दीयौ छै तै पुहुतो लिष ज्यो तथा तुहे कुशल पेम पहुता रो पत्र वेगो देजो जी। ज्यु मनसाताया मै जी तुहाने जीमती वेला सदा चीता रीये छै। तुम्हारा सौजन्य गुण घटी मात्र पिण वीसरता नहीं छै। जी घड़ी पल विण

मे तुहाने चीता रां छां जी जेह्वो स्नेह प्यार राखो छो तिण थी विशेष राषेजो जी। तुहै अम्हारै घणी बात छौ सनेही छौ। साजन छौ। परम प्रीता छौ। परम हितकारी छौ। पत्र में लिष्यो प्यारो लागे छै। पत्र वेगा २ दीजो जी। श्राविका तुलरासनी नै घणी दिलासा आसासना दे जो तुहां थकां हु निचित छू' जी।। घणी जावता राषे जो वस्त वा मांगे तो दे जो जी। मिति मिगसर सुदि १३ होरहर जी अस कलक रै छै सांभली रु० १३ भुगत ले जो पं० लापण सी जी ने वंदना कहजो जी[1]।"

इसके अतिरिक्त जैनियों के १—विनती पत्र २—विज्ञप्ति पत्र भी मिलते हैं। विनती-पत्र एक प्रकार से प्रार्थना पत्र के रूप में होता हैं जैसे उज्जयनी के संघ का विनती-पत्र[2]। विज्ञप्ति पत्र प्रसिद्धि बढाने के लिये लिखा जाता था जैसे विबुधविमल सूरि का विज्ञप्ति पत्र[3]।

ग—नीति विषयक

जैन और पौराणिक कथाओं में नैतिकता पर अधिक प्रकाश डाला गया है। उनके अतिरिक्त कुछ ऐसे अनुवाद भी हुए जिनमें दादू आदि ग्रंथों में प्रचलित नैतिक आदर्श की अभिव्यक्ति हुई। चौरासी बोल[4], भरथरी सबद[5] और भरथरी उपदेश[6] दादूपंथी साधु बालकदास की रचनाये हैं। चाणक्य नीति टीका[7] में चाणक्य की नीति (सस्कृत में) की टीका भाषा में की गई है।

घ—यंत्र मंत्र सम्बन्धी

घंटा कर्णकल्प[8], बिच्छु रो भाड़ो[9] के अतिरिक्त कुछ स्फुट मंत्र की

....

१—अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर।
२—जैन-साहित्य-सशोधक खण्ड ३ अ० ३
३—जैन-साहित्य-संशोधक खण्ड ३ अंक ३
४—ह० प्र० अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय में विद्यमान।
५—वही
६—वही
७—वही
८—वही
९—वही

रचनाये यत्र मंत्र सम्बन्धी गद्य के उदाहरण हैं। इनमें मंत्रों के साथ यंत्र (रेखाचित्र आदि) भी दिये हुए हैं।

इस मध्य काल में गद्य बहुत अधिक मात्रा में लिखा गया। भाषा, शैली तथा विपय तीनों की दृष्टि से यह गद्य महत्व का है। प्रयास काल की लड़खड़ाती हुई भाषा अब पूर्ण रूप से समर्थ हो गई। टिप्पणी-शैली इस काल मे बहुत कम दिखाई देती है। शैली के नये नये प्रयोग ध्यान आकर्षित करते हैं। जैन-शैली के अतिरिक्त चारणी एवं ब्राह्मण-शैली का उद्‌भव हुआ। चारणी-शैली में लिखा गया ख्यात-साहित्य इस युग की देन है। वचनिका-शैली के अधिक उदाहरण नहीं मिलते। व्याकरण-शैली का इस काल में नितान्त अभाव रहा। कथा साहित्य की रचना इस काल मे बहुत हुई। कई कथाओं के सग्रह इस समय किये गये। दवावैत-शैली में पुष्ट एव प्रौढ़ गद्य के उदाहरण मिलते हैं। यह इस काल का नवीन प्रयास था। इसके गद्य में पद्य का सा आनन्द मिलता है। इस युग के लेखकों का ध्यान वर्णक-ग्रंथ की रचना करने की ओर गया। यह उनकी नई सूझ का परिणाम था। गद्य-लेखन की परिपाटी चल पड़ी थी अतः कुछ ऐसे विवरणात्मक गद्य के ग्र थ लिखे गये जिनके किसी भी अंश का प्रयोग प्रसंगानुसार किया जा सकता था। ब्राह्मण-शैली यद्यपि टीकात्मक रही तथापि विपय एव भाषा की दृष्टि से यह उल्लेखनीय है। वैज्ञानिक एव प्रकीर्णक विषयों में टीकात्मक-गद्य का प्रयोग हुआ। योग शास्त्र, वैद्यक, ज्योतिष जैसे विषयों का प्रतिपादन करने के लिये गद्य काम में लाया गया। अभिलेखीय एव पत्रात्मक गद्य के अच्छे उदाहरण इस काल में मिलते हैं। यंत्र-मंत्र सम्बन्धी गद्य के स्फुट प्रयास हुये। शैली का अपनापन इस काल की विशेषता है।

पंचम प्रकरण

आधुनिक - काल

(सं० १९५० से अब तक)

आधुनिक - काल

राजस्थानी-साहित्य का आधुनिक काल भारत के राष्ट्रीय जागरण का युग है। इसका प्रारम्भ सं० १६५० के लगभग होता है। इस स्वदेश प्रेम की राष्ट्रव्यापी विचार धारा का प्रभाव राजस्थानी साहित्य पर अनिवार्य रूप से पड़ा। राजस्थानी के साहित्यकारों का सम्पर्क अन्य भाषाओं के नवीन साहित्य से हुआ जिसका प्रभाव उन पर पड़ना अवश्यम्भावी था। राजस्थानी के कलाकार भी हिन्दी की ओर झुके तथा उसकी रचना मे सक्रिय सहयोग दिया।

संवत् १६०० के पूर्व ही राजस्थान अंगरेजों के शासनाधीन हो चुका था। अंगरेजी शासनकाल में न्यायालयों की भाषा उर्दू तथा शिक्षा की भाषा हिन्दी हो गई। अब राजस्थानी के लिये कोई स्थान नहीं था। उसका राज्याश्रय समाप्त हो चुका। न वह शिक्षा की भाषा रही और न साहित्य की। फलस्वरूप मध्यकाल में राजस्थानी-साहित्य का जो निर्माण बड़ी तत्परता से हो रहा था उसकी गति बंद हो गई। नवीन शिक्षा का प्रारम्भ एव राजस्थानी पठन पाठन के उठ जाने से नव शिक्षित समाज हिन्दी की ओर बढ़ा। राजस्थानी को वह गवारू भाषा समझने लगा। राजस्थानी साहित्य उसके लिये पूर्ण रूप से अपरिचित हो गया।

इतना होने पर भी राजस्थानी साहित्य की रचना बिल्कुल बद नहीं हुई। गद्य और पद्य दोनों में मातृभाषा के उत्साही भक्त इसमें साहित्य रचना करते रहे।

राजस्थानी के नवोत्थान के उन्नायको मे जोधपुर निवासी श्री रामकरण आसोपा का नाम सर्वप्रथम उल्लेखनीय है। इनका जन्म स० १६१४ मे हुआ। ये राजस्थानी के धुरधर विद्वान और लेखक थे। इनकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर डा० सर आशुतोष मुकर्जी ने इनको कलकत्ता विश्वविद्यालय मे लेकचरार बनाकर बुलाया था। डिंगल भाषा के ग्रंथों की खोज में ये डा० टेसीटोरी के प्रधान सहकारी रहे। इन्होने आज से ५० वर्ष पूर्व राजस्थानी का एक व्याकरण बनाया जो इसका प्रथम व्याकरण होने पर भी वैज्ञानिक है। वृद्धावस्था में घोर परिश्रम करके इन्होंने डिंगल भाषा का वृहत् कोष तैयार किया।

दूसरा महत्वपूर्ण नाम श्री शिवचन्द भरतिया का है। ये जोधपुर राज्य के डीडवाणा नगर के निवासी थे पर अधिकांश बाहर ही रहे। अन्तिम दिनों में इन्दौर में वास किया था। श्री आसोपा विद्वान थे किन्तु भरतिया जी कलाकार। इन्होंने अनेक सुन्दर सुन्दर रचनाये करके राजस्थानी को लोकप्रिय बनाने और उसकी ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करने का प्रयत्न किया। इन्होंने कई पत्र-पत्रिकाओं में लेख लिखे तथा नाटक, उपन्यास आदि भी लिखना प्रारम्भ किया। ये राजस्थानी के भारतेन्दु कहे जा सकते हैं।

पैठण निवासी श्री गुलाबचन्द नागौरी की अमूल्य सेवाये भी नही भुलाई जा सकनीं। ये राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता थे। बड़े उत्साह एव लगन के साथ ये कार्य-क्षेत्र में आये। राजस्थानी को सर्वप्रिय बनाने के लिये इन्होंने विविध पत्र पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित किये राजस्थानी के उद्धार के लिये काफी जोर दिया।

धामण गांव (बराड) के "मारवाड़ी हितकारक' पत्र ने राजस्थानी के उद्धार-कार्य में महत्वपूर्ण सेवाये की। राजस्थानी का यह सर्व प्रथम मासिक पत्र था जो सर्वथा राजस्थानी में छपता था। इसके सम्पादक श्री छोटेलाल शुक्ल तथा सचालक श्रीयुत नारायण बडे ही उत्साही एव कर्मठ व्यक्ति थे। इनके प्रयत्नों से इस समय राजस्थानी लेखकों का एक खासा मण्डल तैयार होगया था।

इस प्रकार के उत्साह एव प्रचार कार्य से राजस्थानी के प्रति लोगों का ध्यान गया। उससें नवीन साहित्य-रचनाये होने लगी। नाटक, कहानी, उपन्यास, निबन्ध, गद्यकाव्य, रेखाचित्र, संस्मरण, एकांकी, भाषण आदि सभी क्षेत्रों में राजस्थानी गद्य के प्रयोग हुये।

नाटक

श्री शिवचन्द भरतिया ने नाटक रचना का सूत्रपात्र किया। इन्होंने १—केशरविलास २—बुढ़ापा की सगाई और ३—फाटका जजाल नामक तीन नाटक लिखे। जो राजस्थानी के सर्वप्रथम नाटक हैं। इन तीनो नाटकों में भरतिया जी ने मारवाड़ी समाज की रूढियों का दिग्दर्शन किया है। विधा-भाव, अनमेल विवाह, स्त्री-अशिक्षा आदि सामाजिक बुराइयो को दूर करने का आन्दोलन इन नाटकों द्वारा प्रारम्भ किया गया। ये नाटक भाषा की दृष्टि से बहुत ही सफल उतरे है।

श्री गुलाबचद नागौरी का "मारवाड़ी मोसर और सगाई जंजाल" नाटक स० १६७३ में प्रकाशित हुआ। इस नाटक में भरतिया जी के नाटकों की भाति समाज सुधार का उद्देश्य ही रहा। "मोसर" और "सगाई" इन दोनों रूढ़ियों की इस नाटक मे तीव्र आलोचना है। इस नाटक की भाषा ओज पूर्ण है।

श्री भगवान प्रसाद दारुका का जन्म खेतड़ी राज्य के अन्तर्गत जसपुरा नामक ग्राम मे स० १६४१ में हुआ। इनके पिता का नाम सेठ बालकृष्ण-दास था। ६ वर्ष की आयु में ही पिता की मृत्यु हो जाने पर इनका बाल्यकाल सुख मे नही बीता। ये तीन भाई हैं तथा तीनों कलकत्ते में गल्ले के व्यौपारी हैं।

श्री दारुका ने राजस्थानी मे पांच नाटक लिखे १—वृद्ध विवाह (स० १६६०) २—बाल विवाह (स० १६७५) ३—ढलती फिरती छाया (स० १६७७) ४—कलकतिया बाबू (स० १६७६) और ५—सीठणा सुधार (स १६८२) इन पांचों नाटकों का प्रकाशन स० १६८८ में "मारवाड़ी पच नाटक" के नाम से हुआ। ये सभी नाटक सामाजिक बुराइयों के सुधार की प्रेरणा से लिखे गये। इन नाटकों मे कलकतिया-बाबू अन्य नाटकों से अच्छा है।

श्री सूर्यकरण पारीक का जन्म स० १६६० में पारीक ब्राह्मण कुल में हुआ। हिन्दू विश्व-विद्यालय काशी मे इन्होने अध्ययन किया। वही से अगरेजी और हिन्दी में एम० ए० पास किया। बिड़ला कालिज (पिलानी) में आप हिन्दी अ गरेजी के प्रोफेसर एव वाइस प्रिसिपल थे।

अपने जीवन काल मे पारीक जी ने राजस्थानी की स्मरणीय सेवाये की है। "वेलि कृष्ण रुक्मणी री" "ढोला मारू रा दूहा" राजस्थानी के लोक गीत, राजस्थानी वार्ता आदि अनेक ग्रंथों का सम्पादन सफलता पूर्वक किया। इन्होंने "बोलावण" नाम का एक छोटा सा नाटक लिखा था जो राजपूत वीरता का जीवित चित्र प्रस्तुत करता है।

सरदार शहर निवासी श्री शोभाराम जम्मड़ ने "वृद्ध विवाह विदूषण" नाम का एकांकी प्रहसन स० १६८७ मे लिखा। इस नाटक में भगवती-प्रसाद दारुका के "वृद्ध विचार" नाटक की भाति मारवाड़ी समाज के अनमेल विवाह का सुधारवादी चित्र है।

श्री डा० ना० वि० जोशी के "जागीरदार" में जागीरदार और किसानों के संघर्ष की कथा है। यह नाटक राजस्थानी का सर्व श्रेष्ठ नाटक है। राष्ट्रीय जागरण की भावना इसका बीज बिन्दु है। इस नाटक की भाषा पर मालवी का प्रभाव है।

श्री सिद्ध का "जयपुर की ज्योनार" नाटक दारुका और जम्मड़ के नाटकों की भांति सामाजिक है। निर्धन होने पर भी समाज की रूढ़ियों के निर्वाह के लिये ऋण लेना, स्त्री शिक्षा का अभाव, उनकी आभूषण प्रियता एवं भोज में सम्मिलित होने की अभिलाषा आदि इस नाटक का विषय है।

श्री श्रीनाथ मोदी का "गोमा जाट" नामक नाटक ग्राम जीवन से सम्बन्ध रखता है। महाजनी प्रथा और उसका परिणाम इस नाटक का मूलाधार है।

श्री मुरलीधर व्यास के दो एकांकी "सरग नरक" और "पूजा" स्त्रयोपयोगी एवं शिक्षाप्रद हैं।

श्री पूरणमल गोयनका तथा श्री श्रीमन्त कुमार व्यास ने कई छोटे-छोटे एकांकी नाटक लिखे हैं। गोयनका के नाटक सामाजिक हैं तथा व्यास के ऐतिहासिक और राजनीतिक।

कहानी

बीसवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में शिक्षात्मक तथा मनोरंजनात्मक कहानियां प्रकाशित हुई, जिसमें श्री शिवनारायण तोष्णीवाल की "विद्या-परमं देवतं[1]" (सं० १९७३) "स्त्री शिक्षण को ओनामो[2]" (स० १९७३)। श्री नागोरी की "बेटी की बिक्री और बहू की खरीदी[3]" (सं० १९७३), श्री छोटेराम शुक्ल की "बधुप्रेम[4]" (स० १९७३) उल्लेखनीय हैं। श्री व्रजलाल बियाणी ने "सीता हरण" (स० १९७५) कहानी रामायण की कथा के आधार पर लिखी।

....

१—पंचराज : वर्ष २ अंक २ पृ० ५५
१—वही : वर्ष २ अंक ४–५ पृ० ११६
३—वही : वर्ष २ अंक ३ पृ० ६०
४—वही : वर्ष २ अंक ७ पृ० २०३

इक्कीसवी शताब्दी के प्रारम्भ तक पहुंचते पहुंचते कहानियों का ढांचा बदला। उपदेश के स्थान पर कलात्मक तत्व प्रधान हो गया। इन कहानीकारों में श्री मुरलीधर व्यास अधिक यशस्वी रहे हैं। इनका जन्म स० १९५५ वि० में बीकानेर में पुष्करना परिवार में हुआ। प्रारम्भ में ये राज कर्मचारी रहे। अब "सादुल राजस्थानी इन्स्टीट्यूट" बीकानेर में कार्य कर रहे हैं। इन्होंने कई कहानियां लिखी हैं जिनमे से कुछ समय समय पर पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही है। इनकी कहानियों का एक सग्रह "वरसगांठ" मुद्रणाधीन है।

इनकी "वरसगांठ[1]" एक निर्धन की करुण कहानी है। मोती की वर्षगांठ है। घीसू २५ रु० उधार लाता है जिसमे ५ रु० काटे के, १ रु० कोथली खुलाई का, आठ आने कबूतर की ज्वार का तथा लिखाई आदि के पैसे कट १८ रु० उसके हाथ में आते है। वर्षगॉठ मनती है। रुपये सभी खर्च हो जाते है। इसी समय ज्योंही घीसू भोजन करने बैठता है तभी दूसरा महाजन कथी के रुपयों के लिये आ पहुँचता है। रुपये नहीं मिलने पर वह मोती के हाथ मे से चांदी के कड़े खोल कर ले जाता है मोती चिल्लाता रहता है और उसकी मां सिर पकड़ कर गिर जाती है। एक ओर निर्धनों मे उधार लेने की प्रथा, व्यर्थ आडम्बर मे व्यय करने का अ ध विश्वास है दूसरी ओर महाजनों की शोषण वृत्ति एव क्रूरता है। दोनों का वास्तविक चित्र इस कहानी मे अ कित है।

"मेहमामो[2]" कहानी में मरुदेश में वर्षा के महत्व पर चित्र बनाये गये है। वर्षा न होने से मारवाड़ी गरीबों की कैसी दशा हो जाती है - उन को अपने जीवन के प्रति कितनी आशा शेप रहती है आदि के अच्छे चित्रण इस कहानी मे हुये हैं। साथ ही वर्षा होने पर बालक "मेहमामो आयो" कहकर नाच उठते हैं। उनका इस प्रकार प्रसन्न होना स्वाभाविक ही है।

श्री मुरलीधर व्यास की कहानियों में विषय और शैली दोनों ही उल्लेखनीय हैं। समाजवादी धरातल में इनकी कथाये आधारित हैं। श्री व्यास की शैली अपनी निजी है। भाषा पर अधिकार होने के कारण चित्रण में उन्हे अधिक सफलता मिली है।

. ...

१—राजस्थानी भाग ३, अक १ पृ० ६५
२—राजस्थानी भाग ३ अ क ४ पृ० ८६

उदाहरण—

"खैखाड वाजे। विरखा रो जाबक डोल नहीं। लोग-बाग आंख्यां फाड्यां आभै सामो जोवै। च्यार मिनख मेला हुवै जठै आई बात के फलाणी जागां सौ डागर मरग्या फलांणी जागा दो सौ। अेक भैसो छायोडो। सगलां रा मूंढा लुक्खा लुक्खा लागै। घास इत्तो मूंघो के लोग धापेर सीदावै। डांगरां सारू जागां जागां घास रो बदोबस्त हुवे। दिन में घणोई बालै पण सिम्भ्या पड़ी पाछो वोई खैखाड़[1]।"

समाज के जीवन को चूसने वाली हानिकारक रूढियों, पूंजीवाद की विषमताओं तथा वर्तमान समाज की व्यवस्था आदि के प्रति विद्रोह की भावना इनकी कहानियों मे भरी है। इन बड़ी कहानियों के अतिरिक्त इन्होंने लघुकथाये भी लिखी हैं।

श्री चदराय की ३ लघुकथाये १—चचल नै गंभीर २—सेठाणी जी ३—ढाणी रो चौधरी[2] - छोटे छोटे चित्र हैं। श्री मुन्नालाल पुरोहित की "ऊट रो भाड़ो" नामक कहानी राजस्थानी की अच्छी कहानियों में से है।

श्री श्रीमत कुमार, नरसिह पुरोहित आदि अनेक नये लेखक इस क्षेत्र में अवतीर्ण हो चुके हैं इसकी रचनाये प्रायः प्रगतिवादी दृष्टिकोण से लिखी हुई होती हैं।

श्री नरसिह पुरोहित के "काणो-सग्रह" में ७ कहानियां हैं - जिनके नाम इस प्रकार हैं— १-पुन्न रो काम, २-प्रेत लीला, ३-कालू री मां, ४-रातवासो, ५-चोरी, ६-धोली टोपी, ७-अहिंसा परमोधर्म— ये सभी कहानिया अच्छी हैं। श्री प्रेमचन्द की वर्णन शैली एव मनोवैज्ञानिक विवरण इन कहानियों का आधार है।

गद्य का उदाहरण—

"और उणीज बखत सेठां रे घरै दीवाली मनावण नै कालूरी मां झट एक तूली सलगाई और झुक ने दीवारी बाट रे अड़ायदी, उणरे मुंडा सुं चीख निकलगी — म्हारो कालू! म्हारो कालू!! मुंडा सुं निकल्योडी फूंक

. .. .

२—सेहसामो पृ० ८६

३—राजस्थानी भाग ३ अंक २ पृ० ६१

दोवा रै लागी और झप करतो दीवो बुझायो जितरे आपरा मकान माते दीवा हूवेणा चाहिजे ।"

उपन्यास

राजस्थानी मे उपन्यास नहीं लिखे गये। केवल एक उपन्यास "कनक सुन्दर" श्री शिवचन्द भरतिया का मिलता है। इस उपन्यास के पूर्वार्द्ध का प्रकाशन सं० १९७२ मे हुआ और सम्भवत उत्तरार्ध लिखा ही नहीं गया। इसमे मारवाड़ी जीवन का सुन्दर चित्र अ कित किया गया है। आदर्शवादी दृष्टिकोण से यह उपन्यास लिखा गया है सामाजिक सुधार-भाव इसका प्रधान प्रेरक रहा है। नाटकों की भाति श्री भरतिया के इस उपन्यास की भाषा में प्रवाह एव शक्ति हे।

गद्य का उदाहरण—

दोपहर दिन को बखत चारधाकानी लू चाल रही छै हवा का जोर सूं बालू अठी की उठी ने उड उड़ कर बीका नवा नवा टीबा हो रह्या छै और भीजरा भी रह्या छै। मु ह ऊचो कर सामने चालणों मुस्कल छै। लू कपडा माहे वड़कर सारा सरीर ने सिकताप कर रही छै। धूप इशी जोर की पड़ रही छै के जमी ऊपर पग देणो मुस्कल छै। रास्ता माहे दूर दूर कठे ही झाड़ को नाव नही। बालू उड़कर जगा जगा नवा टीबा होणे सू रस्ता को ठिकाणो नही। आदमी तो दूर रस्ता माहे कोई जीव जिनावर को भी दरसण नही।"

रेखाचित्र एव संस्मरण—

रेखाचित्र एव सस्मरण लिखने का प्रयास बहुत ही आधुनिक है। श्री मुरलीधर व्यास और श्री भवरलाल नाहटा ने इस क्षेत्र मे अपनी लेखनी चलाई हैं। श्री भवरलाल नाहटा का जन्म स० १९६८ मे हुआ। इनके पिता का नाम श्री भैरूदान नाहटा है। ये राजस्थानी के प्रसिद्ध लेखक श्री अगरचन्द नाहटा के भतीजे और साहित्यिक कार्य मे इनके सहयोगी रहे है। प्राचीन लिपि एव कला से इनको अधिक प्रेम रहा है। इनके प्रकाशित रेखाचित्रो मे "लाभू बावो[1]" सर्वश्रेष्ठ है। यह "लाभू"

१—राजस्थानी भाग १ पृ० ८९

इनके घर का पुराना नौकर था। चालीस वर्ष तक उसने इसके यहां कार्य किया। दो रुपये महीने का नौकर होते हुए भी इनके घर में उसका अच्छा सम्मान था। इस रेखाचित्र को सब पढ़ने वालों ने पसंद किया तथा इसकी प्रशंसा भी खूब हुई। श्री मुरलीधर व्यास के रेखाचित्र भी बहुत रोचक होते हैं। इनके रेखाचित्रों के पात्र यद्यपि श्री नाहटा के रेखाचित्रों की भांति पूर्ण रूप से व्यक्ति विशेष नहीं होते उनमें कुछ जातीय तत्वों का समावेश भी कर दिया जाता है। "रामलो भगी[1]" "नदो ओड़[2]" व्यास जी के रेखाचित्रों के अच्छे उदाहरण हैं। इनके गद्य में बिम्ब ग्रहण कराने की क्षमता है। कुछ उदाहरण देखिये—

१—"दूर री गली में अवाज भारियोड़ी इसी जाण पड़ती जाणे म्हारी ई गली में मारी होवे। मदरसे जावणिया छोरा छोरी बड़ा-बूढ़ा सगलै उडीक लगाये ऊभा रैतार थोड़ी देर होती देख र सै उथपण लागता पण नानकड़ा टाबरिया रै तो जावक ई खटावण को होती नीं, पड पछाड़ण लागता तो कोये भर भर भरमौलिये दाई मूंडो वणाय ले तो। बा ने राजी मरण सारू घर वाला "आवो ओहरदास जी वेगा आवो, मनिये ने दही दो।" इयां घड़ी-घड़ी कैता। इतेई में तो रग उड्योड़ी मैली २ पागड़ी, हजामत वधियोड़ी, खांधे पर एक पुराणो मैलो र जागा जागा फटियोड़ो गमछो जिके ऊपर भाओलियो धरियोड़ो, एक हाथ में जाडो गेडियो, गोडा साइनो मैलो पछियो अर पगां में जाडा जूत, हरदास, "आयोई-आयोई" कैतो आय धमकतो।"

२—नदे री बहू वेगी थकी बाजरी रा सोगरा सेकती। जिकै ऊपर घोटियोड़ी लूण-मिरच नाख-नाखेर सगले जीमण लागता पछै गधां पर पावड़ा, कुदाला भांफ, अर टांबरां तोड़ी थोड़ा सोगरार लूण-मिरच मेल र नंदो लुगायां टांबरां समेत कमठाणे ढूकतो। छैइयां री जागा डेरा लगावतो, पछै सगलै. काम में लागता। मोटियार डिगलो खोद र पूर सलूजावता। टावर-लुगाया घूड़ोड़ै रा गधा भर र सहर परकोटे रै बारै नाखण जाबता। ऊपर सूं लाय बरसै पसवाड़े सूं पवन खीरा उछालै, सरीर ऊपर परसीणे रा परनाला वेवै। पर कांई मजाल कै थोड़ो फेट खाइले। हां, तिस लागती जणे नींगल्योड़ी हांडी मायलो पाणी रो मोटो लोटो भर'र ऊभाई डकल

. . . .

१—राजस्थान भारती भाग ३ अ० १ पृ० १२३
२—वही भाग ३ अंक २ पृ० ७५

डकल पी लेवता। कद सूरज मेल बैठतो'र कद थापड़ा विसराम लेता। नदो खाटी मजूर हो।

श्री मुरलीधर व्यास ने कुछ सस्मरण भी लिखे हैं। सस्मरण लिखने का प्रयास सबसे पहले सेठ श्री कृष्ण जी तोष्णवाल ने किया था। इनका लिखा हुआ "पूना मे ब्याव[1]" (स० १९७५) नामक सस्मरण है। जिसका विषय पूना का विवाह है। किन्तु श्री मुरलीधर व्यास के सस्मरण बहुत ही परिष्कृत रूप हैं। श्री व्यास जी के "सत सेठ श्री रामरतन जी डागा[2]" तथा "हरदास दहीवालो[3]" नामक सस्मरण बहुत प्रसिद्ध हो गये है। श्री भवरलाल जी नाहटा ने भी कुछ सस्मरण लिखे हैं जिनका प्रकाशन अभी नहीं हो पाया है। एक उदाहरण देखिये—

'बांरो नाम तो है हजारीमल पण लोक बाने लबू सेठ केवता, सीधा सादा लबा खेजड़े सा दीखता। साठ बरस रा बूढ़ा पण काम काज रो आलस को होनी जद बकारता काम रो ऊतर को देवता नी। कोई बानै जचे ज्यू केवो हसी मजाक करौ पण गरम को हु वतानी। . . . ."

—लम्बू सेठ अप्रकाशित

निबंध

पत्र-पत्रिकाओं के अभाव के कारण राजस्थानी में निबन्ध का विकास नहीं हो पाया। प्रकाशित निबन्धों मे अधिकांश विषय प्रधान है। इन निबन्धों में पीपलगांव निवासी श्री अनन्तलाल कोठारी का "समाजोन्नति का मूलमत्र[4]" (स० १९७६), धुनधारी का "बस म्हारो स्वराज होगो[5]" (स० १९७३), सत्यवक्ता का "धनवानां की लक्ष्मी[6]" (स० १९७५) प्रमुख है। इधर कुछ नये निबन्धकार भी देखने में आ रहे है इनके निबन्ध अभी तक प्रकाशित नहीं हो पाये पर उनके निबन्धो के सग्रह को देखने से पता चलता है कि निबन्ध शैली मे प्रौढ़ता आने लगी है।

१—पचराज : वर्ष ४, अ क १ पृ० ३६
२—राजस्थान भारती भाग ३ अ क १ पृ० १२६
३—वही भाग ३ अ क २ पृ० ७३
४—पचराज : वर्ष ५, अ क १२ पृ० ३११
५—वही वर्ष २ अ क १२ पृ० ३७५
६—[illegible]

श्री अगरचन्द नाहटा का "राजस्थानी साहित्य रा निर्माण और संरक्षण में जैन-विद्वानां री सेवा[1]" उल्लेखनीय है। ऐसे निबन्ध बहुत ही कम लिखे गये हैं। श्री कुं० नारायणसिंह के "कल्पना" "वैम" "कला" आदि भावात्मक शैली के तथा "राजस्थानी गीत" "डिंगल भाषा रो निकाल" साहित्यिक शैली के विषय प्रधान लेख हैं। श्री गोवर्धन शर्मा (जोधपुर) के "वो कलाकार", "साहित्त ने कला", 'कविता कांई है", "कला एक परिचय" विवेचनात्मक तथा "कविराजा बांकीदास और डिंगल कविता" "महात्मा गांधी और ललित कला" विचार प्रधान निबन्धों के उदाहरण हैं।

उदाहरण १–

आपणो समाज रोगी छै। या बात कबूल करवाने कोई इन्कार नहीं करसी। रोगी भी इशो नही महान रोगी छै। महान रोगी तो छे ही परन्तु बीका साथ साथ छोटा छोटा रोग भी अनेक रया करे छे। वैद्यराज जठा तक रोगी का मुख्य रोग को पत्तो तथा निदान नही जाणसी बठां ताई बीकी दवा दारू कुछ भी काम देसी नहीं। बस इशी ही दशा आपणा समाज की छै।

(समाजोन्नति को मूल मंत्र सं० १९७६)

उदाहरण २–

"कल्पना एक भांति री हसणी है भाव उण माथे सवारी किया करे है। ने इण हसणी ने बुद्धि री छडी सूं घेरता रेवे है। आ बात जरूर है के केई वेला छड़ी ने थोड़ी काम में ले तो कांई घणी।

इयुं तो सुख दुख दोनों री कल्पना होया करै है ने वे सुख दुख में ईज पूरी हो जावे है। आप जे मन मे कल्पना करो के म्हें आगले महीणे सूं हजार रुपयां री तिणखा पावण ढूक जावांला तो आपरो मन घणो प्रसन्न होवेला ने आपरै मूंडे माथे ई इणी भांत खुशी रा भाव आवेला।"

(कल्पना सं० २०१०)

गद्य काव्य

श्री ब्रजलाल बियाणी ने गद्य काव्य के कुछ प्रयास आज से कुछ

१—राजस्थानी भाग १, पृ० १७

पहले किये थे जिनका प्रकाशन "पचराज" में हुआ था। "गुलाबकली[1]" (स० १६७३) "मोगराकली[2]" (स० १६७३) गद्य काव्य के अच्छे उदाहरण है। सर्व श्री चन्द्रसिह, कन्हैयालाल सेठिया, विद्याधर शास्त्री ने भी सुन्दर गद्य काव्य लिखे है। शास्त्री जी का "नागर पान[3]" "आज भी छैल मेरो चावे नागर पान" को उसी प्रकार दुहरा रहा है। श्री कन्हैयालाल सेठिया के गद्य काव्यों का सग्रह "पांखड़ल्यां" के नाम से प्रकाशित होने वाला है।[4] इनका गद्य रोचक और प्रभावपूर्ण है।

कुछ उदाहरण — १

"बड़ी फजर की बखत। सधि प्रकाश हो गयो छै। रात को अधेरो दिना का चांदणा ने जगा दे रह्यो छै। तारा आपणा शीतल और मद तेज ने सूरज नारायण का उष्ण और प्रखर तेज के सामने लोप कर रह्यो छे। निरभ्र आकाश मे सूर्य भगवान का आगमन का प्रभाव शू लाली छाई हुई छै। पूर्व दिशा लाल वस्त्र धारण करकर पती का आगमन की बाट जोय रही छै।

—वियाणी - स० १६७३

२—सिज्या होण आली ही। धोरां की रेत ठडी होगी ही, आज में अकेलो ई टीबा के बीच बीच मे खींप सणिया और बांसां की व्हार देखतो देखतो दूर ताणी चल्यो आयो। मै जद जद टीबा मे घूमण जाया करूं हूं जदे ई कोई न कोई ऊचो सो टीबो ढूढ अर बीं के ऊपर बैठ रे चारू कानी की प्राकृतिक छटा ने देख्या करूं हू[5]।

—नागर पान

३—"आसोज रो महीनो। नान्हीं सी क एक बदली ओसरगी। देवड़ वाले रो अलगोजो गूज उठ्या। रिमझिम रिमझिम मेवलो बरसे। अतरै में ही अचाण चूको पूवरो एक लहरो आयो अर बदली उड़गी। करड़ी सावड़ी निकल आई। खेत में निनाण करतो करसो बोल्यो आसोज्यां रा तप्ता

. . . .

१—पचराज · भाग २ अक १
२—पचराज : भाग २ अक ४–५ पृ० १२६
३—राजस्थानी भाग ३ अक १ पृ० ६४
४—कल्पना : वर्ष ४ अक ३ पृ० २१७
५—राजस्थानी भाग ३, अक १ पृ० ६४

तावड़ा काचा लोहा पिघल ग्या। मिनख री जवान में कठेई बलकोनी।
—श्री कन्हैयालाल सेठिया

भाषण

अन्यान्य गद्य रचनाओं में ठाकुर रामसिह और अगरचंद नाहटा के अभिभाषण उल्लेखनीय हैं। ठाकुर श्री रामसिह बीकानेर के निवासी हैं इनका जन्म सं० १६५६ में तवर राजपूत वंश में हुआ। ये हिन्दी और। सस्कृत के एम० ए० तथा संस्कृत, हिन्दी और राजस्थानी के विद्वान हैं। ये स० २००१ में अखिल भारतीय राजस्थानी साहित्य सम्मेलन, दिनाजपुर के प्रथम अधिवेशन के सभापति निर्वाचित हुये, इसी पद से इनका राजस्थानी में दिया हुआ भाषण प्रकाशित हुआ।

"ओ ख्याल बिलकुल ही झूठो है कै प्रान्तीय भाषा सूं राष्ट्रीयता री भावना नै नुकसाण पूगै। प्रान्तीय भासावां री उन्नती सूं राष्ट्रीयता नै नुकसाण पूगणों तो दूर रयो उलटी बा सबल और पुस्ट हुवै। इण बात रो परतक उदाहरण आज रूस रो है। रूस में रूसी राष्ट्रभाषा है पण प्रांतीय भासावां भी उठै फल फूल रही हैं। रूस रा नेता प्रान्तीय भासावां रो नास को करयो नी उलटी जकी भासावा नास हो रही बां रो उद्धार करयो[1]।"

श्री अगरचन्द नाहटा राजस्थानी के प्रसिद्ध अन्वेषक एव पोषक है। इनका जन्म स० १६६७ में हुआ। पांचवीं कक्षा तक इनको पाठशाला की शिक्षा मिली। स० १६८५ वि० में श्री कृपाचन्द्र सूरि ने इनके यहां चातुर्मास किया। इनके उपदेश एवं प्रेरणा से इनका ध्यान राजस्थानी साहित्य की ओर गया। तभी से ये इस कार्य को बड़े अध्यवसाय एव रुचि के साथ करते आ रहे है। इन दो दशाब्दियों में इन्होंने बड़े परिश्रम से हस्तलिखित तथा मुद्रित ग्रंथों के विशाल पुस्तकालय तथा कला भवन की स्थापना की। ये जैन साहित्य, प्राचीन साहित्य एवं राजस्थानी साहित्य के प्रकाण्ड विद्वान है। खोज सम्बन्धी सैकड़ों ही निबन्ध आपने लिखे है जिनमें ५०० से ऊपर हिन्दी, गुजराती तथा राजस्थानी की विविध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके है। राजस्थानी में लिखित आपके दो भाषण महत्वपूर्ण है —

१—बीकानेर साहित्य सम्मेलन के रतनगढ़ अधिवेशन में राजस्थानी

....

१—सभापति का भाषण पृ० २१ सं० २००१

परिषद् के सभापति पद से दिया हुआ भाषण ।

२—उदयपुर के राजस्थान विश्वविद्या पीठ के तत्वावधान में सूर्यमल व्यास पीठ से दी हुई भाषण माला के तीन भाषण ।

उदाहरण–

राजस्थानी जैन-साहित्य मरुभाषा में बणियो है । इसमें श्वेताम्बर सम्प्रदाय–खरतरगच्छीय विद्वानां रो साहित अधिक है । अर वैरो प्रभाव व्यक्तियां के विहार मारवाड़ में ई अधिक अने इयां भी मारवाड़ी भाषा राजस्थान री प्रसिद्ध साहित री भाषा है ई । कई दिगम्बर विद्वानां ढूंढाडी भाषा में भी साहित रो निर्माण कियो है क्यों कै इयै सम्प्रदाय रो जोर जैपुर कोटे आदि री तरफ ई रयो है ।[1]

पत्र-पत्रिकाये

इस काल में राजस्थानी की निम्नलिखित पत्र-पत्रिकाये प्रकाशित हुई–

पंचराज

पचराज (मासिक) का प्रकाशन सं० १९७२ मे हुआ । यह पत्र द्वैभाषिक था । हिन्दी और राजस्थानी दोनों की रचनायें इसमें छपती थीं । श्री कलंत्री ने नासिक से इसको प्रकाशित किया । समाज-सुधार, जातीय-उत्थान, राजस्थानी-भाषा-प्रचार आदि इसका उद्देश्य रहा । यह ६–७ वर्षों तक बड़ी सज-धज के साथ निकलता रहा । रगीन चित्र एव व्यग चित्रों से यह जनता का ध्यान आकर्षित करता रहा । राजस्थानी के प्रचार कार्य मे इस पत्र ने बहुत सहायता की ।

मारवाड़ी हितकारक

यह पत्र बराड़ के धापण गांव से श्री छोटेलाल शुक्ल के सम्पादकत्व (स० १९७५ के आसपास) मे प्रकाशित होता रहा । इस पत्र के द्वारा राजस्थानी लेखकों का अच्छा मण्डल तैयार हो गया था जिसका उद्देश्य मारवाड़ी भाषा का प्रचार करना तथा पुस्तके आदि निकालना था । इस मडल के उत्साही सेठ श्री नारायण जी अग्रवाल थे ।

.. . .

१—शोध पत्रिका भाग ४ अक ४ पृ० ९–१०

आगीवाण (पाक्षिक)

यह पाक्षिक श्री बालकृष्ण उपाध्याय के सम्पादन में ब्यावर से सं० १६६० में प्रकाशित हुआ। यह राष्ट्रीय पत्र था। हिन्दी और राजस्थानी इस पत्र की भाषा थीं।

जागती जोत (साप्ताहिक)

यह साप्ताहिक सं० २००४ मे कलकत्ता (१४३ काटन स्ट्रीट) से प्रकाशित हुआ। श्री युगल इसके सम्पादक थे। समाज सुधार इसका प्रधान उद्देश्य था। बंद हो जाने पर जयपुर से इस नाम का दैनिक होकर यह पत्र निकला किन्तु अधिक नही चल सका।

मारवाड़ (साप्ताहिक)

यह पत्र स० २००० मे प्रकाश में आया। श्री वृद्धिचन्द बेड़वाला ने जोधपुर से इसका सम्पादन किया पर यह भी अधिक दिनों तक नही चल सका। श्री श्रीमंतकुमार के सम्पादकत्व में सं० २००४ में "मारवाडी" नाम का पत्र निकल कर थोडे समय में ही बन्द हो गया।

ये सभी पत्र-पत्रिकायें राजस्थानियों की उदासीनता के कारण अधिक नहीं चल सकीं।

शोध-पत्र

इसी समय राजस्थानी के शोध सम्बन्धी पत्र भी प्रकाशित किये गये जिनका उद्देश्य राजस्थानी के प्राचीन साहित्य की शोध एव नवीन साहित्य रचना को प्रोत्साहन देना था। इन पत्रों के नाम इस प्रकार हैं—

राजस्थान

यह पत्र राजस्थान रिसर्च सोसाइटी, कलकत्ता की ओर से प्रकाशित किया गया। इसके सम्पादक श्री किशोरसिंह बार्हस्पत्य थे। दो वर्ष चलने के उपरान्त यह पत्र बन्द हो गया।

राजस्थानी

राजस्थान के बन्द हो जाने पर श्री सूर्यकरण पारीक के प्रयत्नों से

उनके सम्पादकत्व में यह पत्र निकला किन्तु प्रथमांक के छपकर तैयार होने के बाद ही उनका देहावसान हो गया। उनके मित्रों ने इस अंक को वर्ष भर चलाया।

राजस्थानी (त्रैमासिक)

राजस्थान रिसर्च सोसाइटी कलकत्ता का त्रैमासिक मुखपत्र "राजस्थानी" श्री शम्भूदयाल सक्सेना एवं श्री अगरचन्द नाहटा के सम्पादकत्व में स० १९९५ मे प्रकाशित हुआ। इस पत्र के द्वारा राजस्थानी का प्राचीन साहित्य प्रकाश में आया तथा इसने कई नवीन साहित्यकारों को प्रोत्साहित किया।

मरुभारती

यह राजस्थान हिन्दी साहित्य सम्मेलन की राजस्थानी साहित्य और सस्कृति पर चतुर्मासिक शोध पत्रिका है। सर्व श्री अगरचन्द नाहटा, झाबरमल शर्मा, कन्हैयालाल सहल एव डा० सुधीन्द्र इसके सम्पादक थे।

राजस्थान - साहित्य

यह राजस्थान हिन्दी साहित्य सम्मेलन का पत्र था जो श्री जनार्दन नागर, उदयपुर के प्रयत्नों से निकला किन्तु आर्थिक कठिनाइयों के कारण नहीं चल सका।

चारण

यह अखिल भारतीय चारण सम्मेलन का मुखपत्र था जिस को श्री ईसरदान आसिया और खेतसी मिश्रण ने सम्पादित किया। किन्तु अर्थाभाव के कारण यह कुछ समय चलकर बद हो गया।

राजस्थान - भारती

यह स० २००३ में सादूल राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट (बीकानेर) का मुख पत्र है। सर्व श्री डा० दशरथ शर्मा एम० ए० डी लिट, अगरचन्द नाहटा तथा नरोत्तमदास स्वामी के सम्पादकत्व मे यह पत्र प्रकाशित हुआ। राजस्थानी लोक साहित्य, प्राचीन साहित्य तथा आधुनिक साहित्य का प्रकाशन इस पत्र ने किया। राजस्थानी के अतिरिक्त हिन्दी-साहित्य के खोजपूर्ण निबन्ध इस पत्र में प्रकाशित होते हैं। आज भी यह पत्र हिन्दी तथा राजस्थानी की सेवा कर रहा है।

शोध-पत्रिका (त्रैमासिक)

यह त्रैमासिक पत्रिका साहित्य संस्थान, उदयपुर द्वारा प्रकाशित है। सर्व श्री डा० रघुवीरसिंह, अगरचंद नाहटा कन्हैयालाल सहल तथा डा० सुधीन्द्र ने इसका सम्पादन कार्य किया। हिन्दी और राजस्थानी साहित्य की शोध इसका प्रधान लक्ष्य है। अपनी शोध सम्बन्धी सेवाओं के आधार पर आज यह अपना महत्व सिद्ध कर चुकी है।

मरुवाणी

प० रावत सारस्वत जयपुर से इसका प्रकाशन कर रहे हैं।

उपसंहार

इस प्रकार मध्यकाल में गद्य साहित्य का विकास जिस मार्ग पर हुआ आधुनिक काल में वह मार्ग बदल गया। समाज-सुधार तथा राष्ट्र जागरण के गीत राजस्थान में गाये जाने लगे। इस क्षेत्र में गद्य साहित्य ने भी बहुत सहायता दी। आरम्भिक नाटकों में समाज-सुधार की भावना का ही स्पन्दन प्रधानतया मिलता है। कहानियों की कथा वस्तु भी नया बाना पहिन कर आई। पूंजीवाद तथा सामंतवाद जो वर्तमान की ज्वलंत समस्यायें हैं राजस्थानी कहानियों में भी इनके विरुद्ध आन्दोलन की आवाज सुनाई देने लगी है। प्रगतिवाद या दलित वर्ग से सहानुभति रखने वाली गद्य रचनायें इस काल की अपूर्व देन हैं। रेखाचित्र एवं सस्मरण के प्रयोग नये होने पर भी उनमें प्रौढ़ता के लक्षण दिखाई देने लगे हैं। गद्य काव्य में पद्य की सी मधुरता आने लगी है। इनको किसी भी भाषा के सम्मुख तुलना के लिये रखा जा सकता है। राजस्थानी में समालोचना - साहित्य का पूर्ण अभाव है। निबन्ध बहुत ही कम लिखे गये हैं जो लिखे गये हैं वे सब या तो विवरणात्मक हैं या वर्णनात्मक। गवेषणात्मक, भावात्मक लेखों का अभाव है। इस क्षेत्र में नवीन प्रयास किये जा रहे हैं।

नवयुवकों का ध्यान भी राजस्थानी-गद्य-साहित्य क प्रणयन की ओर जाने लगा है। अब उनकी भावनाये बदल रही हैं। राजस्थानी का उत्थान एवं उसमें रचना करने की प्रेरणा उनको मिल रही है। इससे आशा की जा सकती है कि निकट भविष्य मे राजस्थानी-साहित्य अपनी उपयोगिता को प्रकट कर सकेगा।

इस गद्य के युग मे जब कि हिन्दी-गद्य का विकास सर्वतोमुखी हो रहा है राजस्थानी के गद्य लेखक भी अपनी प्रतिभा के प्रयोग कर रहे हैं।

आधुनिक-काल की वर्तमान प्रगति को देखते हुये कह सकते है कि राजस्थानी-गद्य-साहित्य का सर्वतोमुखी विकास बहुत शीघ्र ही हो सकेगा। उसकी उपयोगिता एव महत्ता देखने के लिये अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पडेगी। आज से ५०-६० वर्ष पूर्व जो गद्य-रचना के प्रयास हुए थे उनसे आज गद्य साहित्य का स्तर बहुत ही ऊपर उठ चुका है।

परिशिष्ट (क)

राजस्थानी गद्य के उदाहरण

सं० १३३० (आराधना)

सात नरक तणा नारकि, दशविध भवनपति, अष्टविध व्यतर, पचविध जोइपी द्वैविध वैमानिक देवा किं बहुना । दृष्ट अदृष्ट, ज्ञात अज्ञात, श्रुत अश्रुत, स्वजन परजन, मित्रु शत्रु, प्रत्यक्ष परोक्ष जै केइ जीव चतुरासी लक्ष योनि ऊपना चतुर्गति की ससारि भ्रमता मई हुमिया वञ्चिया सीरीविया हसिया निंदिया किलामिया दामिया पाछिया चूकिया भवि भवांतरि भवसति भवसहस्र भवलक्ष भवकोटि मनि वचनि काइ तीह सर्वहइ मिच्छामि दुक्कड ।

सं० १३३६ (बालशिक्षा)

लिगु ३ पुल्लिगु स्त्रीलिगु, नपुंसकलिगु, भलु पुल्लिग, भली स्त्री लिगु, भलुं नपु सकलिगु--

(स्यादि प्रक्रमम।)

सि एक वचनु, औ द्विवचनु, जस बहुवचनु

(कारक प्रक्रममां)

अथ प्रत्येक विभक्ति प्राप्ति माह्-करई लियई दियई इत्यादौ वर्तमाना——

सं० १३४० (अतिचार)

बारि भेदि तपु । छहि भेदि बाह्य अणसण इत्यादि, उपवास आंबिल नीविय एकासणु पुरिमड्ढ व्यासण यथा शक्ति तपु, तथा ऊनोदरितपु वृत्तिसखेवु । रस त्यागु कायकिलेसु सलेखना कीधी नहि तथा प्रत्याख्यान एकासणां विपुरिमड्ढ साढपोरिपि पोरिसभगु अतीचारु नीविय आंबलि उपवासि कीधइ विरासइ सचित्त पानीउ पीधउ हुयइ पक्ष दिवसमांहि ।

सं० १३५८ (व्याख्यानम्)

मंगलाणं च सव्वेसि पढमं होइ मगलं ॥८॥

ईणि ससारि दधि चंदन दूर्वादिक मंगलीक भणियउ। तीह मगलीक सर्वेही-माहि प्रथमु मंगलु एहु। ईणि कारणि शुभ कार्य आदि पहिलउं सुमरेवउ, जिव ति कार्य एह तणाई प्रभावइ वृद्धिमंता हुयइ। यउ नमस्कारु अतीत अनागत वर्तमान चउवीसी आदि जिनोक्त साह सु तुम्हे विसेपहइ हिवडा तणइ प्रस्तावि अर्थयुक्तु ध्येयु ध्यातव्यु गुणेवउ पढेवउ।

सं० १३५९ (सर्वतीर्थनमस्कारस्तवन)

अथ मनुष्यलोकि नंदिसर वरि दीपि बावन्न च्यारि कुण्डलवलि, च्यारि रुचकि वलि, च्यारि मनुष्योत्तरि पर्वति, च्यारि इखार पर्वनि, पच्यासी पाँच मेरे, वीस गजदंत पर्वति, दस कुर पर्वति, त्रीस सेलसिहरे, सरिसउ वैताढ्य पर्वत, एवं च्यारि सइ त्रिसट्ठि जिणालइ पडिमं, एवं आठ कोडि छप्पन्न लाख सत्ताणवइ सहस च्यारि सइ छियासिया तियलुक्के शास्वतानि महा-मदिर त्रिकाल तीह नमस्कारु करउ॥

स० १३६९ (अतिचार)

हिव दुक्कतगरिहा करउ। जु अणादि ससार मांहि हींडतइ हूतइ ईणि जीवि मिथ्यात्वु प्रवर्तावि‌उ। कुतिर्थु सस्थापिउ, कुमार्ग प्ररूपिउ, सन्मार्ग अवलापिउ। हिवु ऊपाजि मेल्हि सरीरु कुटुम्बु जु पापि प्रवर्तिउ, जि अधिगरण हलऊ खल घरट घरटी खांडा कटारी अरहट्ट पावटा कुप तलाव कीधां, तीर्थजात्रा, रथजात्रा कीधी पुस्तक लिखाव्यां, साधर्मिकवच्छल्ल कीधां तप नीयम देव वंदन वांदणाइ अनेराइ धर्मानुष्टान तणइ विपइ जु ऊजमु कीधउ

चौदहवीं शताब्दी (विक्रमी) का आरम्भ

(धनपाल कथा)

उज्जयनी नामि नगरी। तहिठे भौजदेवु राजा। तीयहि-तणइ पचह सयह पंडितह मांहि मुख्यु धनपाल नामि पडितु। तीयहि तणइ घरि अन्यदा कदाचित साधु विहरण निमित्तु पइठा। पंडितहणी भार्या त्रीजा दिवसहणी दधि लेउ ऊठी। बीजनुं काई त्रिणि प्रस्तावि व्रतिया विहरावण सारीखेऊ न हूंतउ व्रतिया भणियउं। केता दिवसह णी दधि। तिणि ब्राह्मणी भणियउ

त्रीजा दिवसह णी दधि । महामुनिहि भणियउं त्रीजा दिवसह णी दधि न उपगरी ।

चौदहवीं शताब्दी (तत्वविचार प्रकरण)

जीव किसा होहि चित्तु चेतना सञ्ज्ञा जाहं हुइ ति जीव भणियहिं । ते पुणु अनेक विधि हुंहि । इत्थे पुणु पच विधु अधिकारु - ऐकेन्द्रिय बेइंद्रिय, तिइंद्रिय चउरिन्द्रिय पचेन्द्रिय जि ऐकेंद्रिय ति दुविधा सूक्ष्म, वादर । वादर ति मोकला । बे इंद्रियादिक वादर । सकल्प ज मनि वचनि काहइ न हणउ न हणावउ आरभु सापराधु मौकलउ । एउ पहिलउ अणुव्रत्तु ।।२।।

सं० १४११ (षडावश्यक बालावबोध)

वसतपुर नामि नगरु । जिणदासु नामि श्रावकु । तेह तणउ महेसरदत्त नामि मित्रु । जिणदासु आगास गामिणी विद्या तणय बलि नंदीश्वरि द्वीपि शाश्वत चैत्य वांदिवा गयउ । आविउ हू तउ महेसरदत्ति भणिउ मित्र ताहरइ देहि अपूर्व सुगन्धु गधाइ । तिणि नदीश्वर-यात्रा-वृत्तान्तु काहिउ । तउ महेसरदत्तु भणइ मूरहइ पुणि आकाश गामिनी विद्या आपि तउ अतिनिर्बंधि कीधइ हूंतइ जिणदासि महेसरदत्त रहइ विद्या दीधी ।

सं० १४४६ (गणितसार)

किसा जु परमेश्वरु कैलाश शिपरु मगनु, पारवती हृदय रमणु, विश्वनाथु । जिण विश्व नीपजाविउ तसु नमस्कारु करीउ । बालावबोधनार्थे बाल भणीहि अज्ञान तीह अवबोध जाणिवा तणउ अर्थि, अत्मीय यशोवृद्धयर्थु श्री धराचार्यु गणितु प्रकटीकृतु ।

सं० १४५० (मुग्धावबोध औक्तिक)

जेहनइ कारणि क्रिया कर्त्ता कर्म्म हुइ । अनइ जह रहइ, दान दीजइ, कोप कीजइ, तिहा सम्प्रदान चतुर्थी । विवेकिउ मोक्षनइं कारणि खपइ । खपइ इसी क्रिया इत्यादि । क्रिया कर्त्ता कर्म्म पूर्ववत् कउणनइ कारणि मोक्षनइं । तिहां तादर्थ्ये चतुर्थी ।

सं० १४६६ (श्रावक व्रतादि अतिचार)

पढ़वइ गुणवइ विनय वेयावच्चि देवपूजा सामाजिक पोसहि दान शील तप भावनादिकि धर्मकृत्य मन वचन काय तणउ छतउ बल छतउं वीर्य

गोपविउ। खमासरण दीधा नहीं। वांदणाना आवर्त विधिइं साचविया नहीं। बइठां पडिक्कमणं कीधउ। वीर्याचार अनेरु ज को अतिचार।

सं० १४७५ (गणित पंचविंशतिका बालावबोध)

मकर संक्रांति थकी वस्न जाणि दिन एकत्र करी त्रिगुणा कीजइं। पछइं पनरसइत्रीसां मांहि घातीइ अनइ साठि भाग दीजइ दिनमान लाभइ।

सं० १४७५ (अचलदास खीची री वचनिका)

कुल वंस वधारै, साथ सुधारै, तीन पख तारै।
महाराज, सतयां पर मोह कीजै, आपणी कर लीजै।
महाराजा गढ़ रिणथंभरि अलावदीन पातसाह अड्या,
राव हंमीर बारह बरस विग्रह लड़्या।
पातसाह परदल खूटा, दिमान तूटा, गढ़ टूटा।
बोलियौ वगड़ी सूर साह,
दूसरो विजैराव,
घंण दला दियण घाव।
वह तो आपणी त्यागै, ओडिया तन आंणी आगै।
जुघ जुड़ै कुलण जागै, राव ताल्हण अरथ लागे॥

सं० १४७८ (पृथ्वी चरित्र)

तिहां छइ नगरी अयोध्या। किसी ते नगरी धनकनक समृद्ध, पृथ्वी पीठि प्रसिद्ध। अत्यन्त रमणीय, सकललोक स्पृहणीय। पृथ्वी रूपिणी कामिनी रहइ तिलकायमान, सर्व सौन्दर्य निधान। लक्ष्मी लीला निवास, सरस्वती तणउ आवास। अतुल देव कुलि मंडित, परचक्रि अखंडित। सदा सुठाकुरि पालित, रमणीय राजमार्गि शोभित, उत्तंग प्राकारवेष्ठित। सदा आश्चर्य तणउ निलय, वसुधा वनितावलय। निरुपम नागरिक तणउं ठाम, मनोभिराम। जनित दुर्जन क्षोभ, सज्जनोत्थापित शोभ। पुरुष रत्नोत्पत्ति रोहिणाचल, कुल वधू कल्पलता रत्नाचल।

१४८२ (जैन-गुर्वावली)

चारित्र लक्ष्मी कंठ कंदलहार, निरुपम ज्ञान भण्डार
सकल सूरशिरोमणि, श्री तपोगच्छ नभोमणि

कुवादित मतगज सीह, निर्मल क्रियावत माहि लीह
चउद विद्या आगर, गंभीरिम तर्जित सागर
अज्ञान तिमिर निराकरण सूर, कषाय दावानल वारिपूर
निजदेशना विबोधितानेक देश जन, निजगुण लक्ष्मीप्रणीत सज्जन ।
नवकल्प विहार, बइतालीस दोष वर्जित आहार
श्री जिन शासन शृंगार, युग प्रधानावतार—

सं० १४८५ (उपदेशमाला बालावबोध)

पाडलीपुरि धन सार्थवहनइ घरि रही महासतीनइं मुखि श्री वयर-स्वामिना गुण सांभली सार्थवाहनी बेटी इसी प्रतिज्ञा करइं आंणइ भवि श्री-वयरस्वामि टाली बीजनउ पाणिग्रहण न करउं इसी एक वार श्री वयरस्वामी तीणइ नगरि पाउधारिया । धन सार्थवाह अनेक सुवर्ण रत्ननी कोडि सहित आपणी कन्या लेई श्री वयरस्वामि कन्हइ आविउ । भगवति ते सार्थवाह बूझविउ । तेहनी बेटी बूझवी दीक्षा लेवरावी, लगारइ मनि लोभ नाणिउ ।

सं० १४९७ (संग्रहणी बालावबोध)

असुर कुमार माही विइन्द्र केहा एक चमरेन्द्र बीजू बलेन्द्र, नागकुमार माहीं वि इ द्र केहा धरणेन्द्र बीजू भूतानन्द । सुवर्णकुमार माहीं बिइन्द्र केहा वेणु देव १ वुणुदाली २ । विद्यत्कुमार माहीं विइन्द्र केहा हरिकन्त १ हरिस्सह २ ।

पन्द्रहवीं शताब्दी (उत्तरार्द्ध)

चाणक्य ब्राह्मण चन्द्रगुप्त क्षत्रीपुत्र राज्य योग्य भणी संगठियो छइं अनइं एक पर्वतक राजा मित्र कीधयो छइ । तेहनइं बलि चाणक्य कटक करी पाडलिपुरि आवी नदराय काढी राज्य लीधउ। पर्वतक-अर्ध राज्यनु लेणहार भणी एक नदरायनी बेटी तक्षणे करी विषकन्या जाणी नइं परणा-विओ, चन्द्रगुप्त विसना उपचार करतओ वारिओ। तिम अनेराइं आपणां काज सरिया पूठि मित्र हुइ अनर्थ करइ ।

—उपदेशमाला बालावबोध

वेणातट नगरि मूलदेव राजा । एक वार लोके विनविउ स्वामी को एक चोर नगर मूसइ छइ, पुण चोर जाणीर नहीं । राजहि कहिउ-थोड़ा दिहाडा माहि चोर प्रगटि करिसु तम्हे असमाधि न करिसउ । पछइ राजाइं तलार तेडी हाकिउ । तलार कहइ मइं अनेक उपाय कीधा पुण ते चोर धराइ

नहीं। पछइ राजा आपण पइं रात्रिइं नीलउ पउलउ पहिरि नगर बाहरि जे जे चौर ने स्थान के फिरने, चार जोवउ एकइं स्थान कि जइ सूतउ। तेतलइं पाडिक चोरइं दीठउ जगाविउ पूछिउ-कउण तउ, तीणि कहिउं-हुं कापडी भीषारी। मंडिक चोर कहिउं आवि तउं मूं साथिइं जिम तुहइं लक्ष्मीवंत करउ। —योगशास्त्र बालावबोध

सं० १५०१ (षडावश्यक बालावबोध)

बासति नगरी, कीर्तिपाल राजा, भीम वेटउ, राजा नइ मित्र सिघ श्रेष्टि। एक बार दूत एक आवी राजा हइं वीनवइ। स्वामी नागपुरि नगरि नागचन्द्र राजा तणउ गुणमाला कन्या। ते ताहरा पुत्रहइं। देव वाछइं प्रसाद करउ। पुत्र मोकलउ। राजा सिघश्रेष्टि नइ कहिउं। जाउ कुमारनउ विवाहमहोत्सव करि आवउ। श्रेष्टि कहइ नागपुर इहां थकउ सो जोअण झाम्फेड़उ हुइं मझ रह तउ सौ जोअण ८पहरउ जावा नोम छइ। तेह भणी नहीं जाउं। राजा कुपिउ कहइ जउ नहि जांअ तउ तुंहहइं ऊटे घाली जोअण सहस परइं मूकाविसु।

सं० १५२५ (शीलोपदेशमाला)

जाणै बूझै यथोक्त बीतरागनो भाख्यो मार्ग ते किसौ एकलो जांणि ज रहे अनराइ जीव आगलि धर्म्म नो तत्व कहे उपदिसे अनें बारे भावना आपणे चित्त भावे अने भव ससार ना जे अनेक जरा मरण जन्मादिक भय छै तेह थका घणू बीहें तिणे करी कायर छे एहवा हूंती शील व्रत ने अगीकार करी पाली नसकै ये अक्षरार्थ कह्यो।

सं० १५३० (षडावश्यक बालावबोध)

बीजइं अणुव्रति परि० थूल मोटो अलीक वचन जिणइं करी अपकीर्ति थाइं ते पांचे प्रकारे हुंइ। पहिलो कन्यालीक, जे निर्दोस कन्या सदोस काहे अथवा सदोस निर्दोस कहइं ते कन्यालीक एतले द्विपद विपइय्यो कुड़ो जाणवो ।११।। बीजो गवालीक-दोभी गायनइं चतुष्पद विपइय्यौ कूडो सर्व एह माहि आवइं। त्रीजो भूम्यलीक- पारकी भुइं आपणी कहइं। द्रव्यादिक विपइय्यो कूडो एह माहि आवइ।

सं० १५३५ (वाग्भटालंकार बालावबोध)

कवीश्वर काव्य करइ। कीर्तिनइ अर्थि। साधु दोप रहित शोभन छइं

जे शब्द नइ अर्थ तेह तणु सदर्भ रचना विशेष छइ । गुण सौदर्यादिक अलकार उपमादिक तेहि भूपित अलकृत छइ । स्फुट प्रकट छइ जे रीति पांचाल्यादिक अनइ रस शृगारादिक तेहि उपेत संयुक्त छइ ।

सं० १५४८ (जिनसमुद्रसूरि की वचनिका)

मोटइ साहस कीधउ, वडउ पवाडउ पसीधउ, वदी छोड़ावी तउ, इग्यारस तणउ पारणउ कीधउ । किन दातार रिण भूझार बाचा अविचल, कोटि कटक धन सबल । घूहड़िया भाल जगमाल वीरम चउडा रिणमल कुलमडण, श्री योधराणां नदण + + + । प्रतापी प्रचण्ड । आण अखंड । राजाधिराज, सारइ सर्व काज ।

सं० १५६६ (गौतमपृच्छा वालावबोध)

स्वस्तिमती नामि नगरी तिहां धनवतराज मानीतउ पद्मश्रेष्ठि वसइ । ते श्रेष्ठि सत्यवादी निम्मीय पुन्यवत, विनयवत, न्यायवत छइ । तेहनइ पद्मनी नाम भार्या रूपवत पुणि कर्म्मनइ योगि काहलउ स्वर हूअउ । ते स्त्री कपट कूड़ घणउ करइ । हिवइ ते स्त्री नइ मुख अशुभ कर्म लगि अनेक रोग ऊपना । श्रेष्ठि घणा उपचार करावइ गुण न ऊपजइ । एकदा तीणि स्त्री माया करतीइ पद्मश्रेष्ठि नइ आग्रह कह्येउ तिम करी जिम नवी स्त्री नउ पाणि ग्रहण करउ ।

सोलहवीं शताब्दी (उत्तरार्द्ध)

इसी परि श्री कर्ण दूदा आगलि गाई हरखित थाई
रूड़ी बुद्धि उपाइ कहवा लागउ खाई, अम्हे ताहरा ज खाई,
राखि अम्हां-सउ सगाई ।
अचरज उरही आपि, रिस-वर म सतापि,
अम्ह कइ मोटा करि थापि, सकल श्रावक नी आरित कांपि ।

—शान्तिसागर सूरि की वचनिका

हिव तेहना नाम कहइ छइ । ते अनुक्रमइ जाणिवा । नारी समान पुरुष नइ अनेरउ अरि न थी इणि कारिणी नारि कहीयइ । नाना प्रकार कर्मइं करी पुरुष नइ मोहइ तिणि कारणि महिला कहियइ । अथवा महान्तकालनी उपजावण हार तिणि कारणि महिला कहीयइ । पुरुष नइं मत्त करइ मद चडवइ तिणि कारिणी प्रमदा कहियइ । पुरुष नइ हाव-

भात्रादिकइ करी माहइं तिणि कारणि रामा कहियइं । पुरुष नइं अंग ऊपरि अनुरक्त करइं तिणि कारणि अंगना कहियइं ।

—तंदुलवैयालीय

सं० १६०६ (साधुप्रतिक्रमण बालावबोध)

एव गुरुप्रति तेत्रीस आसातना सबन्धी जै अतिचार लागू ते पड़िक्कमुं। इम गुरु नी दृष्टि पालठी बांधइ । अटटहास करई । गुरु पाहीं सखर वस्त्र बावरइ । अण पूछि संथारइ । पडिक्कमणुं करता गुर पहिलूं काउसग्ग पारइ । आंगुलीइ कटका मोड़इ । आगलि पाछलि पडिक्कमइ । अवर्ण वाद वोलइ । रीस करइ । मुखराग भेदइ । इंगितादिक न जाणइं । रीस ऊपनइं पगे लागी न खमावइ । साहमूं न जाइ । ऊभू न थाइ । लाज भय न आणइं अनेराइ दोस तेत्रीस आसातना माहि अन्तभवइं ।

सं० १६३०

राठौड़ां री बंसावली (सीहै जी सूं कल्याणमल जी ताईं)

पछै वीरम जी री बइर भटियाणी चूंवडै जी नूं मेल्हि ने सती हुई। चांवड़ै जी नू धरती नू सांपि, ने ताहरा चारण अल्हौ लै नै काला ऊ गयो, नै गोगादेजी थल देवराज कन्हा रहा । पछै गोगादे जी मोटा हुवा । ताहरा जोइयां रौ हेरो कराडियौ ने जोइयो धीर दे पूगल भाटी राणकदे रै परणीज गयौ हुतौ ने वासिया गोगादेजी साथ करि नै जोइये दलै उपरि गया, सु दलौ सूवतो तेथ न रहै बीजी ठौड़ रहौ । पछै उवा ढाल गोगादे जी गया ताहरा घाउ वाहौ सु दलै रौ जाभाई दीकरी सुता हुता तांह नू वाहौ सु वाहण रा ऊघण वांस मांचौ वाढि ने बैउ मारिया ,

सं० १६३३ (कुतुबदीन साहजादे री वात)

पातसाह कू शिकार सूं बोत प्यार, शिकार बिना रहे न एक लिगार, पातसाह बूढा भया । सिकार खेलने से रहया तब शिकार का हुनर कीया मीर सिकार कू बुलाय लिया । वास की नली लीवी, एक एक बिसत लांबी कीबी । तिसमें एक एक मकड़ी रखावै, चांदणी की चादर बिछावै । उस बिसायत पर सखर नखावै । तिस पर मक्खी दौड़ आवे तब उस मक्खी पर मकड़ी छोड़ावै । मक्खियों का सिकार करवावै, पातसाह देख देख राजी रहे, सिकार की तम्हां न रहे ।

सं० १६८३ (षडावश्यक बालावबोध)

वली दुर्विनीत पुत्र शिष्य शिक्षा निमित्त क्रोध। सबल उपसर्ग थातां पणी अंगीकार कीधा जे व्रत लेने निर्वाह निमित्त मानू। व्रत लेवा वांछतो थको मां बाप प्रमुख कुटुम्ब पासी आदेश लेवा भणि कहइ। मइं आज रात्रि सुपण दीठो पणि कहइ अदीठो जे माहरउ अउखउ अल्प छइ। ते भणी हू दीक्षा लेईसि। ये माया तीन।

सं० १६८५ (कडूआ मत पट्टावली)

परमगुणनिधेय एकोन पचाशत्तम पदधारिणे श्री जिनचन्द्रसूरये नमः। कडुआमती नाग गच्छनी वार्ता पेठी बद्ध यथा श्रुत लिखीइ छई। तडोलाइ ग्रामे नागर ज्ञातीय वृद्ध शापाया मह श्री ५ कान्हजी भार्या बाई कनकादे स० १४६५ वर्षे पुत्र प्रसूतः नामतः मह कडूआ बाल्यतः प्रज्ञवान् स्तोक दिने भाई प्रमुख सूत्रां भणी चतुरपणइ आठमात्वर्ष थी हरिहर ना पद गध करइ केत लइकि दिनान्तर पल्लविक श्राद्ध मिल्यो।

सत्रहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध

ताहरां कुंवर श्री दलपतसिंघ जी री दृष्टि पड़ियो, दलपत कुंवर देखि अर राव दुरगै नूं कहियो जु औकटारो वाहै मानसिंघ नूं देखौ का सूं झालो। ताहरां राव दुरगै हाथ झालियौ।

—दलपत विलास

सीहो जी षेड़ गाव आय नै रहीया। पछै श्री द्वारिका जी री जात नु हालीया। वीच पाटण सोलकी मूलराज री रजवार, उठै डेरा कीया सु मूलराज चावौडां रो दोही तो चावोड़ा रे भाटी लाखे फुलाणी सुं वैर सु लाखे पेटे करण मै निवला घात दीया तै सुं राजरो धणी मूलराज हुवो। सु मूलराज सीहै जी सू मिलियो कहो मारे लाखे सु वैर छै, थे मारी मदद करो

—वीकानेर रे राठौड़ां री वात तथा वसावली

सं० १७१७ (वचनिका राठौड़ रतनसिंहजी महेसदासौत री)

तिण वेला दातार झूंझार राजा रतन मूछां
कर आघात वोलै।
वरुआर तौलै।

आगे लका कुरखेत महाभारथ हूआ
देव दाणव लड़ि मूआ।
चारिजुग कथा रही।
वेद व्यास वालमीक कही।
सु तीसरो महाभारथ आगम कहता गजेणि खेत
अगनि सोर गाजसी।
पवन बाजसी॥
गजबंध छत्रवध गजराज गुड़सी।
हिन्दू असुराइण लड़सी॥
तिका तौ वात साकावध आइ सिरैचढ़ी
दुइराह पातिसाहां री फोजां अड़ी
दिली रा भर भारत भुजे दिआ
कम धज मुदै किआ
वेद सासत्र वताया सु अवसाण आया।
उजेणि खेत धारा तीरथ धणी रो काम खित्री रो धरम साचवी जै
लोहां रा बोह सेलां रा धमका लीजै।
खांडांरी खाटखड़ि झारझड़ि डण्डाहणि खेलीजै
पातसाहां री गजघड़ां झड़ा ओझड़ां मारि ठेलीजै।

सं० १७८१ (वेगड़गच्छ पट्टावली)

.... तत्पट्टे श्री जिनपद्मसूरि सं० १३९० वर्षे श्री देरावरे पट्टाभिषे
वाला धवल सरस्वती वरलब्ध महाप्रधान थया।

तत्पट्टे श्री जिनलब्धिसूरि सं० १४०० वर्षे आसाढ़ वदि ६ दि
पट्टाभिषेक थया। तत्पट्टे श्री जिनचन्द्रसूरि सं० १४०६ वर्षे माह सुदी १
दिनै पट्टाभिषेक थया।

सं० १७८५ (कर्मग्रंथ बालावबोध)

केवली केवल समुद्घात करे तिहां बीजे १ छट्ठे सातवें ए ती
समयें। उदारिक मिश्र योगी हुइ तेहने योग्य प्रत्यइउ एक सातावेदनी
प्रकृति बंध हुइ मिथ्यात्वे १ अविरति २ कषायने अभावे शेष प्रकृति
बन्धाई। ३ औदारिक मिश्र कर्मयोगी नीपरे कर्मण योगी नो व

अठारहवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध

बूंदी सहर भापर भापर लगती बसे छै। रावला पर भापर रै आधो फरै छै। पिण माहे पांणी मामूर नहीं। सहर रो आयो बीजै भापर वलारो सहर लागतो काउ घणा वलारे भापर मे पाणी घणो। सहर माहे पाखती पाणी घणो। वड़ो तलाव सूरसागर तिण री मोरी छूटै छै। तिण सू बाग वाड़ी घणा पीवै। बागै आंबा फूलाद चपा घणा। सहर री वस्ती ऊनमान घर –वर ५०० वाणीयांरा, घर १००० बांमण विणजारां रा घर १००० पांछ भाई याही डागरा रा। राव भावसिह नु हमार जागीर मै इतरा परगना छै तिणांरा गाव ३१६।

सं० १८४४ (वीकानेर री ख्यात)

महाराजा सुजाणसिंघ जी सूं महाराजा गजसिघ जी तांई

मांहरी ढांढा री सु बुध थी नै बालक था नै भांग आरोगतां तरी तरगा उठती क्युं सोच विचार कियो नहीं तीण सु स० १७८१ मिति आसाढ सुध १३ रात रा सुतां नै छिद्र पाय चूक कियो सु हुणहार रा कारण पुठै वड़ो केहरवाणों हुवो

सं० १८९२ (नागौरी लुंकागच्छीय पट्टावली)

तत्पट्टे श्री शिवचंदसूरि स० १५२६ हुवा तिके शिथिलाचारी स्थान पकड़ी ने वैसीरहया। साधु रा व्यवहार मात्र सु रहित हुवा। सूत्र सिद्धान्त वांचे नहीं, रास भास वांचण मे लागा। ते एकदा अकस्मात शूल रोगे करी मृत्यु पाम्यो। तिणा माहे देवचन्दजी तो व्यसनी भांग अमल जरदो खावै। अर माणचन्द जी जतीरो आचार व्यवहार राखे।

सं० १९०९ (दयालदास की ख्यात)

पछै कमर वांधीज रावत जी वहीर हुवा। सू राजासर आया। अरु रावजी श्री जैतसी जी काम आया तिण समै सिरदार सारा आपणां ठिकाणां गया परा था। सु किता एक नूं विसनदास जी लिखावट करी। तिण माये लोक हजार छव मेलौ हुवौ। पीछे जोईये चावै धीगड़ रै नू सिहाणसू बुलायौ। तद चावौ फौज हजार आय सामल हुवौ। फौज हजार दस हुई।

हो तठे आया नै अठै बड़ो झगड़ो हुवौ। मारवाड़ रा राजपूत तीन सौ काम आया। अरु छाईस रजपूत कांधलौत काम आया। अरु किता एक मारवाड़ रा आज नीसरिया। नै रावजी री फतै हुई। अरु आण फेरी। घोड़ा दो सौ ऊंट सौ मारवाड़ा रा लूट में आया।

सं० १९१० (उदयपुर री ख्यात)

रावल श्री वैरसिंघ, राणी हाड़ी पुरबाई रा पुत्र वास चत्रकोट, सैन अश्व ७०००, हस्ती १४००, पदाद्त्ति ५०००, वजत्र ३००, राजा बड़ा परवत्र, सेवा करत समत्र १०२६ राज बैठो, मारवाड़रा धणी राव महाजल थी युध जीत षेत्र समर राजलोकराणी १६, खवास २. पुत्र ११, आयु वर्ष ३० मा० ६

उन्नीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध

प्रथम रुकमनी जी तिणरो पुत्र प्रद्युमन साक्षात श्री किसन सारिखौ। तिण मै दस हजार हाथियां रो बल। तिणरै पुत्र वज्र हुवौ। सो दुरवासा जी रा सराप सूं मुसल थी बचियो। वज्र रै पुत्र प्रतिवाहु। प्रतिवाहु रै पुत्र सुबाहु। उणरै रुकमसेन.। तिण रै श्रुतसेन हुवौ तिणरे पुत्र घणा हुवा।

(सं० १९२१)

जोधपुर रा महाराजा मानसिंघजी री तथा तखतसिंह जी री ख्यात

अर भींवनाथ जी उदेमंरवालां री राज रै काम में आग्या हालै सो सरब ओधा खिजमतां तथा जबती वाहाली तथा केद कर बिगाड़ण भींवनाथ जी रा बेटा लिखमीनाथ जी माहामंदर रा जिणाँ रै बाप बैटां रै आपस में मेल नहीं.... ...

सं० १९२७ (देस दर्पण)

फेर पलीतो तारीख १३ अक्टूबर सन् मचकूर कपतान फीरंच साहब इष्टंट साहब अजंट अजमेर रो श्री दरबार सामो आयो तै मै लीष्यो। लफटंट गवरनर जनरल कलारक साहब बहादुर सहसे होय बावलपुर तक तसरीफ ले जावेगे सो मोतमद हुसीयार वा लयाकत वा कुल इकत्यार सरसे नवाब साहब ममदु की खीदमत में जाय देने।

सं० १९६३ (बुढापा की सगाई)

वाह भाई - म्हे लोग विद्वान हो जाता तो फेर म्हासू ओ हमाली धधो नहीं होतो और चटकमटक माहे पड़कर बापदादा की सब कमाई खो बैठता, नही तो अठीने उठीने सरकारी नौकरी खोजता फिरता। अंगरेजी सीखणे सू शरीर नै खराबौ कर आंख्या गमा लेता। बूट पटलोन टोपी लगाकर आंख्यां माहे चस्मो घाल कर मू डा मांहे चिरुट लेकर साहेब बण जाता और जलदी धर्म भ्रष्ट होकर भिखारी बण जाता।

सं० १९७२ (कनकसुन्दर)

दोपहर दिन को बखत चार्याकानी लू चाल रही छै। हवा का जोर सू बालू अठी की उठी ने उड़ उड़ कर बीकां नवा नवा टीबा हो रह्या छै और भींजण भी रह्या छै। मु ह ऊचौ कर सामने चालणों मुस्कल छे। लू कपड़ा मांहे बढ कर सारा सरीर ने सिकताप कर रही छै। धूप इशी जोर की पड़ रही छै के जमी ऊपर पगदेणो मुस्कल छै। रास्ता मांहे दूर दूर कठे ही झाड को नांव नही। वालू उडकर जगां जगां नवा टीबा होणे सू रस्ता को ठिकाणो नही। आदमी तो दूर रस्ता मांहे कोई जीव जिनावर को भी दरसण नहीं।

सं० १९७३ (मारवाड़ी मोसर और सगाई जंजाल)

फतरा री आई सांची। भाऊ साहब। आप भी व्या का फदा मांहे आग्या दिखो जो। अजी! अ तो चुप लोगां ने बोलवां की बातां। खुद सीख्योडा का घरा मे देखो सब मारवाड़ी फ्याशन का व्याव हुयोड़ा छै। व्यां ने पूछो तो दादाजी यू कर दीनो आया जी व्यू कर दीनो इस्तरे का सतरा अडगा लगाकर आप खुद न्यारा होणा चावे, पण दूजा ने नाव रखवाने कमर बाध कर सबके अगाडी तैयार : भाऊ साहब थे तो लिख देवो के घरधराणों कन्या सब सोला आना छै। आप दूजो विचार जानना नहीं सगाई कर लेओ।

सं० १९७५ (सीता हरण)

रै नीच रावण! क्यू विना काम ही मन मे आवे सो 'बक रह्यो छै। गरमाई अग्नी ने त्याग देशी, शीतलता जल ने छोड़ देशी, क्षमा तपस्वियां ने परित्याग देशी पण हे रावण आ जनक कन्या राम ने कदापि नहीं

छोड़सी । तने सारा संसार को राज मिल जाशी, स्वर्ग में भी तेरी दुहाई फिर जाशी और पाताल में भी तेरी ही जय जयकार हो जाशी पण इण रामप्यार और रामपद में लोन जानकी पर तेरो अधिकार कदे भी नही होशी ।

सं० १९७६ (समाजोन्नति को मूलमंत्र)

आपणो समाज रोगी छै । या बात कबूल करवाने कोई इन्कार नहीं करसी । रोगी भी इशो नही महान रोगी छै । महान रोगी तो छे ही परन्तु वींका साथ साथ छोटा छोटा रोग भी अनेक रया करे छै । वैद्यराज जठां तक रोगी का मुख्य रोग को पत्तो तथा निदान नही जाणसी बठां ताईं बीकी दवा दारू काम देसी नही । बस, इशी ही दशा आपणा समाज की छै ।

सं० १९८८ (मारवाड़ी पंचनाटक)

नसीब की बात है । किसना की मा मर गई म्हाने दुख कर गइ । के वेरो थो मैं अवस्था में ये हाल हो ज्यांयगा । लुगाई बिना बुढापो कटणूं महामुस्कल है । बेटां की भू तो इबी से नाक मूंडा मोड़ने लाग गई । घर में जावां तो घर खावणे आवे है ।

सं० २००१ (भाषण)

ओ ख्याल बिल्कुल ही भूठो है कै प्रान्तीय भाषा सूं राष्ट्रीयता री भावना नै नुकसाण पूगै । प्रान्तीय भासावां री उन्नति सूं राष्ट्रीयता नै नुकसाण पूगणों तो दूर रयो उलटी वा सबल और पुस्ट हुवै । इण बात रो परतक्ष उदाहरण आज रूस रो है । रूस में रूसी राष्ट्रभाषा है पण प्रांतीय भासावां भी उठे बिसी फलफूल रही है । रूस रा नेता प्रान्तीय भासावा रो नास को कर्योनी उलटी जकी भासावां नास हो रही बांरा उद्धार कर्यों ।

सं० २००७ (संत सेठ श्री रामरतन जी डागा)

मतीरां री रुत में मतीरां रा ऊट रा ऊंट नाखीजता बिसत्रासी आदमी बारै ठाक्यां लगायेर कई में मोहर अर कई में रुपिया घालर पाछा ही मूंडो बन्द कर देवता । साधवों ने देवती बेला सेठ जी कैवता "महाराज मंडान का मीठा मतीरा है, खुद खाना बेचना मत" इण तरह गुप्तदान होतो हो ।

सं० २००८ (हरदास-दहीवालो)

घर में टाबर-टोली रामजी रो दान हो । माठै-मटकै चालतो जदेई तो धाको धकतो हो । मेह री रुत में हरदास गांव जातो, जठे इयारॉ पिता-पूरवी खेत हा । कचा टापरिया हा । लुगायां-टाबरां समैत वठै उठ जातो । सगलै खेत रै काम में जुट जांवता । डीलां सू मजूरी करता । टाबरां न वठै गायां भैसां रो दूध पीवरण नै मिलतो । हरी टांच रोही, हरा-हरा खेत । जियारी आ जाती । बारह महीने खावै जित्तो धानडो राखेर बाकी धान वेच देतो । चोखी रकम खड़ी हो जांवती । आ रकम व्यांव-टांकडा मे लागती । हरदास पक्को घर-लोचू हो ।

सं० २०१० (भाषण)

राजस्थानी-जैन-साहित मरुभापा में वणियो है । इसमें श्वेताम्बर सम्प्रदाय-अर खरतरगच्छीय विद्वाना-रो साहित अधिक है अर वैरो प्रभाव व्यक्तियां के विहार मारवाड़ मे ही अधिक हो । इया भी मारवाड़ी भापा राजस्थान री प्रसिद्ध साहित री भापा है ई । कई दिगम्बर विद्वानां ढूंढाड़ी भापा मे भी साहित रो निर्माण कियो है क्यों के इयै सम्प्रदाय रो जोर ऊंपुर कोटे आदि री तरफ-ई रयो है ।

परिशिष्ट (ख)

ग्रन्थ-सूची

साहित्य के इतिहास

१–हिन्दी साहित्य का आदि-काल : हजारीप्रसाद द्विवेदी
२–हिन्दी साहित्य का इतिहास : रामचन्द्र जी शुक्ल
३–मिश्र बन्धु विनोद : मिश्र बन्धु
४–जैन-साहित्य नो संक्षिप्त इतिहास : मोहनलाल दुलीचन्द देसाई
५–ऐतिहासिक-जैन-काव्य-सग्रह : अगरचन्द भँवरलाल नाहटा
६–गुजराती एण्ड इट्स लिटरेचर : के० एम० मुन्शी

भाषा के इतिहास

७–राजस्थानी भाषा और साहित्य : श्री मोतीलाल मेनारिया
८–भाषा रहस्य : श्यामसुन्दर दास
९–हिन्दी भाषा का इतिहास : धीरेन्द्र वर्मा
१०–राजस्थानी भाषा : सुनीतिकुमार चटर्जी
११–ओरिजिन एड डैवलपमेंट आफ बगाली लैंग्वैज : टैसीटोरी
१२–पुरानी हिन्दी : चन्द्रधर शर्मा गुलेरी
१३–एल० एस० आई० : श्री ग्रियर्सन

इतिहास

१४–नैणसी की ख्यात : श्री ओझा
१५–प्राचीन गूर्जर-काव्य-संग्रह
१६–जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथम भाग : श्री ओझा
१७–बीकानेर का इतिहास द्वितीय भाग : श्री ओझा
१८–दयालदास की ख्यात : सम्पादक डा० श्री दशरथ शर्मा

रिपोर्ट्स

२१–जे० पी० ए० एस० बी०
२२–प्रिलिमिनरी रिपोर्ट आन दी ओपरेशन इन सर्च आफ मेन्युस्क्रिप्ट्स आफ बार्डिक क्रोनीकल्स
२३–बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल सोसाइटी आफ राजपूताना रिपोर्ट सन् १९१९
२४–पांचवीं गुजराती साहित्य परिषद् की रिपोर्ट : श्री सी० डी० दलाल
२५–बारहवे गुजराती साहित्य सम्मेलन की रिपोर्ट : श्री भोगीलाल ज० सांडेसरा

कैटेलोग्स

२६–पाटन कैटेलौग आफ मेन्युस्क्रिप्ट्स
२७–ए डिस्क्रप्टिव कैटेलौग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स सेक्शन १ भाग १ जोधपुर स्टेट
२८–कैटेलौग आफ दी राजस्थानी मेन्युस्क्रिप्ट्स इन अनूप-संस्कृत लाइब्रेरी
२९–जैन गूर्जर कविओ प्रथम भाग
३०–जैन गूर्जर कविओ द्वितीय भाग
३१–जैन गूर्जर कविओ तृतीय भाग
३२–कैटेलौग आफ सरस्वती भवन, उदयपुर
३३–डेस्क्रिप्टिव कैटेलौग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स बार्डिक पोइट्री पार्ट फर्स्ट बीकानेर स्टेट

पत्र - पत्रिकायें

३४–राजस्थान भारती
३५–नागरी प्रचारिणी पत्रिका
३६–राजस्थानी
३७–कल्पना
३८–हिन्दुस्तानी
३९–जैन-सिद्धान्त-भास्कर
४०–जैन-भारती
४१–विश्व-भारती
४२–अनेकान्त
४३–पंचराज
४४–शोध-पत्रिका
४५–मारवाड़ी हितकारक
४६–आगीवाण
४७–जागती जोत
४८–मारवाड़
४९–राजस्थान

५०–मरुवाणी
५१–राजस्थान साहित्य
५२–चारण
५३–भारतीय विद्या
५४–जैन साहित्य सशोधक

भंडार (पुस्तकालय)

५५–अभय-जैन-पुस्तकालय बीकानेर
५६–क्षमाकल्याणज्ञान भडार, बीकानेर
५७–मुनि विनयसागर सग्रह, कोटा
५८–सघ भडार, बखत जी शेरी, पाटन
५९–डोसाभाई अभयचन्द संघ भडार, भावनगर
६०–भडारकर इस्टीट्यूट, पूना
६१–पुराना सघ भडार, पाटण
६२–विवेक विजय भडार, उदयपुर
६३–गोड़ीजी भडार, उदयपुर
६४–डू गरजी यति भडार, जैसलमेर
६५–पार्श्वनाथ भडार, जोधपुर
६६–सिद्ध-क्षेत्र साहित्य मन्दिर, पलीताना
६७–महिमा भक्ति भडार, बीकानेर
६८–लीमड़ी भडार तथा खेड़ा सघ भडार
६९–कस्तूरसागर भडार, भावनगर
७०–अनूप-सस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर

अन्य ग्रन्थ

७१–वीर सतसई
७२–कवि रत्नमाला
७३–राजस्थानी साहित्य की रूपरेखा
७४–डिंगल में वीर रस डा० मोतीलाल मेनारिया
७५–कुवलय माला, उद्योतन सूरि
७६–रसविलास : कविमछ
७७–पाबूप्रकाश : कवि मोडजी
७८–वंश भास्कर : श्री सूर्यमल
७९–बांकीदास ग्रन्थावली : बांकीदास
८०–ऊमर काव्य : ऊमरदान

८१–हमारा राजस्थान : श्री पृथ्वीसिह मेहता
८२–रघुनाथ रूपक : कवि मंछ
८३–भाषा विज्ञान : श्री श्यामसुन्दर दास
८४–वृत्तरत्नाकर
८५–भरत बाहुवली रास : ले० लालचन्द भगवानदास गांधी
८६–प्राचीन गूर्जर-काव्य-संग्रह
८७–प्राचीन गुजराती गद्य संदर्भ : सम्पादक मुनि जिनविजय
८८–पडावश्यक बालावबोध : श्री तरुणप्रभसूरि
८९–कविवर सूरचन्द्र और उनका साहित्य : ले० अगरचन्द नाहटा
९०–वृहद् कथाकोप : डा० श्री आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्याय
९१–रायल ऐशियाटिक सोसायटी, कलकत्ता : डा० श्री हर्मन जेकोबी
९२–दिगम्बर जैन ग्रंथ कर्त्ता और उनके ग्रंथ : नाथूराम प्रेमी
९३–विक्रम स्मृति ग्रंथ : श्री शान्तिचन्द द्विवेदी
९४–सोमसौभाग्य काव्य
९५–षष्ठिशतकप्रकरण : श्री नेमिचन्द्र
९६–योगप्रधान जिनदत्त सूरि : ले० अगरचन्द भंवरलाल नाहटा
९७–वचनिका रतनसिह राठौड़ महेसदासौत री, खिड़िया जग्गा री कही
९८–जैनाचार्य श्री आत्मानन्द जन्म शताब्दी स्मारक-ग्रंथ
९९–आत्माराम शताब्दी ग्रंथ
१००–युगप्रधान जिनचन्द्र सूरि : ले० अगरचन्द भंवरलाल नाहटा
१०१–एपीग्रेफिक इंडिका
१०२–जनरल एण्ड प्रोसीडिंग्स : एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल
१०३–इंडियन एन्टीक्वेरी

राजस्थानी के प्रकाशित गद्य-ग्रंथ

प्राचीन

१–मुहणोत नैणसी री ख्यात	ले० मुहणोत नैणसी
२–दयालदास री ख्यात	ले० दयालदास सिण्ढायच
३–चौबोली (कहानी)	स० कन्हैयालाल सहल
४–रतना हमीर री वात (कहानी)	ले० महाराजा मानसिह
५–नासकेत री कथा	क्रोसे द्वारा सपादित
६–रतन महेसदासोत री वचनिका	: खिड़िया जग्गा
७–मुग्धावबोध औक्तिक	केशव हर्षद ध्रुव द्वारा सपादित
८–भगवद्गीता (अनु०)	रामकरण आसोपा द्वारा अनुवादित
९–अमृत सागर	ले० महाराजा प्रतापसिह जी
१०–उपदेशमाला (तरुणप्रभसूरि की बालावबोध)	स० मुनि जिनविजय द्वारा सकलित और सपादित
११–पृथ्वीचन्द्र चरित (माणिक्यचन्द्र)	,, ,, ,,
१२–सम्यक्त्व कथा	,, ,, ,,
१३–अतिचार कथा	,, ,, ,,
१४–नमस्कार बालावबोध	,, ,, ,,
१५–औक्तिक प्रकरण	,, ,, ,,
१६–आराधना	,, ,, ,,
१७–सर्वतीर्थनमस्कार	,, ,, ,,
१८–उपदेशमाला बाला०	ले० नन्नसूरि

आधुनिक

१९–राजस्थानी वार्ता		ले० सूर्यकरण पारीक
२०–बोलावण (नाटक)		ले० सूर्यकरण पारीक
२१–मारवाड़ी मोसर सगाई जजाल	(नाटक)	लेखक श्री गुलाबचन्द नागौरी
२२–फाटका जजाल	,,	श्री शिवचन्द्र भरतिया
२३–बुढ़ापा की सगाई	,,	श्री ,, ,,
२४–केसर विलास	,,	श्री ,, ,,

२५–बालविवाह विदूषण	,,	श्री शोभाचन्द जम्मड़
२६–वृद्ध विवाह विदूषण	,,	,, ,,
२७–कलकतिया बाबू	,,	श्री भगवती प्रसाद दारूका
२८–ढलती फिरती छाया	,,	,, ,,
२९–सीठणा सुधार	,,	,, ,,
३०–बाल विवाह	,,	,, ,,
३१–वृद्ध विवाह	,,	,, ,,
३२–कलयुगी कृष्ण	,,	श्री बोलमित्र
३३–गांव सुधार या गोमा जाट	,,	श्रीयुत श्रीनाथमोदी
३४–कनकसुन्दर (उपन्यास)		श्री शिवचन्द्र भरतिया

मुद्रणाधीन

३५–राजस्थानी वातां	श्री नरोत्तमदास स्वामी
३६–बरस गांठ	श्री मुरलीधर व्यास

❀❀

राजस्थानी के अप्रकाशित गद्य-ग्रंथ

जैन रचनायें

	लेखक	समय विक्रमी संवत
३७–षडावश्यक बालावबोध	तरुणप्रभ सूरि	१४११
३८–व्याकरण चतुष्क बालावबोध	श्री मेरुतुंग सूरि (आं०)	
३९–तद्धित बालावबोध	श्री मेरुतुंग सूरि (आं०)	
४०–नवतत्व विवरण बालावबोध	श्री साधुरत्न सूरि (त०)	१४५६
४१–श्रावक वृहदतिचार बालावबोध	श्री जयशेखर सूरि (आ)	
४२–पृथ्वीचन्द्र चरित्र वाग्विलास	श्री माणिक्यसुन्दर सूरि	१४७८
४३–कल्याणमंदिर बालावबोध	श्री मुनिसुन्दर शि० (त०)	
४४–उपदेशमाला बालावबोध	श्री सोमसुन्दर सूरि	१४८५
४५–षष्ठिशतक बालावबोध	श्री सोमसुन्दर सूरि	१४९६
४६–सग्रहणी बालावबोध	श्री दयासिंह (वृ० त०)	१४९७
४७–षडावश्यक बालावबोध	श्री हेमहंस गणि (त०)	१५०१
४८–भवभावना बालावबोध	श्री माणिक्यसुन्दर गणि	१५०१

४६–गौतमपृच्छा बालावबोध	श्री जिनसूर (त०)	
५०–नवतत्व बालावबोध	श्री सोमसुन्दर सूरि	१५०२
५१–पर्यताराधना (आराधना पताका) बालावबोध	” ” ”	
५२–षडावश्यक बालावबोध	” ” ”	
५३–विचारग्रंथ बालावबोध	” ” ”	
५४–योगशास्त्र बालावबोध	” ” ”	
५५–पिडविशुद्धि बालावबोध	श्री सवेगदेव गणि (त०)	
५६–आवश्यक पीठिका बालावबोध	” ” ”	
५७–चउसरण टवा	” ” ”	
५८–षष्ठिशतक बालावबोध	धर्मदेवगणि	१५१५
५९–कल्पसूत्र बालावबोध	पासचन्द्र	१५१७
६०–चउसरण पयन्ना बालावबोध	श्री जयचन्द्र सूरि (त०)	१५१८
६१–शत्रुंजय स्तवन बालावबोध	श्री मेरु सुन्दर (ख)	१५१८
६२–क्षेत्र समास बालावबोध	श्री उदयवल्लभ सूरि (वृत०)	१५२०
६३–शीलोपदेशमाला बालावबोध	श्री मेरुसुन्दर (ख)	१५२५
६४–षड़ावश्यक सूत्र बालावबोध	” ”	१५२५
६५–षष्ठि शतक विवरण बालावबोध	” ”	
६६–योगशास्त्र बालावबोध	” ”	
६७–अजित शान्ति बालावबोध	” ”	
६८–श्रावक प्रतिक्रमण बालावबोध	” ”	
६९–भक्तामर बाला० (कथा सह)	” ”	
७०–सबोधसत्तरी	” ”	
७१–पुष्पमाला बालावबोध	” ”	१५२८
७२–भावारिवारण बालावबोध	” ”	
७३–वृत्तरत्नाकर बालावबोध	” ”	
७४–क्षेत्रसमास बालावबोध	श्री दयासिंह (वृ० त०)	१५२९
७५–भक्तामर स्तोत्र बालावबोध	श्री सोमसुन्दर सूरि (त०)	१५३०
७६–षड़ावश्यक बालावबोध	श्री राजवल्लभ	१५३०
७७–कल्प सूत्र बालावबोध	श्री हेम विमल सूरि (त०)	
७८–कर्पूर प्रकरण बालावबोध	श्री मेरु सुन्दर (ख०)	१५३४
७९–पच निर्ग्रंथी बालावबोध	” ”	
८०–सिद्धान्त सारोद्धार	श्री कमल सयम उ० (वृ०ख०)	१५५०

८१–भुवन केवली चरित्र	श्री हरि कलश	
८२–आचारांग बालावबोध	श्री पार्श्वचन्द्र (वृ० त०)	
८३–दशवैकालिक सूत्र बालावबोध	,, ,,	
८४–औपपातिक सूत्र बालावबोध	,, ,,	
८५–चउसरण प्रकीर्ण बालावबोध	,, ,,	
८६–जम्बू चरित्र बालावबोध	,, ,,	
८७–तंदुल वैयालिय पयन्ना बालावबोध	श्री पार्श्वचन्द्र (वृ० त०)	
८८–नवतत्व बालावबोध	,, ,,	
८९–दशवैकालिक बालावबोध	,, ,,	
९०–प्रश्नव्याकरण बालावबोध	,, ,,	
९१–भाषा ४२ भेद बालावबोध	,, ,,	
९२–राय पसेणी सूत्र बालावबोध	,, ,,	
९३–साधुप्रतिक्रमण बालावबोध	,, ,,	
९४–सूत्रकृतांग सूत्र बालावबोध	,, ,,	
९५–तुंदल विहारी बालावबोध	,, ,,	
९६–चर्चाओ बालावबोध	,, ,,	
९७–लोंका साथ १२२ बोल चर्चा	,, ,,	
९८–सस्तारक प्रकीर्णक बालावबोध	श्री समरचन्द	
९९–षडावश्यक बालावबोध	,, ,,	
१००–उत्तराध्ययन बालावबोध	,, ,,	
१०१-गौतम पृच्छा बालावबोध	श्री शिवसुन्दर	१५९९
१०२–सत्तरी कर्मग्रंथ बालावबोध	श्री कुम्भ (पार्श्चेन्द्र शि०)	
१०३–सत्तरी प्रकरण बालावबोध	श्री कुशलभुवन गणि	
१०४–सिद्ध हेम आख्यान बालावबोध	श्री गुणधीर गणि	
१०५–नवतत्व बालावबोध	श्री महीरत्न	
१०६–षडावश्यक बालावबोध	श्री उदय धवल	
१०७–षडावश्यक विवरण सक्षेपार्थ	श्री महिमा सागर (आं०)	
१०८–पासत्था विचार	श्री सुन्दरहस (त०)	
१०९–उपासक दशांग बालावबोध	श्री विवेक हस उ० लगभग	१६१०
११०–सप्त स्मरण बालावबोध	श्री साधुकीर्ति	१६११
१११-कल्प सूत्र बालावबोध	श्री सोमविमल सूरि	१६७५
११२–युगादि देशना बालावबोध	श्री चन्द्रधर्म गणि (त)	१६३३
११३–सम्यकत्व बालावबोध	श्री चारित्र सिंह (ख०)	१६३३

११४–लोकनाल बालावबोध	श्री जयविलास	१६४०
११५–प्रश्नोत्तर ग्रंथ	श्री जयसोम	१६५०
११६–प्रवचन सारोद्धार बालावबोध	श्री पद्मसुन्दर (ख०)	१६५१
११७–सग्रहणी टब्बार्थ	श्री नगर्षि (त०) लगभग	१६५३
११८–दशवैकालिक सूत्र बालावबोध	श्री श्रीपाल लगभग	१६६४
११९–लोकनालिका बालावबोध	श्री यशोविजय (त०)	१६६५
१२०–ज्ञाताधर्म सूत्र बालावबोध	श्री कनकसुन्दर गणि (वृ० त०)	
१२१–दशवैकालिक सूत्र बालावबोध	श्री कनकसुन्दर गणि	१६६६
१२२–कल्पसूत्र बालावबोध	श्री रामचन्द्र सूरि	१६६७
१२३–कर्म विपाक बालावबोध	श्री हीरचन्द (त०)	
१२४–कोकशास्त्र	श्री ज्ञानसोम	
१२५–सिद्धान्त हुंडी	श्री सहजकुशल	
१२६–साधु समाचारी	श्री मेघराज	१६६९
१२७–ऋषि मंडल बालावबोध	श्री श्रुत सागर	१६७०
१२८–राज प्रश्नीय उपांग बालावबोध	श्री मेघराज	१६७०
१२९–समवायाग सूत्र बालावबोध	,, ,,	
१३०–उत्तराध्ययन सूत्र बालावबोध	,, ,,	
१३१–औपपातिक सूत्र बालावबोध	,, ,,	
१३२–क्षेत्र समास बालावबोध	,, ,,	
१३३–सथार पयन्ना बालावबोध	श्री क्षेमराज	१६७४
१३४–सम्यक्त्व सप्ततिका पर सम्यक्त्व रत्नप्रकाश बाला०	श्री रत्नचन्द्र (त०)	१६७६
१३५–लोकनाल बालावबोध	श्री सहजरत्न	
१३६–क्षेत्र समास बालावबोध		१६७६
१३७–दशवैकालिक सूत्र बालावबोध	श्री राजचन्द्र सूरि	१६७८
१३८–षट् कर्म ग्रंथ (बंधस्वामित्व) बालावबोध	श्री मतिचन्द्र	
१३९–अंचल मत चर्चा	श्री हर्षलाभ उ०	
१४०–लघु सग्रहणी बालावबोध	श्री शिवनिधान	१६८०
१४१–कल्पसूत्र बालावबोध	,, ,,	
१४२–कटुक मत पट्टावली	कल्याणसार (कड़वागच्छ)	१६८५
१४३–षडावश्यक सूत्र बालावबोध	श्री समयसुन्दर	
१४४–ज्ञाता सूत्र बालावबोध	श्री विजयशेखर	
१४५–पृथ्वी राज कृष्ण वेलि बा०	श्री जयकीर्ति	१६८६

१४६–लखमसी कृत प्रश्नोत्तर संवाद	श्री मतिकीर्ति	१६६१
१४७–उत्तराध्ययन बालावबोध	श्री कमल लाभ (ख०)	
१४८–उपासक दशांग बालावबोध	श्री हर्ष वल्लभ	१६६२
१४९–गुणस्थान गर्भित जिन स्तवन बालावबोध	श्री शिवनिधान	१६६२
१५०–किसन रुकमणी री वेलि बाला०	,, ,,	
१५१–विधि प्रकाश	,, ,,	
१५२–कालिकाचार्य कथा	,, ,,	
१५३–चौमासी व्याख्यान	,, ,,	
१५४–योग शास्त्र टब्बा	,, ,,	
१५५–दशवैकालिक सूत्र बालावबोध,	श्री सोमविमल सूरि	
१५६–प्रतिक्रमण सूत्र बालावबोध	श्री जयकीर्ति	१६६३
१५७–चतुर्मासिक व्याख्यान बाला०	श्री सूरचन्द्र	१६६४
१५८–दानशील तपभाव तरंगिनी	श्री कल्याणसागर	१६६४
१५९–लोक नालिका बालावबोध	श्री ब्रह्मर्षि (ब्रह्ममुनि)	
१६०–जीवाभिगम सूत्र बालावबोध	श्री नयविमल शि०	
१६१–छः कर्म ग्रंथ पर बालावबोध	श्री धनविजय (त०)	१७००
१६२–कर्म ग्रंथ बालावबोध	श्री हर्ष	१७००
१६३–श्रावकाराधना	श्री राजसोम	
१६४–इरियावही मिथ्यादुष्कृत स्तवन बालावबोध	श्री राजसोम	
१६५–वीर चरित्र बालावबोध	श्री विमलरत्न	१७०२
१६६–जीव विचार बालावबोध	श्री विमल कीर्ति	
१६७–नव तत्व बालावबोध	श्री विमल कीर्ति	
१६८–दण्डक बालावबोध	,, ,,	
१६९–पक्खी सूत्र बालावबोध	,, ,,	
१७०–दशवैकालिक बालावबोध	,, ,,	
१७१–प्रतिक्रमण समाचारी बालावबोध	,, ,,	
१७२–षष्टि शतक बालावबोध	,, ,,	
१७३–उपदेश माला बालावबोध	,, ,,	
१७४–प्रतिक्रमण टब्बा	,, ,,	
१७५–गुणविनय बालावबोध	श्री विमल रत्न	
१७६–जय तिहुअण बालावबोध	,, ,,	

१७७–बृहत् संघयणी बालावबोध	श्री विमलरत्न	
१७८–शत्रुञ्जय स्तवन बालावबोध	,, ,,	
१७९–नमुत्थाण बालावबोध	,, ,,	
१८०–कल्पसूत्र बालावबोध	,, ,,	
१८१–द्रव्य संग्रह बालावबोध	श्री हंसराज (ख०)	१७०९
१८२–नवतत्व बालावबोध	श्री पद्मचन्द्र (ख०)	१७०७
१८३–कल्पसूत्र स्तवन बालावबोध	श्री विद्याविलास	१७२९
१८४–ज्ञान सुखड़ी	श्री सभाचन्द (वे० ख०)	१७६७
१८५–भुवन भानु चरित्र बालावबोध	श्री तत्वहंस	१८०१
१८६–भुवन दीपक बालावबोध	श्री रत्नधीर	१८०६
१८७–पृथ्वीचन्द्र सागर चरित्र बाला०	श्री लाधाशाह (कड़वागच्छ)	१८०७
१८८–सम्यक्त्व परीक्षा बाला०	श्री विबुध विमल सूरि	१८१३
१८९–श्राद्धवृत्ति बालावबोध	श्री उत्तमविजय	१८२४
१९०–सीमधर स्तवन पर बालावबोध	श्री पद्मविजय	१८३०
१९१–कल्पसूत्र टब्बा	श्री महानन्द	१८३४
१९२–धन्य चरित्र टब्बा	श्री रामविजय (त०)	१८३५
१९३–गौतम कुलक बालावबोध	श्री पद्मविजय	१८४६
१९४–नेमिनाथ चरित्र बालावबोध	श्री खुशालविजय	१८५६
१९५–आनन्द घन चौबीसी बालावबोध	श्री ज्ञानसार	१८६६
१९६–अध्यात्म गीता पर बालावबोध	श्री अमीकुंवर ज्ञानसार	१८८२
१९७–यशोधर चरित्र बालावबोध	श्री क्षमाकल्याण	१८९३
१९८–विचारामृत संग्रह (बालावबोध)	श्री रूपविजय	१८९३
१९९–सम्यक्त्व संभव बालावबोध	श्री रूपविजय	१९००

अज्ञात-लेखक-जैन-रचनायें[1]:—

	समय
२००–शीलोपदेश माला बाला०	१४४६
२०१–षडावश्यक बालावबोध	सोलहवी शताब्दी
२०२–अजित शान्तिस्तव बालावबोध	,, ,,
२०३– ,, ,, स्तोत्र बालावबोध	,, ,,
२०४–आराधना बालावबोध	,, ,,

१—जैन-गूर्जर-कविओ के आधार पर

२०५–उपदेश माला बालावबोध ,,
२०६–उपदेश रत्न कोष बालावबोध ,,
२०७–कल्प सूत्र स्तबक ,,
२०८–कर्म ग्रंथ बालावबोध ,,
२०९–दंडक बालावबोध ,,
२१०–प्रश्नोत्तर रत्न माला बालावबोध ,,
२११–भव भावना कथा बालावबोध ,,
२१२–योग शास्त्र बालावबोध ,,
२१३– ,, ,, ,, ,,
२१४–वनस्पति सप्ततिका बालावबोध ,,
२१५–शीलोपदेश माला बालावबोध ,,
२१६–श्राद्ध विधि प्रकरण बालावबोध ,,
२१७–श्रावक प्रतिक्रमण बालावबोध ,,
२१८–सिद्धान्त विचार बालावबोध ,,
२१९–जम्बू स्वामी चरित्र ,,
२२०–पांडव चरित्र ,,
२२१–पुष्पाभ्युदय ,,

चारण-साहित्य

ऐतिहासिक रचनायें :—

	पृष्ठ
२२२–देश दर्पण ले० दयालदास	११४ अ पु
२२३–आर्याख्यान कल्पद्रुम ले० दयालदास	३७२ ,
२२४–बांकीदास री वातां ले० बांकीदास	
२२५–जोधपुर रा राठौड़ां री ख्यात	तीन प्रति
२२६–बीकानेर री ख्यात	१९२
२२७–जोधपुर री ख्यात	२४
२२८–उदयपुर री ख्यात	११६
२२९–मानसिंह जी री ख्यात	५६
२३०–तखतसिंह जी री ख्यात	३५२
२३१–फुटकर ख्यात	४८८

२६६–अमर सिंह री वात

वात-साहित्य

	लिपिकार	लिपिकाल संवत	ले० स्था०
२६७–बगलै हंसणी री (अपूर्ण)		१२८६	बीकानेर
२६८–नागोर रे ऽामले री		१६६६	
२६९–सुवा बहत्तरी	देवीदान नाइतो	१७०५	
२७०–राठौड़ अमरसिंह री		१७०६	
२७१–राणा असरा रे बिखेरी			
२७२–दहियां री		१७२२	
२७३–जहाल गहाणी री	मथेन वीर पाल	१७२२	फलवधी
२७४–वैताल पच्चीसी री	देवीदान नाइतो	१७२२	
२७५–सिंहासन बत्तीसी री	,, ,,	१७२२	
२७६–राम चरित री कथा		१७४७	
२७७–नासिकेतोपाख्यान	(अनु०) छायाणी मुरलीधर	१७५५	
२७८–प्रिथीसिंघ अर खूबां री	मथेन कुसला	१७५५	
२७९–चंद कुंवर री वात		१८००	
२८०–अकबर री			
२८१–अकबर अर वजीर टोडरमल री			
२८२–सौलवी अखै री			
२८३–खीची अचलदास री		१८२०	
२८४–अचलदास खीची री ऊमा दे परण्या जिण री			
२८५–अणहल वाड़ा पाटण री			
२८६–अणतराम सांखला री			
२८७–गोहिल अरजण हमीर री		१८२०	
२८८–राठोड़ अरड़क मल री			
२८९–पातसाह अलादीन री		१८२०	
२९०–अल्हण सी भाटी री			
२९१–राव आसथान री			
२९२–राजा उदैसिंघ री			
२९३–राणा उदैसिंह उदैपुर वसायो तिण री			
२९४–ऊदै उगभणावत री			

३६१–जाड़ेचा फूल री			
३६२–वगड़ावतां री			
३६३–राव बाल नाथ री			
३६४–चहुवाण वोग री			
३६५–भाटियां री खाप जुदा हुइ जिण री			
३६६–कछवाहे मारमल री			
३६७–राजा भीम री		१८२०	
३६८–सांई री पलक में खलक वसै तेरी		१८२०	अदूणी
३६९–सांई कर रह्यो तै री		१८२०	,,
३७०–आय ठहकी माहि में तै री		१८२०	,,
३७१–हरराज रै नैणां री		१८२०	,,
३७२–क्यूं हरै न क्यूं सेखे ते री		१८२०	,,
३७३–सैखै ने भातो आयो तै री		१८२०	अदूणी
३७४–वीरबल री		,,	,,
३७५–राजा भोज खापरै चोर री		,,	,,
३७६–कुतुबुदीन साहिजादे री		,,	,,
३७७–दम्पति विनोद		,,	,,
३७८–राव सीहै री		,,	,,
३७९–राव कान्हड़ दे री		,,	,,
३८०–वीरम जी री		,,	,,
३८१–राव रिणमल री		,,	,,
३८२–गोरै बादल री		,,	,,
३८३–मोमल री		,,	,,
३८४–महिंद्र वीसलौत री		,,	,,
३८५–गांगै वीरम दे री		,,	,।
३८६–हरदास ऊहड़ री		,,	,,
१८७–राठौड़ नरै सूजावत खीमै पोहकरण री		,,	,,
३८८–जयमल वीरमदेवौत री	(ले० मथेन कुसला)	,,	,,
३८९–सीहे मांडण री	,,	,,	,,
३९०–जेसलमेर री	,,	,,	,,
३९१–जैते हमीरोत राणक दे लखणसीओत री	,,	,,	,,
३९२–रावल लखनसेन री	,,	,,	,,
३९३–कंगरै बलोच री	,,	,,	,,
३९४–लाखै फूलाणी री	,,	,,	,,

३६५–कछवाहां री	”	”	”
३६६–राणै रतनसी राव सूरजमल री	”	”	”
३६७–नारायण मीठा खां री	”	”	”
३६८–रावत सूरजमल री	मथेन कुसला	१८२०	अदूणी
३६९–राणै खेतै री	”	”	”
४००–सोनिगरै माल दे री	”	”	”
४०१–खेतसी रतन सीओत री	”	”	”
४०२–चद्रावतां री	”	”	”
४०३–सिखरौ वहेलवै गयौ रहे तैरी	”	”	”
४०४–ऊदै ऊणावत री	”	”	”
४०५–बहलियां री	”	”	”
४०६–राव सुरताण देवड़े री	”	”	”
४०७–हाड़ा री हकीकत	”	”	”
४०८–बूंदी री वात	”	”	”
४०९–खीचियां री	”	”	”
४१०–मोहिलां री	”	”	”
४११–सातल सोम री	”	”	”
४१२–राव मंडलीक री	”	”	”
४१३–सांगण बाढेल री	”	”	”
४१४–चापै वालै री	”	”	”
४१५–राव राघव दे सोलकी री	”	”	”
४१६–सयणी री	”	”	”
४१७–देवरै नायक दे री	”	”	”
४१८–खीवै वीझै री	”	”	”
४१९–राणी चोबोली री	”	”	”
४२०–चार मूरखां री	”	”	”
४२१–सदैवछ सावलिगा री	”	”	”
४२२–लाखै फूलाणी री	”	”	”
४२३–बुधि बल कथा	”	”	”
४२४–राजा धार सोलकी री	”	”	”
४२५–दो कहाणियां	”	”	”
४२६–बगड़ावतां री	”	”	”
४२७–राजा मानधाता री	”	”	”

४६१–वीझरै अहीर री		,,	
४६२–वैरसल भीमोत वीसल महेवचै री		,,	
४६३–उमादे भटियाणी री		,,	
४६४–रिणधवल री		,,	
४६५–राव लूणकरण री		,,	
४६६–राणक दे भाटी री		,,	
४६७–तुंवरां री		,,	
४६८–राजा प्रिथीराज सूहबदे परणिया तै री		,,	
४६९–जोगराज चारण री		,,	
४७०–रावल अलीनाथ पथ मै आयो तै री		,,	
४७१–नरबद जी राणे कूमै न आंख दीवी तै री		,,	
४७२–कांधलौत खेतसी री		,,	
४७३–सोहणी री		,,	
४७४–कुंवरिये जयपाल री		,	
४७५–दीनमान रै फल री		,	
४७६–दूदै जोधावत री		,,	
४७७–पलक दरियाव री		१८२०	बीकानेर
४७८–शशि पन्ना री	मथेन रामकृष्ण		बीकानेर
४७९-राय थण भाटी री			
४८०–रायसिंह खींवावत री			
४८१–कुंवर सिंह री			
४८२–बीरबल री			
४८३–रावत सूरजमल कुंवर प्रिथीराज री			
४८४–जैतमाल सलखावत कोड़ियां री		१८२६	
४८५–राव तीड़ा चाड़ावत री		१८२६	
४८६–पीरोजसाह पातिसाह री		,	
४८७–सात बेटियां वाले राजा री	सबलसेन खवास	,,	
४८८–कुंवर रिणमल चूंडावत अखौ सोलकी मारियो तै री		,,	
४८९–कुंवर रिणमल चूंडावत अखै सांखलै रो वैर लियो ते री		,,	,,
४९०–सयणी चारणी री		,,	,,
४९१ राव हमीर लखै जाम री		,,	,,

४९२–डूंगरै वलौच री ,, ,,
४९३–सूर अर सतवादियां री ,, ,,
४९४–जैतमल सलखावत री ,, ,,
४९५–सांच बोले सो मारिया जावे तै री ,, ,,
४९६–वीजड वाजोगण री ,, ,,
४९७–राव चूडे री ,, ,,
४९८–रिणधीर चू डावत री ,, ,,
४९९–हाहुल हमीर भोले राजा भीम सू जुध करियौ तै री ,, ,,
५००–वड़ा बडी दे बडे डहरू बानर री ,, ,,
५०१–राजा भोज री पनरवीं विद्या त्रिया चरित्र ,, ,,
५०२–भोजै सोलकी री
५०३–भलीनाथ री
५०४–महमद गजनी री
५०५–राव मडलीक री
५०६–राव माना देवडा री
५०७–मांडण सी कू पावत री
५०८–मूलवै जगावत री
५०९–माधव दे सोलकी री
५१०–रामदास वैरावत री आंखडियां री
५११–रामदेव जी तुंवर जी री
५१२–कु वर रामधण री
५१३–रामधण भाटी री
५१४–झाला राय सी नै जला हर धवलौत री
५१५–झाला राय सी नै जाडैचा सायब री
५१६–रुद्रमालौ प्रासाद करायो तिण री
५१७–लालां मेवाड़ी री
५१८–रावल लूणकरण अली खान री
५१९–भाटी वरसे तिलोक सी री
५२०–सादै गुहिलोत री
५२१ रामू मूजै री
५२२–सूर सांवलै री
५२३–सूर सिह जोधपतिया री
५२४–सेतराम वरदाई सेनौत री

शुद्धि-पत्र

(संशोधक—अगरचन्द नाहटा)

***

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
१ — १८	कुकीव बत्तीसी	कुकवि बत्तीसी
१ — २८	मिलया	मिलिया
१ — २९	सस्कृति हवे कपट सव	ससकृति ह् वै कपट सब
१५ — २२	अज्ञात लेखक	पद्मसुन्दर
१५ — २३	उपासक दशाक	उपासक दशाग
१७ — २४	——	बालाव. जितविमल
१८ — ६	आर्सचन्द्र	आसचन्द्र
१८ — ७	महावीर चरित्र, जम्बू-स्वामी चरित्र	शातिनाथ चरित्र, पार्श्वनाथ चरित्र
१८ — ८	सुशील-विजय	खुशाल विजय
१९ — ६	जैचन्द्रसूरि	पार्श्वचन्द्रसूरि
२३ — ५	घाटी राह	?
२४ — १५	घाव	धाव
२४ — २१	गणाते, आरावत	ठाणा तै अरात
२४ — २२	देऊ	देहू
२४ — २५	जवाहर	षवाहर के
३२ — १२, २८	वृत्त रत्नाकर	वर्ण रत्नाकर
३५ — २६	जोइती	जोइसी
३५ — २८	मई	मइ
३५ — २८	वचिया	वचिया सेहिया
३६ — १५	कीघर	कीर्धं
३६ — १९	मोसेउ, कुणहसउ	मोसष्ठ, कुणहइसउ
३६ — १९	मेडि	मेडि
३६ — २०	वृत्ति, वाही	व्रति, माही
३७ — ४	आर्यारियाणम्	आयरियाणम्
३७ — ६	चरित्राचारु	चारित्राचारु
३७ — १६	भीस	त्रीस

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
३७ —	१७	जियालइपरिणम	जिणालइ पडिम
३७ —	२६	विघ्रु	विघु
३८ —	१	सोकलउ	मोकलउ
३८ —	४	कूरसी	कुमरसीह
३९ —	७, ८	तीहइ	तीयहि
३९ —	९	भीजा	त्रीजा
३९ —	१०	दघि	दधि
३९ —	१०	तिपि	तिणि
४० —	१९	वचनिक	वचनिका
४० —	२८	सोमसु द	सोमसु दर
४१ —	२१	धुरदर	धुरधर
४१ —	२६	दुलीचन्द	दलीचद
४१ —	२८	वालावबोब	बालावबोध
४१ —	२८	मासि	पासि
४१ —	२९	विद्याममाणयत्	विद्यामभाणयत्
४१ —	३०	कुशलाखौ	कुशलाख्यौ
४२ —	२८	वालावबोक्ष	बालावबोध
४५ —	१३	चद्रँगुप्त	चद्रगुप्त
४५ —	१५	नदराव	नदराय
—	१६	तक्षणे	लक्षणे
—	२२	जाणीर	जाणीइ
—	२४	तडि, चार	तेडि चोर
—	२५	अउलउ	पटउलउ
—	२६	स्थान के	स्थानके
—	२६	चारजोवउ	चोर जोतउ
—	२७	जगाविउ	जगाडिउ
४६ —	३	शिष्य	आज्ञानुवर्ती
४७ —	१२	स्यामणि	स्याभणि
४७ —	१८	उपाध्याय	आचार्य
४८ —	१०	न थि	नथि
—	१४	माहइ	मोहइ
—	२१, २२	उभयनदी, शुभरत्न	?
—	२५, २६	लीमडी	लीवडी

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
४६ — १६	खीमासर	खीमसर
५३ — १८	खीमासर	खीमसर
— २०	गुला गलइ	गुलगलइ
— २१	दाघा	दाघा
— २३	विरुत्तणा	विरु तणा
५४ — २	विस्तारिउ	विस्तरिउ
— २	तणउ	तणउ दुकाल, नाठौ
— २	जाणिइ	जीणिइ
— ३	मेघ	मेह
— ५	विरीत	विपरीत
— ५	परिपास	परियास
— ७	ऊपर	ऊपरि
— ७	वेल	वेला
— १०	तोक	लोक
— १०	वइटा	वइठा
— १३	वेडल	बेउल
— १३	भ्रमर	भ्रमर कुल
— १४	पाडर	पाडल
— १४	निर्झर	निर्मल
— १५	सेवभी	सेवत्री
५५ — ७	पद्यप	मद्यप
५६ — १२	सइ	हइ
— १४	भल भलेरा	भला भलेरा
— १७	सावरि	सातरि
५७ — ५	अजवपाल	अजहपाल
— ५	धारउ	धारु
— ६	छाया सावइ	छयाणवइ
— १३	लउथडै	लडथडै
— १७	बीलाख	वीलख
— १८	अछरग	उछरंग
— २२	सुतौ	सु तौ
५६ — १८	कीघौ	कीधौ

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
	— १९	किम	दिन
	— २०	घूहडिया	घूहडिया
	— २१	योधराणा	योधराया
	— २३	गाइ	जाइ
	— २५	अचरज	आचारिज
	— २५	उरही	उरहौ
	— २५	कइ	नइ
	— २६	आरित	आरति
६०	— १६	देवतणी	देव तणी
	— १७	आपाय	अपाय
	— १७	जेह तउ	जेहतउ
	— १७	मय	भयु
	— १९, २०	इत्यार्थे	इत्यर्थे
	— २७	भाग २	भाग ३
६१	— ५	लभाउइ	लभाडइ
	— १३	दवदत्ति	देवदत्ति
	— २०	राजकीर्ति मिश्र	श्रीधर
	— २१	श्रीधर	राजकीर्ति
७०	— ७	वसुभूति	इन्द्रभूति
	— १३	नाग	ना
	— १४	तडोलाइ	नडोलाइ
७७	— ७	विरवणात्मक	विवरणात्मक
७८	— ९	घणी	घणी
७९	— १६	पनरग	मनरग
८३	— ६	दया व्यवस्था	दंड - व्यवस्था
८५	— १०	देवणा	देवडा
	— १६	राधणिया	रा धणिया
	— २३	काघल	काधल
	— २७	रतनसी औत	रतनसीओत
	— २९	पोह करणे	पोहकरणे
८६	— १०	स्याम	क्याम
९१	— २	घीगड	धीगड

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
९२ — ११	सेणोर	साणोर
९८ — २४	राठौणा	राठौडा
१०० — १५	वागापत	वागायत
— १७	फोसे	कोसे
१०३ — ८	गगासिंह	?
१०५ — २	आचार्यो	मुनियो
१०६ — १, २	कल्पसूत्र वाला० कल्पसूत्र टब्वा	दोनो एक हैं
१०६ — ४	खरतरगच्छ	खरतरगच्छ के
१०७ — १५, १९	दडक, वालाव	दोनो एक ही हैं
१०८ — ८	अष्टलक्षि	अष्टलक्षी
१०९ — २४	विमलरत्न सूरि	विमलरत्न
११० — ७	कल्पसूत्र स्तवन	कल्पसूत्र वालाववोध
१११ — १३	समोसरनी	समोसरणनी
११२ — २	१८७२	१८५३
११३ — २२	दोनो के लेखको के नाम अज्ञात हैं	पहले के लेखक का नाम ज्ञानसार है
११४ — १	रसगृत्थी	रसगृद्धी
— ७	माणे रषे	जाणे रखे
— ८	नगी	नथी
११५ — २०	जयसिंह	जटासिंह
११५ — २८	जैन साहित्यिक लेख	लोक कथा सवन्धी जैन साहित्य
११६ — ६	हरिसेन सूरि	हरिषेण
— ८	कथा सग्रह	कथाकोश
— १२	भर्तेश्वरवृति वाहुवलिवृत्ति	भरतेश्वर वाहुवलिवृत्ति
११७ — २१	पारस्परिक	पारपरिक
११८ — २२	द्दार्ष्टान्तिक	द्राष्टान्तिक
१२० — १	पार्श्वनाथ या अष्ट	पार्श्वनाथ अष्ट
१२० — २५	न० ३०८१	न० ३०२४
१२३ — २८	को	छो
१३० — ७	रावल रतनसिंघ	?
— ९	मीढा	मीठा
— १९	मान्ला	मोटला

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
१३०	२६	रामदे	रामदेव
	१६	श्राय	श्राप
	१८	मरिया	मारिया
	१६	तसू	तैसूं
	१६	वुहा	तो वुहा
१३२	३	कावल	काचल
१३३	८	सारद	सरद
	१०	वचो	वच्चो
	११	प्रभता	प्रभात
	१३	खेखणो	पेखणो
१३४	१२	मत्री	पीहर
१३६	१६	करतवा	कर तवा
१३७	१६	के सर	केसर
१३७	१६	काँमइ	काई
	२१	वार	तार
	२२	अमृतरा	मृग रा
	२३	मुहा	भुहा
	२४	दात	दात
	२५	हालीती	हालती
१३८	१५	नामक	नायक
१३६	१०	पिंडल	पिंडत
१४०	६	खतयुगी	सतयुगी
१४०	१६	पारवती	पाख्ती
१४१	११, १४	दीपालदे	देपालदे
१४२	४	कुंभटगढ	कुंभटगढ (समियाणा)
१४२	२४	श्रोड़वीरी	श्रोडणीरी
१४३	२८	कन्हड़दे	कान्हडदे
१४४	६	जयमाल	जगमाल
१४५	१	लीघा	लीधा
१४५	३	ज्ञाडे जी	जाडेची
	६	घवला	धवला
	७	घावेला	धावेला
	१७	फूलमली	फूलमती

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
१४५ — १६	वीरमाण	वीरभाण
१४७ — ८	जौघपुर	जोधपुर
१४८ — ४	घठना	घटना
— २२	घर हात	करि घाति
— २८	सु	श्री
— २८	कहृता	कहृता
१४६ — ७	आसाण	अवसाण
— ८	चाचवीजै	साचवीजै
— ६	लीजै	लीजै न दीजै
— १०	खाट	खडा
— १०	झारझडि	झडाझडि
१५० — १३	घटता	धढता
— १६	भरना बोलते	भरणा खोलते
१५१ — ३	पढपती	गढपती
— ६	पाचक	वाचक
— १५	रूपवतुकारूप	रूपवतु का रूप
१५३ — २५	बजाव	बजाज
१५४ — ३	३६ विधि	३६ विधि वाजा
१५५ — १५	आखेत	आखेट
१५६ — २	पारवती	पाखती
— ३	वील	नील
— ५	काटरी	कोटरी
— १६	भण	त्रण
— २०	घमल	धमल
— २४	पछ	पछि
— २५	ऊपाडिआ	ऊपडिआ
१५७ — ३	टीपा	टीया
— ७	पर्वत	पवन
— १३	झिमि	झिलि
— १७	गाइ जै	गाइजै
— १८	खेली जै	खेलीजै
— १८	नाची जै	नाचीजै

पृष्ठ पक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
१६२ — २५	विहारन	विहार न
१६३ — ११	माद्रवे	भाद्रवे
— १८	श्रामरण	श्राभरण
— १८	माजती	भाजती
— १८	चोडती	त्रोडती
— १९	कचुड	कचुउ
— २३	खाडेसरा	साडेसरा
१६४ — ३	भूभइ	मूभइ
— ४	सताप	सतापइ
१६५ — २	को	के
१६७ — १०	का	के
१६८ — २	प्रताप	श्रमृत
१७० — ७	प्रतिष्ठा	प्रस्थान
— १६	सहारा	सहरा
१७१ — १२	ऊपर	ऊपर सरो
— १४	भी	को
— १४	नरेशो को	नरेश सिफारिशी
— १९	राजकनै	राज कनै
— २६	लिखि त	लिखित
— २६	जाणीवी	जाणिवी
— २७	लिपज्यो	लिखज्यो
— २८	मनसातायामै	मन साता पामै
१७२ — १	चीता रा	चीतारा
— ४	दे जो	देजो
— ५	रापे जो	राखेजो
— ६	होरहर जी अस कलक रै छै	?
१७८ — १४	घामण	धामण
१७९ — ६	भगवान	भगवती
— ६	जसपुरा	जसरापुरा
— २९	विचार	विवाह
१८१ — ८	मुद्रणाधीन	प्रकाशित
१८३ — १	वुभावो	वुभग्यो
१८४ — १०	भारियोडी	भरियोडी

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
१८४	— १३	पड	पग
	— १५	मरण	करण
१८५	— १	थापडा	वापडा
१८६	— २०	कोई घणी	कोई बखत घणी
१८७	— २४	पूव रो	पून रो
	— २४	सावडी	तावडी
	— २५	तप्ता	तप्या
१८८	— १	वलकोनी	बल कोनी
१८९	— ५	इस मै	इण मे
	— २२	धापण	धामण
१९१	— ३	अक	पत्र
१९०,९१		राजस्थानी-राजस्थानी त्रैमासिक	दोनो एक ही हैं
१९१	— २३	मे	मे स्थापित
१९५	— ७	वंचिया	वचिया सेहिया
१९६	— ६	वल्गि	वल्गि
	— १६	हीउतइ	हीडतइ
	— १९	कुप	कूप
	— २१	ऊजसु	ऊजमु
१९७	— १५	वधि	वधि
	— १७	मगनु	मडनु
२१४	— १६	योगप्रधान	युगप्रधान
	— २०	युधप्रधान	युगप्रधान
२१५	— ७	क्रोसे	क्राउभे
२१६	— २७	पष्ठिशतक	पष्टिशतक
२१७	— १२	पासचन्द्र	आसचन्द्र
	— १५	(वृत०)	(वृ० त०)
२१८	— १५	तु दल विहारी	तदुल वैयालिय, न० ८७ और ९५ एक हैं
	— २२	पार्श्चन्द्र	पार्श्वचन्द्र
	— २३	सम्यकत्व	सम्यक्त्वस्तव
२१९	— १	जयविलास	नयविलास
	— २३	(खाली स्थान)	उदयसागर
	— ३०	कल्याणसार	कल्याणसाह

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
२२० — १६	नयविमल	विनयविमल
-- ३२	गुणविमल, विमलरत्न	भक्तामर, गुणविनय
२२१ -- १	विमलरत्न	गुणविनय
— ३	नमुत्थाण	नमुत्थुणं
— ६	स० १७०७	स० १७६६
-- १४	श्राद्धवृत्ति	श्राद्धविधिवृत्ति
-- १७	१८३५	१८३३
-- २२	१८६३	१८५४
— २२	यशोधर	अम्बड
२२२ — १७	पुष्पाभ्युदय	पुण्याभ्युदय
— २०	पृष्ठ	पत्र
२२४ -- ५	१२८६	१८२६
— ७	१७०५	१७५२
— २२	सौलवी अख री	?
-- २५	अणतराम	अणतराय
-- ३३	उगभणावत	उगणावत
२२५ -- ५	सोढा कंवलसिघ	कु वरसी साखलै
— ६	कथल	काघल
— ९	साडलै	साखलै
-- १०	थाडवी	धाडवी
-- २५	वाले चापे	वालै चापै
-- २६	सीयल चीपै	सीथल चापै
२२६ — १७	नरासिंघ सीघल	नरसिंह सीधल
-- २२	मीढा	मीठा
-- ३०	हादुल	हाहुल
२२७ -- १	जाडचा	जाडेचा
— ४	वोग	?
-- ६	मारमल	भारमल
— ३३	कगरै	कु गरै
२२८ — १०	ऊणावत	ऊगणावत
— ११	वहलिया	वहलिमा
२२९ -- ७	आकूलखाँ	?